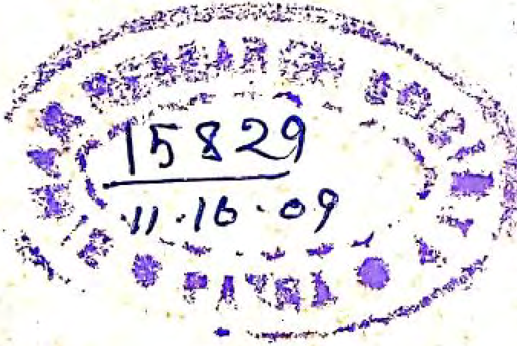
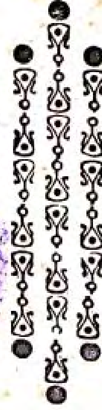
मैथिली साहित्यक आदिकाल

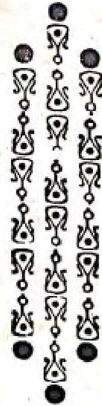




लेखक

राजेश्वर झा

बिहार रिसर्च सोसाइटी, पटना



प्रकाशक

श्री अमरनाथ झा

रसुआर (सहरसा)

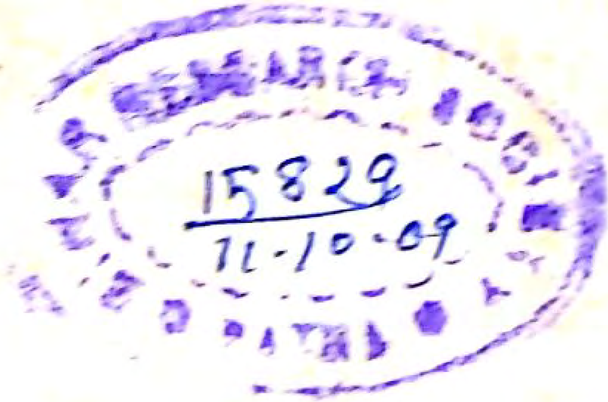
मूल्य : सात टाका पचास पैसा

मुद्रक
श्री कामेश्वर प्रसाद
कालिका प्रेस
आर्यकुमार रोड, पटना-४

मैथिली साहित्यक आदिकाल



पं० श्री लक्ष्मी कान्त झा



उपहार

पटना उच्चन्यायालयक भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश
एवं बिहार रिसर्च सोसाइटीक
उप-संरक्षक पं० श्री लक्ष्मी
कान्त झाजी कें
सादर भेंट !

—लेखक

प्राक्कथन

सर्वेषांतु सनामानि कर्माणि च पृथक् पृथक्।
वेद शब्देभ्य एवादौ पृथक् संस्थांश्च निर्ममे । १।२१
तपो वाचं रतिं चैव कामं च क्रोधमेव च ।
सृष्टिं ससर्ज चैवेमां स्रष्टुमिच्छन्निमा प्रजाः । १।२५
—मनुस्मृति

सृष्टिक आरम्भे मे ब्रह्मा भिन्न-भिन्न कर्म एवं व्यवस्थाक संग पदार्थमात्रक नामकरण वेदवाणीक आधार पर कएलैन्ह। प्रजाक उत्पन्नार्थ ओ तप, वाणी, रति, काम एवं क्रोध केँ निर्माण कएलैन्ह। वेदक एहि सूक्त—"यथेमां वाचं कल्याणी-मावादानि जनेभ्यः" जे ईश्वर मनुष्य केँ कल्याणमयी वाणी देलथिन्ह— सँ उपर्युक्त प्रसंगक पुष्टि होइछ।

भाषाक प्रसंग मे मैक्समूलर[1] महोदयक विचार अछि जे भिन्न-भिन्न भाषा परिवारक जे ४०० वा ५०० धातु ओकर मूलतत्व रूप मे अवशिष्ट अछि ओ ने तँ मनोरागव्यञ्जनक ध्वनि थिक वा ने अनुकरणात्मक शब्दे। ओकरा वर्णनात्मक शब्दक साँच कहल जा सकैछ। प्रो० पाटक[2] निम्नलिखित विचार एहि प्रसंग मे अछि—

"भाषाक वास्तविक स्वरूप मे कोनो टा परिवर्त्तन नहि भए ओकर वाह्य स्वरूप मे परिवर्त्तन होइछ। लोक एक प्रकारेँ ओहि शब्दे केँ बजैत अछि जे सर्गारम्भ मे मनुष्यक मुँह सँ निस्सृत भेल। अतएव मानवक वाणीए भाषाक जड़ि थिक जे क्रमशः पल्लवित एवं पुष्पित भए बिशाल वृक्षक रूप मे परिणत भए जाइछ।"

सृष्टिक आदि मे जेना मानव मे कोनो भेद-भाव नहि छल तहिना ओकर भाषा मे सेहो कोनहुटा भेद-भाव नहि छलैक तथा जेना-जेना देशकालक अनुसार मनुष्य मे वर्गीकरण भेल तेना-तेना भाषाहु मे भेद-भाव एवं शाखा-उपशाखा होमय लागल जकर विकास पश्चात् भौगोलिक आधार पर भेल। अतएव समग्र भाषाक मूल-स्रोत जे प्रारम्भ मे एके छल कालक्रमेँ देश एवं प्रान्तक नाम पर भिन्न-भिन्न नामे प्रख्यात भेल।

आधुनिक बिहारक भूभाग गंगाक दक्षिण मे करूष, मगध, तथा अंग नामे विभक्त भए कीकट नामे प्रख्यात छल तथा गंगाक उत्तर मे मलद, वैशाली, मिथिला एवं पुण्ड्र नामक खण्ड अवस्थित छल। एहि मे सँ अधिकांश कौखन तँ मगधक प्रशासनक अन्दर छल और कौखन ओकर अपन पृथक सत्ता रहैत छलैक। मगध पर

१ मैक्समूलर, लेक्चर्स आन दी साइन्स आफ लैंग्वेज, पृ ४३९
२ हरिऔध, हिन्दी भाषा और साहित्यक विकास, पृ० २

आसुरीवंशक प्रधानता छल जे कीकट, मागध, असुर, नाग एवं व्रात्य आदि नामे प्रख्यात छल।

मगधक आदिम भाषा एवं संस्कृति प्राग्वैदिक छल जे ओकर राजनैतिक प्रभावक कारणे समस्त उत्तर भारत मे प्रसारित छल। ओकरा अपन गणतन्त्रात्मक शासन प्रणाली, उन्नत साहित्य, विलक्षण चित्रकला एवं भवन निर्माण कला तथा अद्भुत युद्ध कला छलैक। फलतः आर्यक जे दल विदेघमाधवक नेतृत्व मे सप्तसिंघु प्रान्त सँ सदानीरा केँ पार कए विदेह राज्यक स्थापना कएल से मगध दिश नहि जाए उत्तर दिश अग्रसर भेल।

आर्यक ओहि दल मे ई तँ निर्विवाद थिक जे लाख-करोड़ व्यक्ति नहि भए पाँच-दस हजार होएत। तदर्थ आर्यक विजयक उपरान्त ओहि क्षेत्रक तत्कालीन साहित्य एवं संस्कृति जे मूलतः मगधक साहित्य एवं संस्कृति सँ प्रभावित छल से की ओकर पराजयक संगेँ अन्तर्धान भए गेल वा आर्यक संस्कृत एवं साहित्यक संग मिश्रित भए अपन अस्तित्व केँ जीवित राखलक ?

मिथिलाक जनजातिक भाषाक शब्द-विन्यास एवं उच्चारण आदि सँ प्रतीत होइछ जे एहि मे संस्कृतक तत्सम एवं तद्भव शब्दक अतिरिक्त एहेन शब्द सभ अछि जकरा संस्कृत सँ कोनहुटा सम्बन्ध नहि भए विशुद्ध लौकिक थिक। अतएव आधुनिक मैथिलीक प्रारूपक आधार अपभ्रंश वा अवहट्ठ थिक। एहि पर मिथिलाक प्राचीन जनजातिक प्रधानता पाओल जाइछ जे साहित्यक विविध रूप एवं छंद मात्रक ज्ञाता सेहो छलाह।

ओहि आदि मानवक छन्दशास्त्रक ज्ञानक प्रसंग मे 'पिंगल' शब्द बड़ महत्वक अछि। डा० सु० कु० चटर्जी पिंगल केँ पश्चिमी प्रान्तक अवहट्ठक अपर रूप बुझैत छथि[3] जे उचित नहि प्रतीत होइछ। पंचतंत्रक[4]—**"छंदोज्ञान निधिं जघान मकरो वेलातटे पिंगलं"** वाक्य पिंगलक प्रसंग मे उल्लेख करैत अछि। आप्टे[5] पिंगल शब्दक अर्थ एक प्रकारक नाग, एक प्रख्यात मुनिक नाम, संस्कृत छन्दक जनक तथा पिंगल-च्छन्दशास्त्र नामक ग्रन्थ कएलैन्ह अछि। प्राकृत पैङ्गलक भूमिका मे श्री चन्द्रमोहन घोष[6] पिंगल के एक मुनि, आचार्य तथा एक नागक अर्थ कएलैन्ह अछि। भिखारीदास षटभाषा मे नाग भाषाक नाम लैत छथि—

व्रज मागधी मिले अमर नाग जवन भाखानि।
सहज पारसीहू मिले खट विधि कहत बखानि॥

—काव्य निर्णय, १।१५

नाग भाषा सँ सम्भवतः भिखारी दासक तात्पर्य पिंगल सँ थिक। एक दिश तँ पिंगल केँ नाग भाषा कहल जाइछ तथा दोसर दिश मिर्जा खाँ अपन व्रजभाषा

३ ओरिजिन एंड डेवेलपमेंट आफ बेंगाली लैंग्वेज, पृ० ११४
४ पंचतंत्र, बम्बई सं०, २, ३३
५ दी प्रैक्टीकल स०, ई०, डि०, पृ० ६१६
६ प्राकृत पैङ्गलं, बि० ईन्डिका सं०, भूमिका पृ० २

व्याकरण मे प्राकृत अर्थात् अपभ्रंश कें नागवाणी वा पातालवाणी कहैत छथि।[७] अतएव पिंगल सँ तात्पर्य छन्दशास्त्र सँ तथा अपभ्रंश वा अवहट्ठ सँ तात्पर्य ओहि युगक लोक भाषा सँ अछि।

मिथिलाक लोक जीवन सँ पिंगल बड़ घनिष्ट रूप मे सम्बद्ध अछि। जोड़-जोड़ सँ पढ़निहार बालक 'पिंगलपढ़बाक' अर्थ मे उपहासित होइत अछि तथा जे बालक अधिक ठेसगर रहैछ ओकरा "कठपिंगलक" उपाधि सँ विभूषित कएल जाइछ।

उपर्युक्त विवरण सँ प्रतीत होइछ जे यद्यपि मैथिलीक अस्तित्त्व बड़ प्राचीन अछि किन्तु दुर्भाग्यक बात थिक जे अनुसंधानक अभाव मे एहि साहित्यक आदि लेखकक रूप मे ज्योतिरीश्वर कें तथा आदि ग्रन्थक रूप मे हुनकर कृति वर्णरत्नाकर कें मानल जाइछ जे चौदहम शताब्दीक थिक।

वर्णरत्नाकरक भाषा एवं ओकर विकसित शैली आदिक आधार पर एवं-क्रमक निर्णय ओतबेक भ्रामक थिक जतेक एक अस्सी वर्षक बूढ़ व्यक्ति कें माताक गर्भ सँ निस्सृत शिशु बुझब होएत। सभ्यताक आरम्भे सँ मैथिली कें अपन पृथक अस्तित्त्व, स्वतंत्र लिपि एवं समृद्ध साहित्य अछि जकर सम्बन्ध मिथिलाक लोक जीवन सँ छैक।

एम्हर किछु दिन सँ शब्द-उच्चारण एवं स्थान विशेषक नाम पर भाषाक सृजनक प्रणाली मे प्रगति भए रहल अछि जकरा ने तँ अपन लिपि छैक वा ने साहित्ये। मात्र प्राचीन स्थानीय नाम एहि मे आधार स्वरूप पाओल जाइछ जेना अंग सँ अंगिका तथा वज्जि सँ वज्जिका। जँ स्थानीय नामक आधार पर एवंक्रमें पृथक-पृथक भाषाक सृजनात्मक प्रवृत्ति रहल तँ ओ दिन दूर नहि जखन शब्द-उच्चारण कें आधार मानि प्रत्येक गाम एवं वर्ग कें अपन अपन पृथक भाषा होएत तथा ओहो अंगिका एवं वज्जिका सन दरभंगा सँ दरभंगिया, सुपौल सँ सुपौली, मधेपुरा सँ मधेपुरिया, यादव सँ यादवी, धानुक सँ धानुकी तथा ब्राह्मण सँ ब्राह्मणी आदि नामे पृथक पृथक भाषा कहाओत।

भाषा तँ ओ थिक जकरा अपन स्वतंत्र लिपि एवं समृद्ध साहित्यक इतिहास रहौक। नदीक प्रवाह सन भाषाक प्रवाहो बदलैत रहैछ तथा प्रत्येक कोस परहक बोली मे भिन्नता पाओल जाइछ। एकर अतिरिक्त शब्दक उच्चारण तँ व्यक्तिक योग्यतानुसार होइछ जेना गाड़ी सँ गड़ी, मिलिट्री मँ मलेटरी, मिनिस्टर सँ मनिस्टर, डाक्टर सँ डाकदर एवं स्टेसन सँ टीसन आदि शब्दक व्यवहार जे गामीण जनता सँ होइछ सएह ओहि क्षेत्रक शिक्षितो बजैत अछि। तँ की ओकरा एक पृथक शब्द एवं ओहि भाषा कें एक पृथक स्वतंत्र भाषा बुझल जाए ?

भाषाक प्रवाह कें सुरक्षित राखबे तँ ओकरा प्रति श्रद्धा एवं भक्ति थिक जे साहित्यकारक कर्त्तव्य होइछ। जँ अशुद्धि एवं त्रुटि पर ध्यान नहि दए भाषा बजनिहारक अनुसार परिवर्त्तन सतत् कएल जाए तँ ओहि भाषा कें साहित्य होएब असम्भव थिक। अतएव भाषाक स्वरूप, विकास, इतिहास-सम्बन्ध एवं वर्त्तमान कें

७ ना० प्र० पत्रिका, वर्ष ५८ अंक ४, पृ० ४५१

जानबाक हेतु ओकर बनावट, व्याकरण, स्थान, युग एवं लोकक अध्ययन अनिवार्य होइछ। मैथिलीक प्राचीन सामग्रीक आधार पर ओकर स्वरूप, ध्वनि-तत्त्व, रूप-तत्त्व एवं अन्तर्गत तथा सीमान्त बोलीक विविध अध्ययनक पश्चात् निष्कर्ष प्राप्त होइछ जे मैथिलीक समृद्ध साहित्य सन कोनहु क्षेत्रीय भाषाक साहित्य एतेक उन्नतशील नहि अछि। मैथिलीक साहित्य सर्वाङ्गपुर्ण अछि। मैथिली लिपि मे लिखल ग्रन्थ लाखक संख्या मे संसारक पुस्तकालय मे विद्यमान अछि।

उपर्युक्त विषय के दृष्टि मे राखि 'मैथिली साहित्यक आदिकाल' लिखल अछि। एहि मे प्रतिपादित विषय विद्यापतिक पूर्वे तक अछि। विद्यापति एवं विद्यापतिक पश्चात्क मैथिली साहित्य मे तँ बड़ काज भेल किन्तु जे साहित्य एतेक प्रौढ़ छल तथा जाहि भाषा मे ज्योतिरीश्वर, उमापति एवं विद्यापतिसन पैघ-पैघ साहित्यकार अपन समृद्धशाली वाणी केँ समाविष्ट कएलैन्ह ओकर हुनका लोकनिक पूर्व कोन रूप छल ओहि पर प्रकाश देल अछि। एहि मे हमरा कतए धरि सफलता भेटल अछि ई तँ विद्वद्गणक निर्णय पर निर्भर करैछ किन्तु एहि मे प्रतिपादित बिषय-दोष, भाषाक दोष, एवं आन-आन त्रुटिक हेतु हम मिथिला एवं मैथिलीक विद्वान लोकनि सँ क्षमा याचना करैत छी तथा हुनका लोकनि सँ हमर अनुनय अछि जे मात्र मैथिलीक प्रति एहि पोथी केँ हमर उद्गार बुझि जँ एहि मे कोनहुटा तथ्य हो तँ ओकरा अंगिकार करथि अन्यथा मैथिलीक एक पोथी बुझि हमरा क्षमा करथि।

हम श्री गोपी रमण चौधरी, एम० ए० एवं डा० इन्द्रकान्त झा, एम० ए०, पी० एच० डी०क प्रति अपन कृतज्ञता ज्ञापन करए चाहैत छी जनिका लोकनिक सहयोगक बिना ई पोथी पुस्तकाकार मे प्रस्तुत नहि भए सकैत छल।

पटना, ३० जून, १९६८ ई०

— राजेश्वर झा

सक्कय वाणी वहुअन भावइ,
पाउँ अरस को मम्मन पावइ।
देसिल वअना सब जन मिट्ठा,
तँ तैसन जम्पओ अवहट्ठा॥

—कीर्त्तिलता

मैथिली भाषा मुख्यतः उत्तर पूर्व बिहारक मातृभाषा थिक। बिहारक दरभंगा, मुजफ्फरपुर, मुंगेर, भागलपुर, सहरसा एवं पूर्णिया जिला और नेपालक महोत्तरी, सरलाही, रौताहत, सप्तरी तथा मोरंग मे ई भाषा लगभग ३०,००० वर्गमील मे व्याप्त अछि।

आन-आन स्वतन्त्र साहित्यिक भाषा सदृश मैथिलियो केँ अपन समृद्ध साहित्य एवं प्राचीन लिपि अछि जकर विकास प्रारम्भिक लोक भाषा एवं लिपि सँ भेल। मैथिलीक सभ सँ प्राचीन स्वरूप वाल्मीकि रामायण, पुराण, ललितविस्तर, वाचस्पति मिश्रक भामती एवं सर्वानन्दक अमरकोष-टीका आदि ग्रन्थ मध्य पाओल जाइछ।

सुललित भाषा, शृंगारिक भाव एवं प्राकृतिक रम्यता सँ परिपूर्ण साहित्यक अतिरिक्त मिथिलाक लोक जीवन केँ देशी राग-रागिनी सँ युक्त मधुर संगीतक एक विशेष परम्परा पाओल जाइछ जे अन्यत्र दुर्लभ अछि।

अतएव उर्पयुक्त विषय केँ दृष्टि मे राखि मैथिली साहित्यक आदि-कालक इतिहास केँ तीन भाग मे विभक्त कएल जा सकैछ—(१) उद्‌भव एवं अविकसित साहित्य (१५०० ई० पू०–८०० ई०); (२) प्रारम्भिक रूप एवं विकास (८००–१२०० ई०) तथा (३) समृद्ध साहित्य (१२००–१४०० ई०)।

उद्भव एवं अविकासित साहित्य

भाषा तथा विचारक बड़ घनिष्ठ सम्बन्ध अछि। मानव मस्तिष्क मे

जखनहि विचारक शृंखला उठल तखनहि भाषाक प्रादुर्भाव भेल। पाणिनिक—

'आत्मा बुद्ध्या समेत्यार्थान् मनो युङ्क्ते विवक्षया।
मनः कायाग्निमाहन्ति स प्रेरयति मारुतम्॥

—पाणिनीय शिक्षा, श्लोक ६

एवंक्रमक कथनक तात्पर्य थिक जे आत्मा बुद्धिक द्वारा अर्थ केँ बुझि मोन केँ बाजबाक उत्कण्ठा सँ प्रेरित करैछ। मोन शरीरक अग्नि-शक्ति पर जोड़ दैछ तथा ओ शक्ति पवन केँ प्रेरित करैछ जाहि सँ शब्द वाक्क उत्पत्ति होइछ।

पाणिनिक एहि कथन सँ प्रतीत होइछ जे मनुष्यक विकासक संगहि ओकर वाणीक विकास सेहो भेलैक। अतएव जहिना-जहिना भिन्न-भिन्न स्थान पर मनुष्यक विकास भेल तहिना-तहिना मनुष्यक भाषाक विकास भेलैक। अतः मूल भाषा एक वा अनेक रूप मे जेना जतए रहल हो भौगोलिक परिस्थितिक आधार पर ओकर विकास ओ विस्तार भेल। कालक्रमेँ विकास ओ विस्तार करैत एक सँ अनेक भाषा बनल; एहि अनेकहु मे और अनेक शाखा, प्रशाखा, परिवार, उप-परिवार एवं भाषा, उपभाषा बनल जे मिलान कएला पर पूर्णतः भिन्न पाओल जाइछ।

प्राचीन भारतीय आर्यभाषाक स्वरूपक दिग्दर्शन ऋग्वेदक प्राचीन ऋचा मध्य पाओल जाइछ। ऋग्वेदक एकता सूक्तक एहि मन्त्र—

'समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।
समान मस्तु वो मनो यथा वः सुसहासतिः'॥

में जाहि एक अध्यवसाय, एक हृदय, एक मोन एवं पूर्ण संघटनक कामना कएल गेल अछि ओहि सँ ऋग्वेद कालक लौकिक संस्कृति एवं साहित्यक स्पष्ट संकेत उपलब्ध होइछ। अतः भारतीय साहित्यक उषःकाल प्रकृतिक कोमल एवं रौद्र दुहु प्रकारक संगति सँ आरम्भ भेल। आर्य लोकनि यज्ञ-पारायण, संस्कृतिक प्रसार, प्राकृतिक शक्तिक पूजा, देवत्व विषयक भावनाक अभिव्यञ्जन एवं बौद्धिक चिन्तन सँ सम्बद्ध विपुल साहित्यक निर्माण कएलैन्ह जकर स्पष्ट संकेत दसम मण्डलक १५१ सूक्तक—

'श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धयाहूयते हविः।
श्रद्धां भगस्य मूर्द्धनि वचसा वेदयामसि'॥

मन्त्र मे श्रद्धाक द्वारा अग्नि प्रज्वलित एवं श्रद्धे सँ यज्ञ सामग्रीक आहुति देवाक प्रसंग मे वर्णित अछि।

एहि साहित्य मे जाहि छान्दस वा वैदिक भाषाक रूप उपलब्ध अछि सएह प्राचीन भारतीय आर्य भाषा थिक। वैदिक युगक एहि भाषा मध्य कतिपय वैभाषिक प्रवृत्तिक संकेत भेटैत अछि जे तत्कालीन एवं तत्प्रदेशक लोक भाषा थिक। जहाँ धरि शब्दक सम्बन्ध अछि ऋग्वेद मे कतिपय शब्द दोसर अर्थ मे प्रयुक्त होइछ। उदाहरणार्थ 'कारू' शब्दक अर्थ कार्य-कर्त्ताक अर्थ मे नहि भए कविक अर्थ मे प्रयुक्त भेल अछि।

ऋक्‌क अर्थ होइछ पद्य। सम्पूर्ण ऋग्वेद पद्य-बद्ध अछि। ऋग्वेद[1] मे गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप, बृहती, विराट, त्रिष्टुप, जगती एहि सात छन्दक वर्णन अछि जे मूल छन्द थिक। गीत मे गायत्री छन्दक प्रयोग सभ सँ अधिक होइत छल। एहि छन्दहि सँ वैदिक भाषा केँ छान्दस कहल जाइछ।

छान्दस भाषा जाहि मे लोक भाषाक स्रोत मिश्रित छल, परिमार्जित एवं परिष्कृत भए साहित्यिक संस्कृत रूप केँ प्राप्त कए ततेक ने गूढ़ भए गेल जे ओकर अर्थ केँ बुझब कठिन होमए लागल। फलतः यास्क केँ निरूक्त लिखबाक आवश्यकता भेलैन्ह। वस्तुतः ऋग्वेदक भाषा तँ ओहि युगक विद्वानक भाषा छल जे पश्चात्—'माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः'[2] आदि रूपेँ भूमि, भूमिपर आसीत जन एवं ओहि जनक संस्कृतिक दिग्दर्शन करबैत अछि। भूमि, जन एवं संस्कृति एहि त्रिकोणक भीतर जतेक जीवनक विस्तार अछि सएह लोक थिक। वेदव्यासक अनुसार 'प्रत्यक्षदर्शी लोकानं सर्वदर्शी भवेनरः'[3] अर्थात् जे व्यक्ति लोक केँ स्वतः अपन नेत्र सँ देखैत अछि सएह ओकरा नीक जकाँ देख सकैत अछि। लोकक प्रत्यक्ष दर्शने तँ समग्र दर्शनक कुंजी थिक! अतएव अथर्ववेदक पृथिवी सूक्तक अनुसार हमरा लोकनिक मातृभूमि अनेक प्रकारक जन केँ धारण केने अछि जे भिन्न-भिन्न प्रकारक धर्म केँ मननिहार अनेक प्रकारक भाषा केँ बजैत अछि। अथर्ववेदक—

'जनं बिभ्रति बहुधा विवाचसं नाना धर्माणां पृथिवी यथौकसम्'[4] मन्त्र जनक विविधता भारतीय जीवनक अभिभावी सत्यक संकेत करैत अछि जकर

१ १०. १३०. ३-५
२ अथर्ववेद पृथिवी सूक्त
३ महाभारत, उद्योग, ४३. ३६
४ अथर्ववेद, १२-१-४५

संग भाषा एवं धर्मक भेद जातीय जीवनक सामुहिक विविधता सँ कथमपि आक्रान्त नहि होइछ। भारतक मनीषी विविधताक मूल मे प्रक्षिप्त एकता कें आनि एहि पर जोड़ देलैन्ह। एकताक प्रतिपादक समन्वयात्मक दृष्टिकोणे तँ भारतीय संस्कृतिक मुख्य दृष्टिकोण थिक! अथर्ववेदक पृथिवी सूक्तक १२ मण्डलक ई मन्त्र—

'अहमस्मि सहमान उत्तरोनाम भूम्याम्।
अभिषाडस्मि विशाषाडाशामाशां विषासहिः' ॥

जे मातृभूमिक निमित्त एवं ओकर दुख विमोचनक हेतु जाहि संकल्प एवं उत्कट भावना कें बोध करबैछ ओहि सँ जन जीवनक उत्कर्षताक विशिष्ट संकेतक प्राप्ति होइछ।

अथर्ववेद मे प्रयुक्त अधिकांश शब्द एहेन अछि जकर व्यवहार जन साधारण अपन दैनिक जीवन मे करैत छल। अथर्ववेदक १ मण्डल, काण्ड ५ मे वर्णित सूक्त—

'नक्त जातास्योषधे रामे कृष्णे असिक्नि च।
इदं रञ्जनि रजय किलासं पलितं च यत् ॥'

मे स्वेतकुष्ठ तथा पलित रोगक औषधि एवं उपचार आदिक प्रसंग मे अछि तथा ६. ११. २ मे वर्णित—

'यथा सूर्यस्य रश्मयः परापतन्त्याशुमत्।
एवा त्वं कासे प्रपत समुद्रस्यानु विक्षरम्' ॥

मन्त्र उकासीक प्रसंग मे पाओल जाइछ। एवंक्रमें अथर्ववेदक तृतीय काण्ड मे वालग्रह, यक्ष्मा एवं बशीकरण आदिक चर्चा पाओल जाइछ। चौदहम काण्ड मे विवाह सम्बन्धी मन्त्र पाओल जाइछ। एहि मे कहल गेल अछि जे कन्याक विदागरी मे ओकर पिता ओकरा पलंग, गद्दा तथा कोच आदि वस्तु दैत छलैक।[५]

उपर्युक्त कथन सँ निस्सृत होइछ जे वैदिक साहित्य मूलतः प्राकृतिक देव-शक्तिक प्रति सम्बोधित मन्त्रक संग्रह थिक किन्तु लौकिक संस्कृतक साहित्य दिव्य साहित्य नहि भए मानवी थिक। वैदिक साहित्यक समाज आर्य, अनार्य,

५ १४-२-३१-४१

विजेता एवं विजितक समाज छल। किन्तु संस्कृत साहित्यक समाज वर्णाश्रम धर्मक नीव पर आधारित पौराणिक ब्राह्मण धर्मक समाज छल। वैदिक साहित्य ओहि प्रतिभा ज्ञान सम्पन्न ऋषिक अवदान थिक जनिक रचना मे भावना एवं कल्पनाक नैसर्गिक प्रवाह पाओल जाइछ। किन्तु लौकिक संस्कृतक साहित्य ओहि कलाकारक साहित्य थिक जे काव्य रचनाक पूर्व लोक जीवनक पूर्ण अध्ययन कएलैन्ह। अतः ई निर्विवाद थिक जे लौकिक संस्कृत साहित्य ओहि समयक साहित्य थिक जखन आर्य नगर सभ्यताक ढांचा मे ढलि नागरिक जीवन व्यतीत करैत छल। एवंक्रमें वैदिक साहित्यक गुणात्मक परिवर्त्तनक संग शास्त्रीय संस्कृत साहित्य मे परिवर्त्तित भेल जकर संकेत स्वतः वैदिक साहित्यहि मे पाओल जाइछ।

वैदिक साहित्यक प्रथम ग्रन्थ ऋग्वेद भारतक ताम्रयुगक अवदान थिक। ताम्रयुग जखन अपन अन्तिम क्षण गनैत छल तथा आर्यक नेता सुदास "दशराज्य" युद्ध मे विजयी भए आर्यक जनव्यवस्थाक स्थान पर एकताबद्ध सामन्त व्यवस्थाक स्थापनाक प्रयत्न मे छलाह तखनहि सप्तसिन्धुक ऋषिगण ऋग्वेदक ऋचाक रचना कएलैन्ह।

आर्यक आगमनक समय भारत मे आर्यक संस्कृति सँ नितान्त पैघ एक प्राचीन संस्कृति छल जे सिन्धुघाटी सँ लए जमुना गंगाक उपत्यका, सौराष्ट्रक भूभाग एवं मगध तक प्रसारित छल।[६] हड़प्पाक उत्खनन[७] मे निर्मम हत्या काण्डक जे प्रमाण प्राप्त भेल अछि ओहि सँ प्रतीत होइछ जे आर्यक सप्तसिन्धुक आगमन निरापद नहि छल। अपना सँ अधिक सभ्य तथा नागरिक भेला सँ अपेक्षाकृत मृदुल प्रकृति सं युक्त प्रतिद्वन्द्वी सँ हुनका जबरदस्त संघर्ष १५०० ई० पूर्वक लगभग करए पड़लैन्ह जकर प्रतिध्वनि इन्द्र-वृत्तक युद्ध रूप मे ऋग्वेद मे अबैत अछि जकरा पुनि इन्द्र-शम्बरक युद्ध सँ समता कएल जाइछ।

ऋग्वेद मे प्रायः वृत्त कें विश्व कें हिलाबएवला कहल गेल अछि तथा एहि हेतु "दोधतः" विशेषणक प्रयोग कएल गेल अछि। एहि मंत्र मे सायण वृत्तक पर्याय असुर लिखलैन्ह अछि।[८] किछु अन्य मन्त्र मे वृत्त असुर शंबरक

६. रुपुर, हस्तिनापुर, अहिक्षेत्रा, कान्यकुब्ज, कौशाम्बी एवं सोनितपुरक उत्खनन मे प्राप्त पुरातत्त्व सामग्रीक समता हड़प्पाक संस्कृति सँ कएल जाइछ जाहि सँ प्राचीन साहित्यक कथनक पुष्टि होइछ।

७. एम. ह्वीलर, इन्डस सिविलीजेसन, परिशिष्ट।

८. ऋग्वेद, ८-६-६

उपाधिक रूप मे उपलब्ध अछि। ऋग्वेद मे शंबर के 'अहि' वा 'सर्प'[९] कहल गेल अछि जे वृत्तक प्रसिद्ध उपाधि छल। महाभारत तथा रामायण मे वृत्त केँ असुरक रूप मे चित्रित कएल गेल अछि।[१०]

शतपथ ब्राह्मणक अनुसार सभ ज्ञान एवं विज्ञान वृत्तहि मे सन्निहित छल। वृत्तहि ऋक्, यजुष एवं सामक ज्ञाता छलाह। इन्द्र युद्ध मे जखन वृत्त पर प्रहार कएल तँ वृत्त भयातुर भय इन्द्र सँ अनुनय कएल जे "हमरा एक अमोघ शक्ति अछि ओकरा लए हमरा अभयदान दिअऽ।" तदर्थ इन्द्र वृत्त सँ क्रमशः ऋक, यजुष एवं साम केँ प्राप्त कएल।[११]

उपर्युक्त कथन सँ एहि विषयक पुष्टि होइछ जे सिन्धु घाटीक सभ्यता एवं संस्कृति आर्यक सभ्यता एवं संस्कृति सँ नितान्त पैघ छल तथा आर्य ऋक, यजुष एवं साम केँ अनार्यें सँ प्राप्त कएलक। सिंधुघाटीक ताम्रयुगक अवशेष सँ ज्ञात होइछ जे ऐतिहासिक काल धरि समस्त भारतवर्ष मध्य एके सभ्यता व्याप्त छल। सप्तसिन्धु केँ अनार्य सँ जीतलाक उपरान्त वस्तुतः अनार्य आर्य केँ चारू दिश सँ परिवेष्ठित कए लेल। महाभारतक युद्धक समय राजपुताना एवं मगध मे असुरक आधिपत्य छलैक। वैदिक वाङ्मय मे असुरक विशिष्ट भवन निर्माण कलाक प्रसंग मे उल्लेख पाओल जाइछ। जरासंधक राजधानी गिरिव्रजक उत्कर्ष रक्षा दुर्ग केँ देखि भीम केँ बड़ आश्चर्य भेलैन्ह तथा युधिष्ठिर राजसूय यज्ञक निमित्त माया नामक भवन-निर्माता असुर केँ भवन निर्माणक कार्य सोपलथिन्ह।[१२]

आसुरीय सभ्यता एवं संस्कृतिक विशिष्ट प्रमाण मोहेनजोदरोक अवशेष मे पाओल जाइछ। मोहेनजोदरोक उत्खनन मे प्राप्त कतिपय अभिलेषक पहचान ऋग्वेद मे वर्णित नाम सँ होइछ। नण्डूर नामक अनेक गाँव दक्षिण भारतक नासिक, सूरत, गुण्टुर आदि जिला मे पाओल जाइछ। मोहेनजोदरो मे प्राप्त "नण्डूर" अभिलेखक पहचान एहि नण्डूर गाम सँ कएल जाइछ। एकर अतिरिक्त अरबक प्राचीन भूगोलवेत्ता सिन्धु केँ जतए मोहेनजोदरो स्थिति अछि 'नण्डूरवर' नाम सँ संबोधन कएलैन्ह अछि। नण्डूरवरक अर्थ होइछ नण्डूरक बन्दरगाह। एहि सँ ई बुझना जाइछ जे

९ ओएह, २-१२-११
१० महाभारत, ५. १०. १९
११ शतपथ ब्राह्मण, ५.५.५.१-५
१२ ऐम० एच० हेरेस, स्टडिज इन प्रोटो-इन्डो मेडिटेरेरियन कल्चर, भूमिका पृ० ८

नण्डूरक स्थान ओहि काल मे प्रमुख छल। पश्चिमी खानदेश मे नण्डूरवा नामक एक शहर अछि जे खानदेशक सभ सँ प्राचीन नगर थिक। बाराह-पुराण मे सानण्डूर नामक एक पवित्र नगरक वर्णन अछि। एहि नगरक उत्तर मे मलय तथा दक्षिण मे समुद्र छल। वाराहपुराण मे वर्णित सानण्डू-रक भौगोलिक स्थिति तथा मोहेनजोदरोक भौगोलिक स्थिति मे पूणतः समता पाओल जाइछ। सानण्डूर शब्दक अर्थ होइछ "मुर्दाक नगर"[१३] जकर प्रयोग मोहेनजोदरोक सभ्यताक हननक अर्थ मे कएल गेल अछि।

उपर्युक्त विवेचन सँ ज्ञात होइछ जे सिन्धुघाटी मे आर्य कें जाहि वृत्त सँ युद्ध भेल ओ ओहि समयक आदिम जातिक नेता छलाह जकरा आर्य भारत मे आबि परास्त एवं पराजित कएलैन्ह। शतपथ ब्राह्मण सँ ज्ञात होइछ जे वृत्त अग्नि एवं सोमक उपज छल तथा एहि मे ओकर शक्तिक निवास छलैक। एकर अतिरिक्त ओ सभ विद्या एवं ज्ञान मे सम्पन्न छल। ओ ऋक्, यजुष तथा सामक कोश छल। पूर्वाह्ण मे ओकरा देवता, मध्याह्न मे मनुष्य एवं अपराह्ण मे पितर पुरोडाश अर्पित करैत छलथिन्ह। एवं-क्रमें वृत्त कें देवताक आहुति प्रदान कए हुनक प्रसाद प्राप्त करबाक अधिकार छल। ओकरा मे ऋक्, यजुष एवं साम मे संगृहीत धार्मिक विद्या कें पढ़बाक, पढ़ेबाक, सुरक्षित रखबाक तथा प्रयुक्त करबाक क्षमता छलैक। ओ जनता सँ उपहार एवं बलि ग्रहण करैत छल। एवंक्रमें ओ आदिम याज्ञिक, यातुधान, दैवज्ञ आदि सभ कार्य करैत छल। ओ भारतीय आर्य जातिक पुरोहित पंडित एवं ब्राह्मण वर्गक द्योतक छल। शतपथ ब्राह्मण मे स्पष्ट वर्णित अछि जे इन्द्र विश्वरूप कें मारि ब्रह्महत्याक अपराध कएलैन्ह। महाभारत एवं रामायण मे ई उल्लेख अछि जे इन्द्र वृत्त एवं नमुचिक हननक कारणें ब्रह्महत्याक जघन्य पाप सँ कलुषित भेलाह।[१४] ई लक्ष्यक विषय थिक

---

१३. ओएह, पृ० ११२-११३

१४. महाभारत, १२-३४४-१३२०९; रामायण ७-८५-१९—

हतश्चायं त्वयावृत्तो ब्रह्महत्या च वासव।
बाधते सुरशार्दूल मोक्षं तस्य विनिर्दिशा॥

वेद मे वृत्त कें ब्राह्मण कहल गेल अछि। ऋग्वेदक (७. २८. १)— "यो रध्रस्य चोदिता यः कृशस्य यो ब्रह्मणो नाधमानस्य कोरेः"—अर्थात् ब्राह्मण ओ थिक जे धर्म-ग्रन्थक अध्ययन मे विक्षिष्टता कें प्राप्त कए लोकक धार्मिक कृत-कार्यक संपादन करैछ। किन्तु ब्राह्मण शब्द विशेषतः वैदिक साहित्यक ओहि भाग कें निर्देश करैत अछि जे प्रधानतः मंत्र, जादू

जे महाभारतक अनुसार वृत्त तथा विश्वरूप त्वाष्ट्र एके थिकाह एवं तैतिरीय संहिताक[१५] अनुसार विश्वरूप त्वाष्ट्र असुरक भागिन छलाह जे देवताक पुरोहित बनलाह। अतएव ई निर्विवाद सिद्ध भए जाइछ जे वृत्त ब्राह्मण वर्गक द्योतक थिक तथा ओकर हत्या ब्रह्महत्या सन निकृष्ट मानल गेल।[१६]

वेद मे वृत्तक असंख्य पुर, दुर्ग, एवं निण्यकक उल्लेख पाओल जाइछ।[१७] एहि सँ ज्ञात होइछ जे वृत्तक स्थान राजकीय छल। ओकर दुर्ग एवं पुरक उल्लेक हड़प्पाक किलावंदी सँ पूर्णतः मिलैत अछि। हड़प्पाक प्रसंग मे आर० ई० मोर्टीमर व्हीलर लिखैत छथि :—

"हरप्पाक शासकक नगरक शासन प्रणाली तथा सुमेर एवं अरकदक पुजारी शासकक शासन प्रणाली में कोनहुटा भेद-भाव नहि देखल जाइछ। सुमेर मे नगरक धन समृद्धि एवं शासन व्यवस्थाक केन्द्र प्रधान देवता वा ओकर पुरहित होइत छल। नागरिक जीवनक केन्द्र ऊँच मंदिर

एवं टोना आदि सँ मम्बद्ध अछि। ब्रह्मवेदक तात्पर्य अथर्ववेद सँ थिक जकर नम्बन्ध प्रधानतः मंत्रे आदि सँ अछि। ऋग्वेद मे (७. १०४, १५-१६) वशिष्ट केँ "यातुधान" कहल गेल अछि जे पश्चात् राक्षसक उपाधिक रूप मे प्रचलित भेल। एहि तरहेँ आंगिरहु केँ— "कृत्या आंगिरसी" (अथर्ववेद, ८. ५. ९) अर्थात् तंत्र-मंत्र सँ सम्बद्ध कहल गेल अछि।

अतएव उपर्युक्त विवेचन सँ निस्सृत होइछ जे वैदिककाल मे ब्राह्मणक सम्बन्ध जादू-टोना एवं तंत्र-मंत्र सँ रहैत छल।

डा० बुद्ध प्रकाश (ज० बि० रि० सो०, भाग ३५, पृ० ९४) ब्राह्मण केँ आर्यक आगमनक पूर्वहिक याज्ञिक मनैत छथि जकरा ओ वृत्त सँ समता कएलैन्ह अछि जे सप्तसिन्धु मे आर्यक संग संग्राम कएल। एकर अतिरिक्त व्रात्यक प्रसंग मे उल्लिखित अछि जे ओ ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शुद्र मे विभक्त छलाह। अहुखन जाहि जातिक पानि नहि चलैत छैक ओ अपन देव ओ पितर-कार्य आन-आन जातिये सन वर्णाश्रमहिक अनुसार अपन पृथक ब्राह्मणक द्वारा सम्पादन करबैत अछि। फलतः मिथिला मे तेली केँ पृथक तेल-ब्राह्मण एवं धोबी केँ अपन रज-धोबी छैक। सम्भवतः आधुनिक द्रविड़ब्राह्मण आदिक वर्गीकरण ओहि युग मे भेल जकर सम्बन्ध प्रायः वृत्तहि सँ छल।

१५ २-५-१-१

१६ ए० वी० कीथ, ऋक ब्रा० पृ० ३१४

१७ ऋग्वेद, १०-७६-३

होइत छल जतए सँ दैवी सत्ता सँ समन्वित एक विशाल एवं सुव्यवस्थित शासन प्रसारित होइत छलैक।[१८]

ऋक, यजुष एवं साम मूलतः वृत्तक धार्मिक साहित्य छल। वृत्त भारतक अनार्य जातिक प्रतीक थिक।

ऋग्वेद मे इन्द्र एवं वृत्तक युद्ध के पुनि इन्द्र एवं शम्बरक युद्ध सँ समता कएल गेल अछि। व्रात्यक द्वारा आश्चर्यपूर्ण कार्यक वर्णन तथा शम्बरक कतिपय आघात प्रतिघातक वर्णन ऋग्वेद मे उल्लिखित अछि।

साधारणतः एवंक्रमक विचार जे दक्षिण भारतहिटा मे द्रविड़क प्रख्याति एवं प्राबल्य छल से पूर्णतः भ्रामक थिक। एहि प्रसंग मे हेविन्त महोदय पहिनहि १८८८ ई० मे पुष्टिकरण कएने छथि जे उत्तर भारत मे कोल एवं द्रविड़ आर्यक आगमनक पूर्वे निवासित छलाह।[१९] हुनका लोकनि केँ अनेक दिवाल सँ सुरक्षित पुर छलैन्ह।[२०] मात्र शम्बर केँ १०० दुर्ग छलैन्ह जाहि मे सँ किछु केँ 'प्राचीन पुर्वी'[२१] कहल जाइत छल। हुनकर दुर्ग मे असंख्य धन, पशु, स्वर्ण एवं रत्न छलैन्ह।[२२]

शम्बर हिमालय प्रान्तक किरातक प्रतापी राजा छलाह। ईसा पूर्व दोसर शताब्दी मध्य समग्र हिमालय किरात भूमि (किन्नर भूमि) नामे प्रख्यात छल। कागडेक वैजनाथक मन्दिरक प्रशस्ति मे एहि गामक नाम 'किरग्राम' उल्लिखित अछि। शम्बर ओहि अंचलक किरातक वीर एवं प्रतापी नेता छलाह जे आर्यक प्रसार के उत्तर मे अवरुद्ध कए आर्यक नेता दिवोदास केँ घाम चुवौने छलाह। शम्बरक एक सए दुर्ग आर्यक निमित्त दुर्भेध छल।

मात्र आर्यक प्रतिद्वन्द्वि भेला सन्ता शम्बर किंवदन्ति मे विकराल शरीर सँ युक्त मानव सँ दानवक रूप मे प्रख्यात भेलाह जनिका पश्चात् परम्परा जलन्धर असुरक नाम प्रदान कएल जाहि सँ ओ पहाड़ी भूभागक नाम जलन्धर खण्ड पड़ल।[२३]

---

१८ आर० ई० मो० ह्वीलर, हड़प्पा, १९-४६

१९ ज० रो० ए० सो०, भाग २०, पृ० ३२८

२० ऋग्० ४-२६-३; ३०-१३; ६-८-१५

२१ ओएह, ११-१४-६; ११-६; ४-२६-३

२२ १-१३०-७

२३ राहुल सांकृत्यायन, ऋग्वेदिक आर्य, पृ० ११

ऋग्वेद मे असुर, नाग, दास, यदु आदिक उल्लेख सेहो शत्रुएक रूप मे कएल गेल अछि। वस्तुतः ई सभ अनार्यक भिन्न-भिन्न शाखा मे विभक्त जाति छल जे क्रमशः अपन स्थान सँ आर्यक द्वारा निस्कासित कएल गेल। अथर्ववेदक अनुसार असुर मध्यदेश, गंगा-यमुनाक संगम सँ लए मगध तक प्रसारित भए गेल जे व्रात्यक द्वारा आर्यक संस्कृति मे दीक्षित भेल। मगधक जरासन्ध तथा आसामक भगदत्त असुरहि सँ सम्बद्ध छलाह। एवंक्रमेँ लवणसागर सँ सिन्धु-सरस्वती, मध्यदेश सँ सदानीरा, मगध एवं पूर्वी भारतक सीमाधरि असुरक प्रसार भेल जे अपना केँ मागध कहैत छल जाहि सँ मगधक नामकरण एवं ओहि सँ सम्बद्ध भाषा मागधी कहौलक।

मागधक आसुरी वंशक पुष्टि स्वतः मागधे सँ भेल जे अपन राजा केँ 'पूरुस'[२४] क नाम सँ संबोधन करैत छल जे अत्यन्त प्रारम्भहि सँ असुरनामे प्रख्यात छल। एहि असुरक अपन भाषा, संस्कृति एवं साहित्य छलैक। शतपथ ब्राह्मणक[२५] अनुसार आर्य एवं असुरक भाषा मे भेद छलैक। मेकडोनल[२६] पतंजलिक आधार पर ओहि भाषा केँ म्लेच्छ भाषा कहलैन्ह अछि। यजुर्वेद तँ सात प्रकारक आसुरी छन्दहुक प्रसंग मे उल्लेख करैत अछि।

युद्ध मे प्राक्रम तथा आन-आन प्रकारक दक्षताक अतिरिक्त आकाश मध्य गमन एवं अन्तर्धान होयब आदि असुरक कार्य आश्चर्यजनक होइत छल।

ओ लोकनि दुर्ग सेहो बनबैत छल।[२७] असुरक अपन पृथक भवन निर्माण एवं मूर्त्तिकला छलैक जाहि मे ओ लोकनि सर्प केँ अपन प्रतीकक रूप मे रखैत छल। राजगीरक मनियार मठ तथा वैशालीक मनसा देवीक मूर्त्ति एकर विशिष्ट प्रमाण थिक।[२८]

अनार्यक एक अन्य प्रवल शाखा नाग छल। सम्भवतः नाग जाति भारतक उत्तर, पश्चिम एवं दक्षिण भाग सँ लए सुदूर पूर्व धरिक भूभाग मे प्रसारित छल। नागक प्रतीक सेहो साँपे छल।

नागक नेता अर्बुद कादयेय छलाह जनिकर कथानक अश्वमेध यज्ञक

२४ बि० रि० सो० प०, भा० १२, पृ० २८२-२८५
२५ ३.२.१.२३.२४
२६ वैदिक इन्डेक्स, भाग, पृ० ३४८
२७ ए० ब्राह्मण, १-२३
२८ आर० स० रि०, १९१३-१४

अवसर पर पारिप्लवाख्यानक क्रम मे पाँचम दिन सुनाओल जाइत छल। नागक प्रसंग मे शतपथ ब्राह्मण मे विशद् उल्लेख पाओल जाइछ। एहि जातिक निवासस्थान पाताल मे छलैक। यूनानी लेखकक द्वारा वर्णित "पत्तल" वा "पाताले" नामक स्थान सँ पातालक पहचान कएल जाइछ जे आधुनिक सिंधु प्रान्तक निरंकोल वा हैदराबाद थिक।[२९] ई प्रदेश मोहेनजोदरो-संस्कृतिक केन्द्र स्थान छल। एहि संस्कृतिक प्रमुख लक्षण सर्प छल।

मगध नाग संस्कृतिक प्रधान केन्द्रस्थल छल। मगधक जरासंघ एहि शाखाक छलाह। नाग वैशालीक शासक करंधमाक पौत्र मरुत्त कें हराओल तथा तक्षशिला कें जीति हस्तिनापुर पर आक्रमण कए परीक्षित कें मारल। मगध मे शिशुनागक तथा महिष्मती मे कारकोट-नागक राजधानी छलैक। नाग असुरक प्रधान शाखा छल जकर दैत्य, दानव एवं राक्षस, आदि प्रशाखा छलैक।

दिघनिकाय[३०] मे सत पर्वत (राजमहल जे संथालपरगन्ना मे अछि) नागक निवासक रूप मे उल्लिखित अछि। मोहेनजोदरोक उत्खनन मे 'पाव' नामक अभिलेख प्राप्त भेल अछि। मल्लक पावा नामक देश प्रायः नागक मूल स्थान छल। नाग कोल शाखाक छल जकर पहचान पौराणिक दास शाखा सँ कएल जाइछ।[३१]

नागक प्रधानता भारतवर्षक जनजीवन मे तेहेन ने व्याप्त छल जे पश्चात् नागपूजा वैदिक, बौद्ध, जैन आदि प्रत्येक धर्मक संग समन्वित भए भारतीय लोकधर्म मे व्याप्त भए गेल। नागक माता सुरसा पृथ्वीक संज्ञा तथा कद्रू पृथ्वीक रूप थिक।[३२] विष्णु अनन्त नामक शेषनागक शय्या पर सुतैत छथि। विष्णुक सदृश शिवहुक संग नाग परम्पराक समन्वय प्राप्त भेल। यजुर्वेद मे रुद्र कें 'अहि सन्नः', अर्थात सर्पक सानिध्यवला कहल गेल अछि। लोक धर्मक दृष्टि सँ नाग एवं सर्पक धारा भने कहियो पृथक रहल हो किन्तु ओकर भेद-भाव आब स्पष्ट नहि बुझि पड़ैछ।

---

२९ जे० डबल्यु मेक्रिडल, एन्सियेन्ट इंडिया एज डिस्क्राइब्ड बाय मेगास्थनीज एण्ड एरियन, पृ० १८७

३० महासमय सु० श्लोक ७

३१ रे० एच० हेरस, स्टडिज इन प्रोटो-इन्डो मेडिटेरेरियन कल्चर, पृ० १२०

३२ इयं पृथ्वी कद्रूः—शत० ३-६-२-२; इयं वै पृथ्वी सर्पराज्ञी—शत० २-१-४-३०

नागक प्रसंग मे दुइ गोट कथा बड़ महत्वक अछि। एकटा तँ नाग एवं गरुड़क संघर्षक और दोसर राजा जनमेजयक नाग यज्ञक। पहिल कथाक मूल मे धार्मिक कथाक अंश तथा दोसर कथाक मूल मे ऐतिहासिक अंशक प्रधानता परिलक्षित होइछ। गरुड़ सूर्यक प्रतिनिधि थिकाह तथा नाग अंधकार सँ परिपूर्ण पार्थिव लोकक। गरुड़ एवं नागक संघर्ष मे गरुड़क सभ सँ पैघ विजय हुनक द्वारा स्वर्ग सँ अमृत घट लाएब थिक। अमृतघटक प्राप्तिक आख्यानक सम्बन्ध जीवनदायी अमृत पदार्थ सँ थिक जे नागजाति केँ नहि प्राप्त भए सूर्योपासक आर्य जाति केँ प्राप्त भेल। समुद्रमन्थन सँ उत्पन्न अमृतघट देवता केँ प्राप्त भेल असुर केँ नहि।

जनमेजयक नागयज्ञक कथा मे किछु ऐतिहासिक तथ्य अछि। कुरु-पाण्डव वंशक संग तक्षक वंशक झगड़ा छल। एहि झगड़ा मे परीक्षित क अन्त भेल। अतएव जनमेजय ओकर बदला नाग यज्ञ सँ लेलैन्ह। कृष्णक जीवनहु मे कालिय नाग केँ वशक घटनाक समावेश पाओल जाइछ। भगवान बुद्धहु केँ कतिपय नाग सँ सम्बन्ध छलैन्ह। बुद्धक जन्मक समय नन्द एवं उपनन्द नामक नाग प्रकट भए हुनक स्तुति कएल। नैरंजना नदी मे नाग देवताक निवास छल। जखन बुद्ध ओहि मे स्नान कएलैन्ह तँ ओतएक सागर नागराजक दुहिता हुनका बैसबाक निमित्त रत्नजटित आसन देलथिन्ह।

जातक मध्य तँ नागक आख्यान भरल अछि जाहि सँ नाग सम्बन्धी लोकवार्त्ता पर एक विशिष्ट प्रकाश पड़ैछ। नागराज चंपक, शंखपाल, भूरिदत्त आदि कथाक अनुसार नाग बौद्धधर्मक नैतिक प्रभावक अन्तर्गत भए तदनुसारे आचरण कएलैन्ह।

लोकधर्म, साहित्य एवं कला मे नागपूजाक सभ सँ प्रभावशाली उदाहरण राजगृहक मणिनाग देवताक पूजाक स्थान मणियारमठ अछि। महाभारतीय तीर्थ यात्रा पर्व मे राजगृहक गरम जलक स्रोतक वर्णनक उपरान्त उल्लिखित अछि जे ओहि मे स्नानक पश्चात् यात्री केँ उचित थिक जे ओतए बाँटल जाइत यक्षिणीक प्रसाद केँ खाथि[33] जे भ्रूण सँ सम्बन्ध राखएवाली जरा नामक राक्षसी थिक। महाभारतक अनुसार जरा राजगृहक गृहदेवी छलीह जे जात-हारिणी वा हारीती नामे बौद्ध एवं ब्राह्मण परम्परा मे प्रख्यात अछि। जात-हारिणी शब्द मे जातक अर्थ होइछ बालक।

---

३३ ८२. ९१-९२

Scanned by CamScanner

बालकक हरणार्थे ओकर नाम हारीती पड़ल।[३४] हारीती राजगृहक एक बालघातिनी क्रूर देवी छलीह जे ओतक बच्चा सभ केँ पकड़ि ओकर भक्षण करैत छलीह।[३५]

राजगृहक चारू दिश पहिने आदिम निवासीक बास छल। हुनकहि मध्य माँस एवं शोणितक भक्षण केनिहारि कोनो गृहदेवीक पूजा होइत छल जकरा जरा देवी कहल जाइत छलैक। राजगृह मे जरादेवीक प्रसाद भक्षणक उपरान्त माणिनागक दर्शनक परामर्श सेहो देल गेल अछि जकर परम्परा आर्येतर जाति मध्य अद्यावधि अबैत अछि।

लोकधर्म मे नागक पूजा नागपंचमीक उत्सव एवं आन-आन अवसर पर मनाओल जाइछ। लोकमान्यताक अनुसार नागक सम्बन्ध प्रायः जलाशय सँ अछि।

मनसा मंगला तथा पद्मपुराण मे नागक प्रसंग मे भिन्न-भिन्न कथा पाओल जाइछ। एहि ग्रन्थ मे मनसा के पद्मावती कहल गेलैक अछि। मनसाक पूजा बिहार एवं बंगालक सभ क्षेत्र मे होइछ। मिथिला मे मधुश्रावणीक अवसर पर कुसुमावती नामक नागिनक प्रधान पूजा होइत अछि। एहि अवसर पर १०१ नागिनक चित्र अरिपन मे देखाओल जाइछ।[३६]

एकर अतिरिक्त मिथिलाक मगहिया धानुक जाति मध्य भादव मास मे नाग पूजाक निमित्त भीख माँगि पूजा करबाक परिपाटी पाओल जाइछ। स्मरणीय थिक जे एहि जातिक उद्भव मगध स्थले थिक जे असुर एवं नागक संस्कृतिक केन्द्र छल। एहि उपलक्ष पर ग्रामीण स्त्री लोकनि नागक गीत गाबि भीख मंगैत अछि जे एवं क्रमक रहैछ—

॥ अथ गीत नाग ॥

"अथल पथल केर जंतबा हे जतबा बेल बबुर केर हथरा हे हथरा। पिसय बैठलि ब्राह्मण बेटिआ नाग छोड़ल फुफकार हे बाबू नाग दुलरुआ। जैं हम जनितउँ नाग पिसल जैताह अचरहिँ झारि झुरि दितउँ हे बाबू नाग दुलरुआ। जे मोर नाग केँ गहूँम भिख देतीहि लाल लाल बेटबा खेलौती हे मोर नाग दुलरुआ। जे मोर नाग केँ भिखिआ छपौती साओन भदौआ पछतौती हे नाग दुलरुआ। ॥१॥

३४ सभापर्व, अ० १६-१७—पूना संस्करण

३५ डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, प्राचीन भारतीय लोकधर्म, पृ० ५४

३६ लक्ष्मीनाथ झा, मि० सं० लोकचित्र कला, पृ० ३३

अपने जे चललाह नाग गंगा असननमा नागिनि रोदना पसारलन्हि हे मोर नाग दुलरुआ। अपने जे खाथि नाग पान केर हे बिरवा नागिनि सिठिआ बटोरथि हे मोर नाग दुलरुआ। अपने सुतथि नाग लाली रे पलंगिआ नागिनि लोटे गोड़ थरिआ हे मोर नाग दुलरुआ। अपने जे बैसला नाग नौगक गछिया नागिनि नौग बटोरथि हे मोर नाग दुलरुआ ॥२॥

चलइति चलइति पैआँ पिरा गेल भिखिओ न देअ गरबैतिनि हे मोर नाग दुलरुआ। कहाँ गेल किए भेल गामक पटवरिआ भिखिओ न देए गरवैतिनि हे बाबू नाग दुलरुआ। कहाँ गेल किए भेल गामक गोड़ैतवा झप दय भिखिआ दिआवह हे मोर नाग दुलरुआ। सगरे समैया नाग बैसि जे रहलाह भादव रटना रटौलन्हि हे बाबू नाग दुलरुआ ॥३॥

अपने जे वैसलाह नाग पोखरीक भिड़वा हमरा सँ भिखिआ मंगौलन्हि हे बाबू नाग दुलरुआ। अपने जे खाए नाग पाकल पान बिरवा नागिनि विरिआ लगावे हे बाबू नाग दुलरुआ। जब हम जनितहुँ जामुन फिरि आदि करताह आम छोड़ि जामुन खैतहुँ हे बाबू नाग दुलरुआ। जब हम जनितहुँ बड़हर फिरि आदि करताह कटहर लुटाए बड़हर खैतहुँ हे बाबू नाग दुलरुआ। अपने जे बैसलाह नाग चन्दनक गछिआ हमरा रटना रटौलन्हि हे बाबू नाग दुलरुआ।"

उपर्युक्त गीत मे ब्राह्मण एवं नागक विरोधाभावक आभास स्पष्ट बुझना जाइछ। ब्राह्मणक बेटी द्वारा नागक पिसल जायब ओकर फुफकार काटब तथा गरबैतिनि द्वारा भीख नहि देबाक प्रसंग सँ एहि उक्तिक पुष्टि होइछ।

आर्य सप्तसिन्धु सँ सदानीराक तट पर आबि मात्र किछु भाग मे बसलाह तथा ओकर अधिकाँश भाग तँ अपन पूर्वक बासिये सँ निवासित रहल जकर प्रचलित धर्म, साहित्य, कला-कौशल आदि केँ ओ क्रमशः अपनौलैन्ह।

अतएव ई निर्विवाद थिक जे नागक प्रधानता मिथिला मे अवश्य छल। फलतः समयानुसार नाग एवं नाग सँ सम्बद्ध भावना मिथिलाक जन जीवन मे पाओल जाइछ तथा ओहि नागक स्मृति अनेक पावनिक अवसर पर समग्र मिथिला मे मनाओल जाइछ।

ऋग्वेद मे मध्य देशक पुरु-भृगु असुर-अथर्वक गुणक विशिष्ट चर्चा उपलब्ध अछि।[३७] हुनका लोकनि केँ समुद्र पर आधिपत्य छलैन्ह तथा वरुण

३७ ७-१८-१३

हुनकर मित्र छलथिन्ह ।[38] ज्योतिष हुनकर प्रधान शास्त्र[39] तथा माया वा मन्त्र विशिष्ट विद्या छलैन्ह ।[40] अश्वनी एवं रुद्र संरक्षक छलथिन्ह[41] तथा भेषज वृत्ति हुनकर प्रधान कर्म छलैन्ह ।[42]

महाभारतक अनुसार भेषज वृत्ति निन्दनीय छल ।[43] तैतरीय संहिताक—"ब्राह्मणेन् भेषजम् न कार्यम्" वाक्य सँ भेषजक प्रति उपयुक्त कथाक पुष्टि होइछ ।

अत्रिसंहिता—'ज्योतिर्विदो·······अथर्वनः' तथा ऋग्वेद एवं अथर्ववेद मे नक्षत्र, कल्प आदिक प्रसंग मे जे किछु उल्लिखित अछि ताहि सँ उपयुक्त विषयक पुष्टि होइछ। माया वा मन्त्र केँ शान्ति-पौष्टिक-विचारादि-प्रतिपादक[44] कहल जाइत छल जकर भिन्न-भिन्न प्रकार, सांकेतिक चेन्ह एवं मन्त्र रहैत छलैक जे पश्चात् अरिपन एवं जनकथाक रूप मे परिवर्त्तित भए अद्यावधि समग्र देश मे पाओल जाइछ ।

मिथिला मे अरिपन जकरा अन्यत्र अलिपना वा अलिपन कहल जाइछ संस्कृतक आलेपन शब्द सँ निस्सृत भेल अछि। अरिपनक भिन्न-भिन्न प्रकारक भेद अछि जकर सम्बन्ध विविध प्रकारक व्रत एवं पावनि सँ पाओल जाइछ। ई व्रतिकक भावना एवं उद्देश्यक पूर्त्तिक निमित्त यन्त्रस्वरूप थिक जकर उद्भव ओहि आदि मानव सँ भेल जकर संस्कृति हरप्पा सँ लए हिमालय धरि प्रसारित छल ।

वस्तुतः अरिपन वा अलिपन शब्द देशी थिक जकर तात्पर्य अलि वा देवार खींचब सँ छल । एहि अरिपनक उद्देश्य छलैक गाम, घर एवं बास स्थान केँ शत्रु सँ निरापद राखब तथा अपन जमीन केँ उपजाऊ बनाएब । प्रायः हरेक तरहक सुख एवं समृद्धिक पूर्त्तिक उद्देश्य एहि अरिपन एवं तत्सम्बन्धित कथा मे पाओल जाइछ जकरा एक तरहक टोना कहल जा सकैछ । एहि अरिपन केँ प्राचीन लोक-कलाक संज्ञा देल जा सकैछ जाहि मे लोक-जीवन सँ सम्बद्ध तथ्यक संकेत पाओल जाइछ ।

---

३८ ऋ० १-२४-१४
३९ ऋ० १-२५-८
४० ऋ० १-१६०-२३
४१ ऋ० ५-४२-११
४२ ऋ० २-६३-७
४३ महा० १२-३६-२८
४४ श० ब्रा० १०-५-२-२०

अरिपन एवं एहि सँ सम्बन्धित कथा जे प्रारम्भ मे मात्र एक रुक्ष टोनाक रूप मे प्रख्यात छल क्रमशः कलाक आकार ग्रहण कए पूजाक परिपाटी धारण कएलक। मन्त्र कथा तथा अरिपन कलाक रूप मे ओहि आदि मानवक आत्माक संगीतमय ध्वनि तथा कोमल मनोभावनाक प्रतिच्छायाक रूप मे भाषित होइछ जकर संस्कृति, भाषा एवं साहित्य ओहि दिन सर्वोपरि एवं सर्वश्रेष्ठ छलैक। मात्र एहि उद्देश्यक निमित्त ओहि मानवक यद्यपि ह्रास भेलैक किन्तु ओकर कला आर्यक संस्कृति मे मिश्रित भए चिरस्थाई भए गेल।

उपर्युक्त संस्कृतिक प्रसार क्रमशः पश्चिम मे खैबर सँ लए पूर्व मे यमुनाक किनार धरि भेल। यद्यपि महाभारतक ६५ पीढ़ी पूर्वे अयोध्या एवं प्रतिष्ठानपुर मे मानव एवं ऐल वंशक राज्यक स्थापना भेल किन्तु मगध पर तत्कालीन आर्यक कोनहुटा वश नहि चलल। बिहार मे गया जिलाक सोनपुरक उत्खनन सँ प्राप्त पुरातत्व सामग्री हड़प्पाक संस्कृति सँ मिलैत अछि जाहि सँ मगधक प्राचीन संस्कृतिक पुष्टि होइछ। सोनपुरक प्राचीन नाम सोनितपुर[४५] छल जे प्रसिद्ध वाणासुरक राजधानी छलैक।

शतपथ ब्राह्मणक अनुसार आर्यक एक जत्था माधवविदेघ तथा हुनक पुरोहित गौतम रहुगणक नैतृत्व मे सरस्वती नदीक तट सँ सदानीरा (गण्डकी) तक आएल तथा विदेह राज्यक स्थापना कएल। सम्भवतः आर्य लोकनिक ओ जत्था जे प्रायः नदी मार्ग सँ आएल प्रथम मगध मे पदार्पन कएल किन्तु मगधक तत्कालीन बासी जे मागध, कीकट एवं व्रात्य कहबैत छल ओहि आर्यक प्रसार कें अवरुद्ध कएल। फलतः वैदिक साहित्य मे मगधक निन्दा तँ कएले गेल, स्मृति मध्य सेहो आर्यक प्रसारक बाहर भेला सन्ता निम्न दृष्टिए देखल गेल।[४६]

यद्यपि ऋग्वेद मे मगधक नाम नहि पाओल जाइछ किन्तु एहि मे कीकट शब्द उल्लिखित अछि। कीकटक प्रसंग मे परवर्त्ती साहित्य एवंक्रमेँ उल्लेख करैत अछि :—

कीकटो नाम देशोऽनार्य्य निवासः

—निरूक्त, भा० ३, पृ० २७३

४५ वाणासुरक पुत्री उषा एवं अनिरुद्धक प्रेमाख्यान पुराणमध्य सुरक्षित अछि।

४६ अंग-वंग-कलिंगेषु सौराष्ट्र-मगधेषु च।
तीर्थयात्रां बिना गच्छन् पुनः संस्कारमर्हति॥

बुद्धो नामा जिनसुतः कीकटेषु भविष्यति ।

—भागवत, १-३ २४

कीकटेषु गया पुण्या नदी पुण्या पुनः पुना ।
च्यवनास्याश्रमः पुण्यः पुण्यं राजगृहं वनम् ॥

अतः कीकटक सम्बन्ध मगध सँ अवश्य छल जकरा सायन-'अनार्य्य-निवासेषु जनपदेषु' रूप मे उल्लेख कएलैन्ह अछि ।

मागधक चर्चा यजुर्वेदक माध्यन्दिन संहिता[४७] मे वेश्या, जुआड़ी आदिक संग पाओल जाइछ । ई लोकनि गबैत बजबैत सहो छलाह । अथर्ववेद[४८] वाजसनेय माध्यन्दिन संहिता[४९] तथा तैत्तिरीय ब्राह्मण[५०] मे मगधक उल्लेख अनार्य भूमिक रूप मे पाओल जाइछ । लट्यायन श्रौत-सूत्रक[५१] अनुसार मगधक सम्पर्क वंजारा व्रात्य सँ छल। मोनियर वीलियम्[५२] व्रात्य शब्दक अर्थ जातिच्युत, नीच, दुष्ट आदि रूप मे करैत छथि ।

व्रात्य लड़ाकू आदिवासीक एक प्रबल घुमक्कड़ दल छल जकरा संग आर्य केँ युद्ध करए पड़लैन्ह। महाभारत[५३] व्रात्य केँ चाण्डाल, मनु[५४] लिच्छवी केँ व्रात्य क्षत्रिय तथा भगवान बुद्ध लिच्छवी केँ वज्जी अर्थात् घुमक्कड़ नाम सँ सम्बोधन कएलैन्ह अछि ।

व्रात्य ब्राह्मणक अनुशासन मे आवद्ध नहि रहि वर्णाश्रमक आधार पर व्रात्य-ब्राह्मण, व्रात्य-क्षत्रिय, व्रात्य-वैश्य एवं व्रात्य-शुद्र मे विभक्त छलाह ।

प्रतीत होइछ जे बुकानन[५५] मगध मे जाहि धामिन, धानुष्क वा परेतिया ब्राह्मणक उल्लेख कएलैन्ह अछि सम्भवतः ओ ओहि प्राचीन व्रात्य-ब्राह्मणक वंशज होथि ।

---

४७ ३०-३२
४८ ५-२-१४
४९ ३०-५-२३
५० ३-४-१-१
५१ ८-६-२८
५२ संस्कृत इंगलिश कोष, पृ० १०४३
५३ अनुशासन पर्व
५४ १०-२०-२१-३२
५५ एन एकाउन्ट आफ दि डिस्ट्रीक्ट्स आफ विहार एण्ड पटना, पृ० ३२३

व्रात्यक प्रसंग मे ब्राह्मण ग्रन्थ मे खाहे जे किछु वर्णित हो सभ्यताक अत्यन्त आरम्भे सँ मगधक राजनीति एवं धर्म दुहु मे व्रात्यक प्रधानता तँ पाओले जाइत छल संगहि तत्कालीन उत्तर भारत व्रात्यक साहित्यिक भाषा, लिपि एवं गणतन्त्रक सिद्धान्त सँ नितान्त प्रभावित छल। उत्तरी अवधक शाक्य एवं मल्ल; उत्तरी बिहारक लिच्छवी तथा विदेह; पूर्वक अंग, पश्चिमक काशी तथा मध्य भारतक वार्हद्रथक सम्मिलित एवं संयुक्त गणतन्त्र प्राग्-वैदिक काल मे स्थापित भेल जे बुद्ध युग मे मगधक साम्राज्यवादी सिद्धान्तक एक पैघ प्रतिरोध छल।

वस्तुतः व्रात्यक लोकोत्तर व्यापक सिद्धान्त, साहित्य[५६] संस्कृति एवं लिपि सामान्यतः लौकिक भेला सन्ता ब्राह्मण द्वारा तिरस्कृत एवं उपेक्षित भेलहुँ समग्र मगध एवं पूर्वी देश मध्य प्रसारित भेल जकर स्पष्ट प्रभाव तत्कालीन एवं परवर्ती संस्कृत साहित्यहु मे पाओल जाइछ।

व्रात्यक लिपि केँ वर्त्तुल कहल जाइत छल। वार्त्तुलक[५७] अर्थ वृत-उलच, गोलाकार पदार्थ कएल गेल अछि। वर्त्तुल लिपिक प्रसंग मे पटनाक काशी प्रसाद जयसवाल अनुसंधान प्रतिष्ठान द्वारा प्रकाशित धर्मस्वामीक जीवनी मे डा० अ० स० अल्तेकरक भूमिका, पृ० ३ मे एवंक्रमेँ उल्लेख पाओल जाइछ—

"१२२६ ई० मे तिब्बत छोड़लाक पूर्व धर्मस्वामी अपन देश मे २२ वर्ष धरि प्रारम्भिक एवं उच्च शिक्षाक निमित्त निमग्न रहलाह। तदुपरान्त ओ लिपिक अध्ययन प्रारम्भ कएलैन्ह जाहि मे भारतक वर्त्तुल वा वैवर्त्तलिपि छल। तिब्बतीय संस्कृतक पाण्डुलिपि मध्य सुरक्षित एहि लिपिक अक्षरक आकार गोल पाओल गेल।" डा० अल्तेकर ओहि लिपि केँ "तत्कालीन बिहार मे प्रचलित मैथिली वा बंगलाक पूर्ववर्त्ती रूप मानलैन्ह अछि।"

उपर्युक्त विषयक एक पाण्डुलिपि पटना विश्वविद्यालयक सामाजशास्त्रक प्राध्यापक प्रो० हेतुकर झा जीकेँ छैन्ह।

५६ व्रात्यक भाषा केँ वाटुला (आप्टे कृत संस्कृत-अंग्रेजी कोष, पृ० १३९६) वा वर्तनी अर्थात् पूर्वी देश वा स्तोत्र (ओएह, पृ० १३९५) कहल जाइछ। मिथिलाक अन्तर्गत दरभंगा तथा सहरसा जिलाक मगहिया धानुक जाति जे अपना केँ मगधक पूर्वक बासी बुझैत अछि वर्णमाला केँ वर्तैन कहैछ। भोजपुरी भाषा मे वर्णमाला केँ वरतौना कहल जाइछ जे वाटुला वा वर्तनीक परिवर्त्तित आधुनिक रूप थिक।

५७ वाचस्पत्यम्, षष्ठ भाग, पृ० ४८५४

एहि पाण्डुलिपिक परिवेक्षण सँ प्रतीत होइछ जे यद्यपि ई लिपि उड़िया सँ मिलैत अछि किन्तु ई उड़िया नहि थिक। सम्भवतः ई लिपि आधुनिक मिथिलाक्षरक पूर्ववर्त्ती रूप थिक जाहि सँ वंगला, आसामी एवं उड़िया लिपिक उद्भव भेल। अतः लिपिक आकार एवं तालपत्रक परिवेक्षण सँ प्रतीत होइछ जे ई पाण्डुलिपि लगभग १२-१३म शताब्दीक थिक। लिपिक गोल-गोल अक्षर एवं डा० अल्तेकरक कथनानुसार तँ स्पष्ट बुझि पड़ैछ जे एहि पोथीक लिपि वस्तुतः वर्त्तुल वा वैवर्त्ते थिक।

पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा अपन प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भारतीय प्राचीन लिपि माला' (पृ० ६६) मे 'वट्टेलुत्तु' लिपिक उल्लेख कएलैन्ह अछि जकर अक्षर गोल होइत छल। एहि लिपिक प्रचार मद्रासक पश्चिमी तथा दक्षिणी भूभाग मे ई० सनक ७ म शताब्दीक अन्त धरि चोल पाण्ड्य आदि राजाक शिलालेख मे पाओल जाइछ जकर व्यवहार आब प्रायः अवरुद्ध अछि।

एहि प्रसंग मे कहल जा सकैछ जे बौद्ध एवं जैन धर्मक प्रचार उत्तर तथा दक्षिण दुहु भाग केँ एक दोसराक घनिष्ट सम्पर्क मे अनलक जे पश्चात् साहित्य, संस्कृति एवं आचार-विचारक आदान-प्रदान केँ तँ प्रभावित करबे कएल संगहि राजनीतियहु मे एक पैघ मोर अनलक। १५० ई०क महत्वाकांक्षी सातवाहन नरेश वासीष्ठपुत्र पुलुमावीक कृष्णा नदीक पार पन्नार क्षेत्र मे अपन साम्राज्य विस्तारक उपक्रम इतिहास विदित अछि। एवंक्रमेँ चालुक्य पुलकेसी द्वितीयक पराक्रमहु इतिहासक वस्तु थिक जे ओ हर्षक सेना केँ अपन क्षेत्र सँ भगौलैन्ह।

एवंक्रमक राजनैतिक उथल-पुथल प्रायः होइतहि रहैत छल। दसम शताब्दीक राजेन्द्र चोलक आगमन गंगा तक भेल छल तथा अधिकांश उत्तर भारत हुनकर साम्राज्य मे सम्मिलित छल।[५८] अतः वर्त्तुल लिपि जे ओहि युग मे पूर्ण प्रख्याति प्राप्त कएने छल सम्भवतः दक्षिण प्रान्तहु धरि अपन परिवर्त्तित रूप मे व्यवहृत भेल हो। अतएव 'वटेलुत्तु' वर्तुलहिक परिवर्त्तित रूप थिक जे भाषाक उच्चारणक अनुसार अपन वास्तविक नाम मे बिभिन्नताक बोध करबैत अछि।

५८ प्रोसीडिंग्स एण्ड ट्रांजेक्सन आफ दि थर्ड ओरियन्टल कान्फरेन्स, मद्रास, पृ० ३५८-३९९

एहि प्रसंग मे फलौधीक कुटिल लिपि[५९] जकरा श्री भंवर लाल नाहटा वि० सं० ८६४ क मानैत छथि पूर्णतः मिथिलाक्षर सँ मिलैत अछि।

महामहोपाध्याय डा० उमेश मिश्र[६०] तिरहुता वा मिथिलाक्षरक उद्भव प्राचीन मागधी सँ मानैत छथि।

मैथिली लिपिक आधुनिक स्वरूपक विकास सातम शताब्दी ई० मे पूर्णरूप सँ भेल तथा एहि लिपिक व्यवहार बिहार, बंगाल, उड़ीसा एवं आसाम प्रान्त मध्य होइत छल। कामरूपक महाराज भास्कर वर्माक निधनपुर ताम्रपत्र अभिलेखक अक्षर[६०*] तथा ११म शताब्दीक श्रीधर कायस्थक अन्धरा ठाढ़ीक प्रस्तर लेखक[६०†] अक्षर मे अत्यन्त साम्यता प्रतीत होइछ।

महाराज भास्कर वर्मा भारतीय इतिहासक गगण मध्य दीप्तिमान नक्षत्र रूप मे भासित छथि। ओ साम्राट हर्षक प्रिय मित्र छलाह जे सातम शताब्दीक पूर्वार्द्ध मे कामरूप पर शासन करैत छलाह। निधनपुर ताम्रपत्र मे महाराज भास्कर वर्माक द्वारा चन्द्रपुर विषयान्तर्गत ब्राह्मण कें भूमिदानक प्रसंग मे वर्णित अछि। चन्द्रपुर विषय वा चन्द्रपुरी छठम वा सातम शताब्दी ई० मे कामरूपक शासन मे छल। किन्तु १०म शताब्दी मे श्रीहट्ट मण्डलक चन्द्रपुर विषय पौण्ड्रवर्द्धन भुक्ति मे सम्मिलित भेल।

उपर्युक्त प्रसंगक संग सिलहटक साम्प्रदायिक वा वैदिक ब्राह्मणक विषय मे श्री कमलाकान्त गुप्त (कोपर प्लेट्स आफ सिलहट, लिपिक इन्टरप्राइड-जेल लि०, रशिदिस्तान, सिलहट द्वारा मुद्रित, पृ० ५६–६३) एहि तरहे उल्लेख करैत छथि :—

"एहि शाखाक ब्राह्मण जे अपना कें साम्प्रदायिक वा वैदिक ब्राह्मण कहैत छथि मिथिला सँ एतय अएलाह। अतएव हिनका मैथिल ब्राह्मण कहब उचित थिक। एहि शाखाक मैथिल ब्राह्मण जे सिलहट मे बसलाह ओ भारद्वाज, गौतम, कास्यप, कात्यायन, कृष्णात्रेय, मोद्गल्य, पराशर, स्वर्ण कौशिक, वत्स एवं वात्स्य गोत्रक छथि तथा अपना कें सिलहटक सभ सँ

---

५९ नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ४३, भाग १९, अँक २, पृ० २४९— फलौधी अर्थात् मेड़तारोड मारवाड़क सुप्रसिद्ध प्राचीन जैन तीर्थ स्थान थिक।

६० पंचदश-लोक भाषा निबंधावली, पृ० ५

६०* एपिग्राफिया इण्डिका, भाग १२ तथा १९

६०† ज० बि० रि० सो०, भा० ९, पृ० ३०२

प्राचीन ब्राह्मण मानैत छथि जे मुख्यतः श्रीहट्ट मण्डलक चन्द्रपुर विषयक अनन्तर बसल छथि। ओ लोकनि प्रधानतः पञ्चखण्डा परगन्ना (जाहि क्षेत्र सँ निधनपुर ताम्रपत्र उपलब्ध भेल) तथा ईटा परगन्ना (जाहि क्षेत्र सँ विक्रम-पुरक श्री चन्द्रक पश्चिमभाग ताम्रपत्र अभिलेख प्राप्त भेल) मे रहैत छथि। मैथिल ब्राह्मणक विवरण 'वैदिक संवादिनि' नामक ग्रन्थ मे पाओल जाइछ। एहि ग्रन्थक अनुसार एहि ब्राह्मणक सिलहट मे निवासक श्रेय त्रिपुराक दुइ राजा—(१) ७ म शताब्दीक आदिधर्मपा तथा (२) १२ म शताब्दीक धर्मधर केँ छैन्ह। वैदिक संवादिनिक अनुसार प्रथम भूमिदान ७ म शताब्दी मे पञ्चखण्डा क्षेत्र मे हुनका लोकनिक पुरखा केँ प्राप्त भेल। फलतः ओ लोकनि सिलहट जिलाक पञ्चखण्डा क्षेत्र मे बसलाह।

उपर्युक्त ग्रन्थक अनुसार दोसर भूमिदान वत्सगोत्रक निधिपति केँ मनुकुल प्रदेश मे १२ म शताब्दी मे प्राप्त भेल जे आधुनिक ईटा क्षेत्र मे पाओल जाइछ। फलस्वरूप ओहि क्षेत्र मे ओ लोकनि बसलाह।

वैदिक संवादिनिक कथनानुसार उक्त दुहु ताम्रपत्र ने तँ उपलब्धे अछि वा ने 'त्रिपुरा राजमाला' मे एकर कोनो चर्चे पाओल जाइछ। वैदिक संवादिनिक कथन तथा भास्कर वर्माक निधनपुर ताम्रपत्र अभिलेखक विषय-वस्तु मे अधिक साम्यता पाओल जाइछ। एवंक्रमे वैदिक संवादिनिक वर्णन तथा विक्रमपुरक महाराज श्रीचन्द्रक पश्चिमभाग ताम्रपत्र अभिलेषक विषयवस्तु मे सेहो साम्यता पाओल जाइछ। वस्तुतः वैदिक संवादिनिक रचना अनुश्रुतिक आधार पर भेला सन्ता इतिहासक तथ्य मे भ्रम होएब साधारण थिक।

उपर्युक्त प्रसंग मे ई कहब असंगत नहि होएत जे सिलहटक पूर्वी भागक हिन्दु अद्यावधि वाचस्पति मिश्रक मैथिल स्मृत सँ अनुशासित होइत छथि।"

अतएव ई स्पष्ट प्रतीत होइछ जे आसामी लिपि एवं भाषा मे मिथिलाक बड़ पैघ योगदान रहलैक अछि। एहि प्रसंग मे राय बहादुर के० एल० बरुआ कहैत छथि—"होएन्तसाँग ७ म शताब्दी मे कामरूपक भाषा तथा मगधक भाषा मे अल्प विभिन्नता पौलैन्ह। कामरूपक भाषा विशेषतः पूर्वी मैथिली थिक।" मैथिली एवं आसामी मे मात्र उच्चारणक विभिन्नता पाओल जाइछ तथा शब्द विन्यास मे बड़ समता अछि। जेना, पाँजर, वनिज, कमार, घिउ, अउँठी इत्यादि।[६०‡]

६०‡ जयकान्त मिश्र, ए हिस्ट्री आफ मैथिली लिटरेचर, भा० १, पृ० ५३

मैथिली एवं बंगला मे अधिक साम्यता पाओल जाइछ। दुहु भाषा एवं दुहु लिपि एकहि स्रोत मागधी सँ उद्भुत भेल तथा दुहुक एकहि संस्कृत मे लालन-पालन कएल गेल। खास कए मिथिलाक संस्कृति जे एतेक व्यापक छल तथा बंगाल सँ सतत् जिज्ञासु ज्ञानार्जनक निमित्त मिथिला अबैत छलाह सेकी मिथिलाक लिपि एवं लोक भाषा सँ नहि प्रभावित भेलाह ?

एहि प्रसंग मे महामहोपाध्याय डा० उमेश मिश्रक कथन जे ओ अपन ग्रन्थ "हिस्ट्री आफ इन्डियन फिलासफी, भाग २, पृ० ४१२–१३ मे रघुनाथ शिरोमणिक विषय मे लिखैत छथि, बड़ उपयोगी अछि—

"रघुनाथ सिलहटक (आसाम) एक नितान्त निधन मैथिल ब्राह्मणक वंश मे उत्पन्न भेलाह जतए हुनक पूर्वज श्रीधराचार्य ६४३ ई० मे मिथिला सँ आबि बसल छलाह। हुनक पिता गोविन्द चक्रवर्तीक निधन अल्पकाले मे भेल। फलतः रघुनाथ असहाय भए गेलाह। रघुनाथक भरण पोषणनक भार हुनक माता सीता देवी पर पड़ल जे अपन एकमात्र पुत्र कें पालन-पोषण मे अपना कें असमर्थ बुझि हुनक उपयुक्त शिक्षाक निमित्त नदिया अएलीह जतए ओहि समय धरि वासुदेव सार्वभौम एक टोलक स्थापना कए एक प्रख्यात नैयायिकक रूप मे प्रसिद्ध छलाह। रघुनाथ हुनक प्रिय शिष्य भए अपन शिक्षा ग्रहण करए लगलाह।'

ओहि समय मे मिथिलाक विद्वताक प्रख्याति समग्र भारतवर्ष मे प्रसारित छल। मिथिलाक तत्कालीन नैयायिक पक्षधर मिश्रक यश रघुनाथहु धरि पहुँचल। तदर्थ ओ मिथिलाक यात्रा कएलैन्ह तथा पक्षधर मिश्रक ओतए ज्ञानक जिज्ञासा मे अएलाह। पक्षधर मिश्र सँ ज्ञान प्राप्त कएलैन्ह जतए हुनका अपन आचार्यक द्वारा "शिरोमणिक" उपाधि प्राप्त भेलैन्ह। वासुदेव सार्वभौम सेहो पक्षधर मिश्रहिक शिष्य छलाह (ओएह, पृ० ३३५)।

उपर्युक्त कथन सँ निस्सृत होइछ जे बंगालक संस्कृत, साहित्य एवं लिपि पर मिथिलाक प्रभाव स्पष्ट रूप मे पाओल जाइछ जाहि सँ दुहुक लिपि एवं भाषा मे बड़ साम्य अछि।

मैथिली एवं उड़ियाक जहाँधरि सम्बन्ध छैक दुहु एकहि स्रोत मागधी सँ निस्सृत भेला सन्ता लिपि एवं भाषा दुहु मे साम्य प्रतीत होइछ। किन्तु उड़ीसा प्रधानतः आदिवासी क्षेत्र भेला सँ उड़िया भाषा मागधीक आन-आन उपभाषा सँ यद्यपि भिन्न बुझना जाइछ जाहि मे आदिवासीक भाषाक प्रभाव अधिक अछि तथापि मिथिलाक लिपि एवं भाषाक

प्रभाव उड़िया लिपि एवं भाषा पर पाओल जाइछ। एहि प्रसंग मे ई कहब अनुचित नहि होएत जे वासुदेव सार्वभौम जे मिथिलाक प्रसिद्ध नैयायिक पक्षधर मिश्रक शिष्य छलाह उड़ीसाक प्रतापरुद्रदेवक दरवार मे सेहो छलाह। अतएव उड़ीसाक साहित्य एवं संस्कृति मे मिथिलाक अवदान तँ अछिए संगहि उड़ीसा बिहारक संग रहला सँ एहि ठामक भाषा एवं लिपि सँ बड़ प्रभावित भेल।

लोकोत्तर भाषा एवं लिपि सन व्रात्य केँ अपन लोकोत्तर धर्म एवं जन विश्वासहु छलैक जे अनार्य उपादानक आर्यीकरणक उपरान्त उत्तर भारत मे पुराण-काल धरि पाओल जाइछ। द्विज जाति एवं ऊँच धर्म मे जे स्थान वैदिक यज्ञक छल सएह स्थान सामान्यतः जन साधारणक जीवन मे मह[६१]

६१ आदिम संस्कृतिक संकेत मह नामक उत्सव मे पाओल जाइछ। मह अनेक प्रकारक होइत छल जाहि मे धनुर्महक एक विशिष्ट स्थान छलैक। आदिम जाति मध्य धनुषक द्वारा बल परिचयक ई एकगोट प्रथा छल। एहि मे शिवक पूजा एवं शिव सँ सम्बद्ध धनुषक उत्सव होइत छलैक। हरिवंश मे (२-२२-९१; २-२६-४) कंसक द्वारा एहि उत्सवक आयोजनक वर्णन अछि जाहि मे कृष्ण एवं बलराम केँ ओ बजौने छलथिन्ह। हरिवंशक—

कस्यचित् त्वथ कालस्य मथुरायां महोत्सवम्।
पिनाकिनं समुद्दिश्य चक्रे कंसो नराधिपः॥

—२-१०१-६४

वाक्य मे उपर्युक्त प्रसंगक वर्णन पाओल जाइछ।

राज परिवार मे परम्परा सँ ओहि धनुषक रक्षा होइत छल। कंसक धनुष केँ दिव्य कहल गेल अछि (हरिवंश, २-२७-३२)। आकार मे ओ धनुष आन धनुष सँ पैघ छल। हरिवंश मे ओकरा स्तम्भ सन एवं महत कहल गेल अछि (२-२७-४४)। ओकरा राजकीय आयुधागारक समीपे एक विशेष स्थान मे राखल जाइत छल जकरा धनुर्गृह वा धनुःशाला कहल जाइत छल। ओकर रक्षाक निमित्त धनुःपाल नियुक्त रहैत छल।

एवंक्रमक कथाक सूत्र रामायणहु मे पाओल जाइछ। सीता स्वयंवरक अवसर पर राजा जनक जाहि धनुर्यज्ञ केँ कएलैन्ह ओ वस्तुतः 'धनुर्महे' छल। ओ धनुषरत्न जनकक पुरखा केँ मख मे देवताक द्वारा प्राप्त भेल छल—

'तद्धि पूर्वं नरश्रेष्ठ दत्तं सदसि दैवतैः।
अप्रमेयबलं घोरं मखे परम भास्वरम्॥

—बालकांड—३१-८

नामक उत्सवक छलैक। काशिकाक[६२] एक उदाहरण मे गंगाक एक पैघ मेला

ओहि अद्‌भुत धनुषक आरोपणे मुख्य पराक्रम छल। ओ देव देव शिवक धनुष छल (६६-८; ६६-१२)। जखन दक्षक यज्ञ मे देवता शिवक भाग नहि देल तखन क्रुद्ध भए शिव जाहि अस्त्र सँ देवताक गर्व कें चूर्ण कएलैन्ह से इएह शिव धनु छल (६६-१०)। रामायणहु मे ओकरा दिव्य धनुष कहल गेल अछि (६७-१४)। ई धनुष मिथिलाक राजाक घर मे वंशपरम्परा सँ अबैत छल। धूप-दीप-गंध सँ ओकर पूजा होइत छलैक। ओ "आयागभूत" छल। एकर तात्पर्य ई थिक जे धनुर्मह नामक उत्सव मे धनुषक द्वारा पराक्रमक परीक्षा होइत छल। कालक्रमें एहि प्रथाक संग कन्या-वरणक परिपाटीक प्रचलन सेहो सम्बद्ध कएल गेल। द्रौपदीक स्वयंवर मे धनुषक द्वारा लक्ष्य विशेषे सँ द्रौपदी कें प्राप्तिक प्रसंग प्रमुख छल।

एहि उत्सव मे शिव-पूजाक प्रचलन छलैक। वस्तुतः लोक धर्म एवं शास्त्रीय धर्म दुहु दृष्टिकोणे रुद्र-शिवक पूजा जतेक प्राचीन अछि ओ ओतबेक लोक व्यापी सेहो अछि। रुद्र-शिवक समन्वय भूत, पिशाच, यक्ष, महोरग, नाग, एवं किन्नर आदि अनेक छोट-छोट देवताक संग भेल तथा ओ सभ कें सभ कोनो ने कोनो रूप मे रुद्रक विशाल परिवारक अंग बनल।

शिव सम्भवतः शिवि जनक उपास्य देवता भेला सन्ता एहि नाम सँ प्रख्यात भेलाह। शिव भारतक प्राचीन द्रविड़क एक उपशाखा छल। तामील मे शिव शब्दक अर्थ जन कएल गेल अछि। शिविक उपास्यदेवक रूप मे शिवक पुष्टि एहु तथ्य सँ होइछ जे शिव कें कीकट सेहो कहल जाइत छल (लिंगपुराण, पूर्व भाग, २१-६८)।

शिवि सिन्धुक एहि पार झेलम (वितस्ता) सँ पश्चिमक भूभाग मे रहैत छल। एहि नामक एक अभिलेख शेरकोट मे प्राप्त भेल अछि (राहुल सांकृत्यायन, ऋग्वेदिक आर्य, पृ० २३)। अनु जे ऋग्वेदक पाँच प्रधान जन मे सँ एक छलाह आण देवताक उपासक छलाह। अनु के महाभारत मे म्लेच्छ जाति (आदिपर्व, ३५३३) कहल गेल अछि। आण शब्दक अर्थ ईश्वर कएल गेल अछि (रेभ० ऐच० हेरस, स्टडिज इन प्रोटो-ईन्डो मे० कल्चर, पृ० २८४)। शिव सेहो ईश्वरक नामे प्रख्यात भेलाह।

उपर्युक्त प्रसंग मे महाप्रलयक चर्चा समीचन बुझना जाइछ। महाप्रलयक नायकक विषय मे भिन्न-भिन्न प्रकारक मत अछि। किछ आधार पर मनु तथा किछ आधार पर सत्यव्रत कें ओकर नायकक रूप मे उल्लेख कएल जाइछ (ओएह, पृ० ४१४)। सत्यव्रतक नाम

केँ गंगामह कहल गेल अछि। एहि तरहक मेला उत्तर भारतक गंगाकात मे औखन लगैत अछि। सम्भवतः मिथिलाक "मकर' शब्द एहि शब्दक परिवर्त्तित रूप थिक।

मह शब्द यद्यपि संस्कृतहु मे प्रयुक्त भेल अछि किन्तु ओकर मूल वैदिक शब्द मख प्रतीत होइछ। हरिवंशक[६३] कतिपय हस्तलेख मे 'मख' एवं 'मह' दुहु पाठान्तर उपलब्ध होइछ किन्तु मह शब्दे एहि अर्थ मे अधिक प्रचलित

व्रत सँ सम्बद्ध पाओल जाइछ जनिकर प्रधान देवता एक व्रात्य तथा उपासक मागध कहबैत छल (अथर्व० १५-२-१४)। अथर्ववेद एक व्रात्यक सात आकारक वर्णन करैत अछि जाहि मे रुद्र, महादेव, तथा पशुपतिशिवक रूप छथि (अथर्व० १५-५)। अतएव शिवक सम्बन्ध द्रविड़ जाति सँ छलैन्ह जे पश्चात् आर्यक प्रबल देवताक रूप मे मान्य भेलाह।

शिवक माथक जटा, हाथक धनुष-वाण, शरीरक साँप एवं चर्मक परिधानो तँ उपर्युक्ते मतक पुष्टि करैछ।

साधारणतः लोक अपन विश्वास एवं पूजा पद्धति तथा उत्सव केँ नहि बिसरैत अछि। ओ परिवर्त्तित एवं परिमार्जित भए कोनहु ने कोनहु रूप मे रहिते छैक। धनुर्मह एवं आन-आन मह सेहो अपन परिवर्त्तित एवं परिमार्जित रूप मे अद्यावधि पाओल जाइछ।

हरिवंश (२-१६-१) मे गिरि महक वर्णन पाओल जाइछ। एहि अवसर पर गिरि, गाय एवं आन-आन पशुक पूजा विधिवत होइत छल। एहितरहक उत्सवक प्रचलन अहुखन पाओल जाइछ। प्रत्येक वर्ष कात्तिक अमावस्या केँ गोवरधन पूजा प्रायः प्रत्येक गृहस्थक घर मे होइत अछि। गाय, महिषिक विधिवत पूजा होइछ तथा संध्याकाल सुगरक हूड़ गाय-महिषि केँ देल जाइछ। हूड़क उपरान्त कुश्तीक द्वारा शक्तिक परीक्षा लेल जाइछ। की एहि उत्सव सँ प्राचीन धनुर्मह एवं गिरि महक समता नहि होइछ?

मह यद्यपि भारतक आदिम जातिए मध्य प्रचलित छल किन्तु ओ क्रमशः समस्त लोक मध्य व्याप्त भए विविध रूप मे परिलक्षित पाओल जाइछ। मिथिलाक सौराठक मैथिल ब्राह्मणक सभाक प्रारम्भिक उद्देश्य शास्त्र चर्चा छल किन्तु क्रमशः ओ अपन लक्ष्य सँ पृथक भए आब मात्र वर-कन्याक विवाह निश्चित करबेटाक निमित्त होइछ। सम्भवतः एहि सभाक उद्भवक श्रेय "महे" केँ होए। सभा-स्थलक नामो तँ स्वराष्ट्रक द्योतक थिक।

६२ ५-१-१०९

६३ हरि०, २-१५-५

छल। हरिवंश मे कृष्ण द्वारा गोवर्द्धन उठेबाक लीला के गिरिमह एवं गिरि यज्ञ—'स्थितः[६४] शक्रमहस्तात श्रीमान् गिरिमहस्त्वयं' एवं 'तन्मह्यम्[६५] रोचते गोपा गिरियज्ञः प्रवर्तताम्' आदि रूप मे कहल गेल अछि। एहि प्रसंग मे स्पष्ट उल्लेख अछि जे ब्राह्मण जहिना मन्त्र सँ यज्ञ करैत छथि तहिना गृहस्थ्य 'हर' सँ सीता यज्ञ तथा गोप गोपालन सँ गिरियज्ञ करैत छलाह जकर निम्न श्लोक सँ पुष्टि होइछ—

मंत्रयज्ञपरा विप्राः सीतायज्ञाश्च कर्षुकाः।
गिरियज्ञास्तथा गोपा इज्योऽस्माभिगिरिर्वने ॥

—हरि० २-१६-६

एहि प्रकारेँ मह वा उत्सवक नाम प्राचीन साहित्य मे सेहो पाओल जाइछ। जैन ग्रन्थ णायाधम्मकहाक (ज्ञाता धर्म कथा) मे महक एवंक्रमेँ उल्लेख पाओल जाइछ—

(१) इंदमह—इन्द्रमह
(२) खंदमह—स्कन्दमह
(३) रुद्रजत्ता—रुद्रयात्रा
(४) सिवजत्ता—शिवयात्रा
(५) वेसमणजत्ता—वैश्रवण यात्रा
(६) नाग जत्ता—नागयात्रा
(७) गिरिजत्ता—गिरियात्रा

रायपसेणिय सुत्त एक दोसर जैन ग्रन्थ मध्य तँ एहि तरहक अनेक नाम वर्णित अछि। एकर अतिरिक्त दुई गोट आन सूची—(१) सुत्तनिपातक निद्देस नामक व्याख्या मध्य तथा (२) मिलिन्द पण्ह नामक बौद्धग्रन्थ मे सेहो पाओल जाइछ। निद्देस मे एहि देवताक पूजार्थी केँ व्रतिक (पालि—वतिक) कहल गेल अछि—

(१) हत्थि वतिक
(२) गोवतिक
(३) कुक्कुर वतिक
(४) वासुदेव वतिक
(५) असुरवतिक
(६) देववतिक
(७) इन्दवतिक
(८) यक्खवतिक

---

६४ ओएह, २.१७.११
६५ ओएह, २.१६.१०

मिलिन्द पण्ह[६६] मे एहि देवता कें माननिहार आचार्यक अनुयायी कें गण कहल गेल अछि जकर नाम पब्वता, पिसाचा (पिसाचगण), सिवा (शिवक गण) आदि छल।

उपर्युक्त प्रसंगक संकेत मिथिला मे उपहासार्थ व्यवहृत—महादेवक गण, भूतक गण एवं देवताक गण आदि नाम मे पाओल जाइछ।

मज्झिमनिकाय[६७] मे गोव्रत एवं कुक्कुरव्रतक विशेष उल्लेख आएल अछि। गोव्रतक अनुयायी अपन माँथ मे सींघ बाँधैत छल तथा गायक संग घास चरैत घुमैत छल। एवंक्रमें कुक्कुर व्रतधारी अपन सभ आचरण कुक्कुर सन करैत छल।

एहितरहें लोकदेवताक विश्वास कें व्रत तथा विश्वासी कें व्रतिक कहल जाइत छल। एहि लोकदेवताक परम्पराक उल्लेख गीता मध्य सेहो पाओल जाइछ। अहू मे एहि हेतु 'व्रत' शब्द प्रयुक्त भेल अछि—

यान्ति देवव्रता देवान् पितृन् यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्या जिनोऽपि माम॥

—६-२३

एहि देवताक व्रत केनहार व्रतिक कें तथा मह वा उत्सवक रूप मे देव स्थानक यात्रा केनहार कें गीताकार भगवानक विभूति एवं नाना रूप कहि समन्वय कएलैन्ह अछि।

अतः व्रत एवं व्रतिक शब्द तथा एहि सँ सम्बन्धित देवताक नाम आदिक प्रसंगक उपर्युक्त वर्णन सँ स्पष्ट होइछ जे ई सभ व्रात्यहि सँ सम्बन्धित लोकधर्म छल जे समस्त बिहार प्रान्त एवं उत्तर भारत मे प्रचलित छलैक।

व्रात्य भाषाक दिग्दर्शन वाल्मीकि रामायण मे अनेक स्थल मे उपलब्ध अछि। वस्तुतः रामायण ओहि समय मे प्रचलित लोक भाषा मे लिखल गेल जे एहेन प्रारूप प्रस्तुत कएलक जाहि सँ परवर्ती कविगण श्लाघनीय प्रेरणा ग्रहण करैत रहलाह।

रामायणक अवलोकन एवं परिवेक्षण सँ प्रतीत होइछ जे वाल्मीकि ओहि युग मे चारण एवं गबैयाक द्वारा प्रचलित गीत कें जे इक्ष्वाकु वंशक

६६ मिलिन्द०, पृ० १९० (वाडेकर सं०)
६७ मज्झिम०, भाग ३, पृ० १००

महान पराक्रमी पुरुषक प्रसंग मे पाओल जाइत छल, नवीन छन्द एवं लौकिक संस्कृत मे परिष्कृत एवं सुनियोजित रूपेँ प्रस्तुत कएलैन्ह ।

रामायण मुख्यतः एक आख्यान थिक जे संस्कृतक लोक साहित्यक श्रेणी मे अबैत अछि । रामायण मे जीवनक अभिव्यक्ति, विश्लेषण, महत्ताक प्रतिपादन एवं सजीवीकरणक अतिरिक्त नैतिकता तथा सुंदरताक अनुपम समन्वय पाओल जाइछ । वेदक पुरातनवाद, ब्राह्मणक रहस्यवाद, उपनिषदक अध्यात्मवाद एवं सूत्रक संक्षेपत्वादक अनन्तर रामायण मे सुवोध कथा प्रवाह, भावक मार्मिक प्रकाशन तथा संगीतक चारू निदर्शनक मनोरम समावेश कएल गेल अछि जे सामान्यतः जन साधारणक निमित्त रचल गेल ।

वस्तुतः भाषाक अर्थ मे 'संस्कृत' शब्दक सर्वप्रथम प्रयोग वाल्मीकि रामायणे मे कएल गेल जतए भाषा केँ 'संस्कृता' वा 'संस्कृतम्' कहल गेल अछि । टीकाकार 'संस्कृताक' अर्थ व्याकरण-संस्कार-युक्ता (व्याकरणक नियम सँ शुद्ध) कएलैन्ह अछि । सुन्दर काण्ड मे प्रहस्तक भाषण केँ 'सुसंस्कृत, तर्कपुष्ट एवं सार्थक' (संस्कृतं हेतु सम्पन्नमर्थवच्य) कहल गेल अछि । युद्ध काण्ड मे ब्रह्मा सुसंस्कृत, मधुर, विनम्र, हितकारी एवं धर्मानुकूल शब्द मे रामक संवोधन (संस्कृत मधुरं श्लक्ष्णमर्थवद्धर्मसंहितम्) कएलैन्ह ।

व्याकरणक दृष्टि सँ शुद्ध एवं परिष्कृत संस्कृत विशेषतः समाजक शिष्ट तथा शिक्षित वर्गहि मध्य प्रचलित छल । रामायणकाल मे भाषाक किछु आनो रूप जन साधारण मध्य व्याप्त छल जकरा मे व्याकरणक दृष्टि सँ त्रुटि एवं स्थानीय विशेषता रहैत छलैक । रामायण मध्य एहि शुद्ध तथा ग्राम्य रूपक कतिपय संकेत प्राप्त होइछ । विभीषण रावणक सभा मे जे भाषण देलैन्ह ओ ग्राम्य दोष सँ मुक्त एवं सार्थकता सँ परिपूर्ण छल (वाक्यम ग्राम्यपदवत् पुष्कलार्थं विभीषणः, ६-३७-६)। मुनिवर भरद्वाजक वाणी उच्चारण तथा स्वरक दृष्टि सँ निर्दोष छल (शिक्षास्वरसमायुक्तं सुव्रतश्चाब्रवीन्मुनिः, २-९१-२२)। जखन राम केँ हनुमान सुग्रीवक संदेश सुनौलथिन्ह तखन राम हनुमानक भाषाक शुद्धता सँ बड़ विस्मित भेलाह तथा ओ ई अनुमान कएलैन्ह जे अवश्ये हनुमान वेद एवं सम्पूर्ण व्याकरण शास्त्रक स्वाध्याय कएने होएताह ।[६८]

६८ ४.३.२८-२९

एहि सँ ई तात्पर्य थिक जे वेद पाठी तथा व्याकरण ज्ञाता वर्ग अन्य वर्गक अपेक्षा अधिक शुद्ध एवं सुसंस्कृत भाषाक प्रयोग करैत छलाह किन्तु अल्प शिक्षित वर्गक निमित्त ओहि युग मे एक पृथक भाषा अवश्य छलैक।

लंका मे सीताक दर्शन भेला पर हनुमानक मोन मे कतिपय संकल्प विकल्प उठल जे ओ सीता सँ कोन भाषा मे वार्त्तालाप करथि। अन्त मे ओ एहि निर्णय पर पहुँचलाह जे हुनकासन लघु आकार बानर केँ मानवी संस्कृते एहि हेतु उपयुक्त होएत। जँ द्विज जाति सदृश संस्कृत भाषा मे ओ सीता सँ वार्त्तालाप करितथि तँ सीता केँ रावणक छलक भ्रम होएतैन्ह। अतः ओ साधारण मानवी भाषे मे वार्त्तालाप कए अनिंदिता सीता केँ आश्वस्त कए सकलाह।[६९]

उपर्युक्त कथन मे हनुमान रामायणकाल मे प्रचलित तीन प्रकारक भाषाक स्पष्ट संकेत कएलैन्ह अछि—(१) मानुषी संस्कृत—जन साधारणक सामान्य भाषा, (२) द्विज जातिक संस्कृत—शिष्ट ब्राह्मणक भाषा तथा (३) बानर संस्कृत जे अपभ्रंशक दक्षिणी रूप छल। आर्यक हेतु 'वानरी संस्कृत' दुर्बोध छल। फलतः वानरक द्वारा कएल गेल मधुवन-भंग प्रसंगक वर्णन जे दधिमुख सुग्रीवक समक्ष कएलैन्ह तकरा लक्ष्मण नहि बुझि सकलथिन्ह।[७०]

रामायणक भाषा यद्यपि ओहि युगक लौकिक संस्कृत छल किन्तु एहि मे व्रात्य-भाषाक स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होइछ। रामायण मे एहेन अनेक शब्द अछि जे सामान्यतः संस्कृत मे प्रयुक्त नहि होइत छल वा जँ होएतहुँ छल तँ ओकर अर्थ भिन्न होइत छलैक।

रामायणक एहि श्लोक—

लोभात्पापानि कुर्वाणः कामाद्वा यो न बुध्यते।
हृष्टः पश्यति तस्यान्तं ब्राह्मणी करकादिव॥

—३-२९-५

मे वर्णित ब्राह्मणी एवं करक शब्दक अर्थ अपन स्वाभाविक रूप मे नहि भए क्रमशः 'रक्तपुच्छिका' एवं विष कएल गेल अछि। रक्तपुच्छिका (गिरगिट) केँ भोजपुरी मे बह्मनी कहल जाइछ।

६९ ५.३०.१७-९
७० ५.६३.१४

एवंक्रमे —

अहं वास्य रणे मृत्युरेषवा समरे मम।
विनिवर्त्य रणोत्साहं मूहूर्तं प्राश्निको भव ॥

—३-१२७-४

श्लोक मे वर्णित 'प्राश्निक' शब्दक साधारण अर्थ प्रश्नकर्त्ता नहि भए 'मध्यस्थः' एवं उभय युद्धसाक्षीत्यर्थः कएल गेल अधि।

पुनि एहि श्लोकक—

'यदन्तरं सिंहसृगालयोर्वने यदन्तरं स्यन्दनिका समुद्रयो।'

—३-१४७-४५

'स्यन्दनिका' शब्दक अर्थ क्षुद्रनदी तथा—

तच्चाग्नि सदृशं दीप्तं रावणस्यशरावरम्।
पक्षाभ्यां च महातेजा व्यधुनोत्पतगेश्वरः ॥

३-५१-१४

मे वर्णित "शरावर" शब्दक प्रयोग कवचक अर्थ मे कएल गेल अछि। पुनि एहि श्लोक—

पद्म सौगन्धिकैस्ताम्रां शुक्लां कुमुदमण्डलैः।
नीलां कुवलयोद्घाटैर्बहुवर्णां कुथामिव ॥

—३-७५-२०

मे वर्णित उद्घाट तथा कुथा शब्दक अर्थ क्रमशः समूह एवं गजस्तरण चित्त कम्बलः कएल गेल अछि। एहि तरहेँ निम्नलिखित श्लोकक—

अर्चितं सर्वलोकस्य सपताकं सवेदिकम्।
नागहेतोः सुपर्णेन चैत्यमुन्मथितं यथा ॥

४-१६-२४

'चैत्य' शब्दक अर्थ स्तुप नहि भए चतुष्पथवर्तिवल्मीकमूक निमित्त प्रयुक्त भेल अछि। एहिना वंश (६-१०६-१०) शब्दक अर्थ पृष्ठावयव (रीढ़), कालिकाक (६-२२-२१) अर्थ मेघजाल कएल गेल अछि।

रामायण मे वर्णित एहि तरहक अनेक शब्द आछ जकरा संस्कृत सँ ने तँ कोनहुटा सामञ्जस्ये छैक वा ने संस्कृतक संग कोनो सम्पर्के स्थापित कएल जा सकैछ।

संस्कृत व्याकरण मे—अगय (दैत्य), आकासिय (पर्याप्त), इराव (हस्ती), ईस (कीलक), तोमरी (लता), ऊसअ (उपधान) कंद्दो (कुमुद), सयराह (शीघ्र) आदि शब्द के उणादि द्वारा अनुशासित भेला सन्ता देशी कहल गेल अछि ।

प्रतीत होइछ जे एहि तरहक शब्द स्थानीय विशेषताक आधार पर विकसित भेल तथा उन्नत भाषा सँ निस्सृत भेला सँ ध्वनि परिवर्त्तन एवं प्रयोग विशेषक कारणे देशी मानल गेल। देशीनाम माला मे ३६७८ शब्द संगृहीत अछि। एहि कोश मे अनेक एहेन शब्द अछि जकरा संस्कृतक शब्द सँ कोनहुटा सम्बन्ध नहि भए ठेठ मैथिली शब्द सँ सम्बन्धित अछि जेना—चूल्हा,[७१] ढेकी,[७२] मामी[७३], ओज्झरी,[७४] काहार,[७५] कोइला[७६] गोबर,[७७] झंखर,[७८] इत्यादि। आचार्य हेमचन्द्र अपन ग्रन्थ देशीनाममाला मे जाहि शब्द केँ देशी कहलैन्ह अछि ओकरहि पुनि तद्भव मानलैन्ह अछि। उदाहरणक निमित्त अमयणिग्गमो शब्द चन्द्रमाक अर्थ मे प्रयुक्त भेल अछि जे संस्कृतक अमृत निर्गम सँ निष्पन्न भेल। एवंक्रमेँ डोला, हलुअ, थेरो, आदि शब्द देशीनाममाला मे देशी तथा प्राकृत व्याकरण मे संस्कृत निष्पन्न मानल गेल अछि।

एहि तरहेँ धनपाल 'पाइअलच्छी-नाममालाक' अंतिम प्रशस्ति—'नामम्मि जस्स कमसो तेणेसा विरइया देसी' मे एहि ग्रन्थ केँ देशी शब्दक कोष कहलैन्ह अछि। किन्तु एहि कोष मे तत्सम एवं तद्भव शब्दक आधिक्य पाओल जाइछ। आरम्भक—

कमलासणो सयंभु पिआमहो चउमुहोय परमिट्ठी ।
थेरो विही विरिंचो पयावई कमलजोणोय ॥

---

७१ १-८७
७२ ४-१५
७३ ६-११२
७४ १-१५७
७५ २-२७
७६ २-४९
७७ २-९६
७८ ३-५४

वाक्य मे ब्रह्माक नामक उल्लेख करैत कमलासण, सयंभु, पिआमह, चउमुह, परमिट्ठी, थेर, विही, विरिंच, पयावई एवं कमलजोणी ई जे दसो नाम गनौलैन्ह ओ सभ के सभ तद्भव थिक।

आचार्य हेमचन्द्र अपना सँ पूर्वक देशी कोष रचयिताक उल्लेख कएने छथि। अभिमान चिन्ह सूत्र रूप मे तथा गोपाल श्लोक रूप मे देशी कोषक रचना कएलैन्ह। देवराज एक छन्द सम्बन्धी कोषक रचना कएल जाहि मे प्राकृतक देशी शब्दक अर्थ प्राकृत भाषे मे लिखल गेल। देशीनाम मालाक अनुसार द्रोण, पादलिप्ताचार्य, राहुलक एवं शीलाङ्क आदि पूर्ववर्ती देशी भाषाक कोषकार छलाह। अतएव स्पष्ट अछि जे प्राकृत भाषाक देशी शब्द अपन महत्वपूर्ण स्थिति बनौने छल तथा एहि शब्दक प्रयोग प्रारम्भहि सँ होइत आ.ल अछि।

संस्कृत एवं प्राकृत भाषा मे द्रविड़, मुण्डा, संथाल आदि शब्दहुक मिश्रण भेल जाहि सँ भाषा मध्य भेद-भावक दिग्दर्शन होइछ। एहि प्रसंग मे ग्रियर्सनक विचार नितान्त महत्वपूर्ण अछि जनिका अनुसार भारतीय भाषा दुइ वर्ग मे विभक्त पाओल जाइछ—(१) बाह्य तथा (२) आभ्यन्तर। उत्तर, पश्चिम, दक्षिण एवं पूर्वक भाषा मे किछु एहेन समानता अछि जे मध्य आर्यावर्तक भाषाक अपेक्षा विलक्षणता रखैत अछि। एकर कारण ग्रियर्सनक अनुमान सँ ई थिक जे पूर्वकाल मे आएल आर्य जे मध्य प्रदेश मे बसल छलाह हुनका पाछाँ जे आर्य आएल ओ ओतए सँ विस्थापित कए देल। फलतः भाषा मे मूलतः दुइ वर्ग उत्पन्न भए गेल। उदाहरणक रूप मे महाराष्ट्र प्रदेशक नाम जेना—गोखले, खरे, मुंजे, गोडवोले तथा लंका मे प्रचलित नाम जेना—गुणतिलके, सेनानायके, वंदरनायके मे जे अकारान्त कर्त्ता कारक एक वचन मे "ए" प्रत्यय पाओल जाइछ सएह मागधी प्राकृतक प्रवृत्तिक बोधक थिक। पश्चात् आएल आर्यक भाषा छान्दस छल। अतएव ई मानब तर्कसंगत थिक जे ई० पूर्व ६०० मे प्राकृत भाषा मे भेद-प्रभेदक विकास नहि भेल छल तथा समग्र उत्तर भारत मध्य एके भाषा समान जन मध्य प्रचलित छल।

रामायणक भाषाक प्रसंग मे कहल जा सकैछ जे तत्कालीन बिहारक जन-भाषाक प्रभाव एहि मे विशेष रूप मे पाओल जाइछ। रामायण मे बाल्मीकि केँ राजा जनकक परम मित्र कहल गेल अछि। मात्र एहि निमित्त

राम लक्ष्मण केँ सीता केँ बाल्मीकि आश्रमक निकट छोड़बाक आदेश देलथिन्ह।[७९]

बाल्मीकिक आश्रम तमसा, गंडकी तथा स्वर्णरेखाक संगम पर छलैन्ह जकर पहचान बिहार प्रान्तक चम्पारण जिलाक आधुनिक भैंसालोटन सँ कएल जाइछ। ओतहि सीता शरणागत भेल छलीह। लव-कुशक जन्मो ओतहि भेल छल तथा महर्षि बाल्मीकि अपन प्रसिद्ध रामायण केँ ओतहि लिखने छलाह। अतएव रामायणक भाषा मे तत्कालीन उत्तर विहारक लोक भाषाक प्रभाव जे व्रात्य भाषाक नाम सँ ओहि समय विख्यात छल परिलक्षित होइत अछि।

अतः कालक्रमे संस्कृत जे एक समय जन भाषा छल अपन लोक-प्रियता केँ छोड़ि देल तथा ओकर आसन एक संस्कृत मिश्रित जन भाषा ग्रहण कएलक। स्वतः बाल्मीकि अध्ययनक प्रसंगक विषय मध्य काव्य, आख्यान, पुराण एवं इतिहासक संग व्यामिश्रकक[८०] उल्लेख करैत छथि।

व्यामिश्रित भाषा केँ व्यामिश्रक कहल जाइत छल। ई भाषा असंस्कृत एवं व्याकरणक दृष्टिए अशुद्ध रहैत छलैक। ईसक प्रथम एवं दोसर शताब्दीक मध्य धरि एहि भाषाक प्रचलन छल। व्यामिश्रित भाषाक ग्रन्थ मध्य महावस्तु एवं ललितविस्तरक प्रमुख स्थान पाओल जाइछ। एहि ग्रन्थक भाषा केँ किओ तँ गाथा संस्कृत, किओ मिश्र संस्कृत वा बौद्ध संस्कृत कहैत छथि। प्रो० एजर्टन महोदय एहि भाषा केँ बौद्ध संकर-संस्कृत नामकरण कएने छथि। प्रो० एजर्टनक अनुसार एहि तरहक भाषा मध्य देशक एक प्राचीन सामान्य भाषा छल।[८१] एहि दुहु ग्रन्थक शब्द मूलतः मध्य देशीय[८२] थिक जकर अर्थ संस्कृत मे भिन्न होइत छैक।

ललितविस्तर मे वर्णित किछु शब्द प्रस्तुत कएल जाइछ जे मैथिलीक आदिकालक रूप सँ अत्यधिक साम्य प्रतीत होइछ—

शब्द		संस्कृत रूप
नाच	—	नच
ते	—	ता
धरेन्ति	—	धारयन्ति

७९ ८-४७-१५—७

८० ७-१-२७

८१ हैब्रीड संस्कृत टेक्स्ट

८२ नेपाल मे बिहार प्रान्तक निबासी केँ ओखन मधेशिया कहल जाइछ।

प्रमद	—	प्रमदा
अपसरा	—	अपसरस:
नृपति	—	नृपते
रातिये	—	रत्याः
नारियर	—	नार्य्या
वजिरिकाय	—	वज्रकाय
भोति	—	भवति
भवि	—	भविष्यति
यथ	—	यथा
देभि	—	ददाभि
आसि	—	अस्ति
उपेन्ति	—	उपयन्ति

महावस्तुक रचना ई० पूर्व २०० मे भेल।[८३] ललितविस्तरक प्रसंग मे कहल जाइछ जे एहि ग्रन्थक चीनी अनुवाद ईसाक प्रथम शताब्दी मे भेल। ललितविस्तरक रचना कालक प्रसंग मे यद्यपि विभिन्न मत अछि तथापि एहि ग्रन्थक संस्कृत सँ शुद्ध तिब्बतीय अनुवाद पाँचवीं शताब्दी मे भेल।[८४]

महावस्तु एवं ललितविस्तरक भाषा मे उत्तरी बिहारक तत्कालीन भाषाक समावेश अधिक मात्रा मे कएल गेल। ललितविस्तरक[८५] अनुसार बोधिसत्त्वक जन्म मध्य देश मे भेल। डा० राजेन्द्रलाल मित्र विन्ध्य सँ हिमालयक तथा बिहार सँ पंजाब धरिक भू भाग केँ मध्यप्रदेश कहैत छथि।[८६]

एवंक्रमेँ १०००—६०० ई० पूर्वक काल मे जाहि मे ब्राह्मण ग्रन्थक रचना भेल साहित्य मध्य एक नवीन प्रणालीक उद्गम भेल जे वैदिक भाषाक समानान्तर एक जन-भाषा केँ विकसित कए प्राकृतक नामे प्रख्यात कएल। जन-भाषाक विशुद्ध शब्द जेना विकट, कीकट, निकट, दण्ड, अण्ड, पठ, घट, जकर वास्तविक वैदिक रूप क्रमशः विकृत, किंकृत, निकृत, दन्द्र, अन्द्र, पथ

८३ आचार्य नरेन्द्रदेव, बौद्धधर्म दर्शन, पृ० १२८
८४ ओएह, पृ० १३३
८५ ओएह, पृ० ३७
८६ ल० वि० अ० अ०, पृ० ५२

छल। एवंक्रमक शब्दक रूप वस्तुतः प्राकृत वा देशी छल जे समयानुसार संस्कृत भाषा मे मिश्रित भेल।

महाकवि कालिदासक ग्रन्थ मध्य सेहो कतिपय एहेन शब्द पाओल जाइछ जे अनेकार्थ रूप मे प्रयुक्त भेल अछि। ओ देशी शब्द थिक। उदाहरणक निमित्त शेषा शब्दक अर्थ कतहु तँ अवशिष्टार्थक[८७] अछि और कतहु आदेशाथक।[८८] एवंक्रमें प्रसिद्ध शब्दहु एक दुरुहार्थ शब्द थिक। संस्कृत कोष मे एकर दुइ अर्थ पाओल जाइछ 'विख्यात' एवं 'भूषित'। महाकवि प्रसिद्ध शब्दक प्रयोग अपन सम्पूर्ण ग्रन्थ मे केवल चारि स्थान मे कएलैन्ह अछि जे भूषित अर्थ मे तीन स्थल मे तथा शेष एक स्थलक प्रयोग अप्राप्त अर्थ मे कएल गेल अछि।[८९]

महाकविक ग्रन्थ मे कतिपय शब्द एहेन अछि जकर अर्थ प्रचलित अर्थ सँ सर्वथा भिन्न अछि। जेना धाराक अर्थ मे मुख,[९०] ऐश्वर्य वा भूतिक अर्थ मे भाव,[९१] कारणक अर्थ मे प्रत्यय[९२] शरीरक अबयवक अर्थ मे विशेष[९३] नामक अर्थ मे वर्ण तथा लक्षण[९४] आदि उदाहरणार्थ प्रस्तुत कएल जाइछ।

एवंक्रमें देशी भाषा पुराणहु मध्य मिश्रित भए संस्कृत पर अपन प्रभाव स्थापित कएल।

पुराणक भाषा व्यवहारिक पाओल जाइछ। फलतः ओ पाणिनिक व्याकरणक बन्धन कें अक्षरशः स्वीकार नहि करैछ। पुराण भाषाक समता ओहि पुण्य सलिला भागीरथीक संग कएल जा सकैछ जे अपन मूल प्रवाह पर आग्रह रखैत इतस्ततः सँ आएल जल धाराक तिरस्कार नहि करैछ, प्रत्युत ओ ओकरा अपना मे सम्मिलित कए गन्तव्य स्थान तक पहुँचाबैछ। पौराणिक देववाणीयहुक सएह विशिष्टता अछि। ओ अपना कें पाणिनिक

---

८७ त्रिभाग शेषासु निशासु च क्षणं निमील्य नेत्रे सहसाव्यबुध्यत, कु० ५-५७
८८ तथेति शेषामिव भर्तुराज्ञमादायमूर्ध्ना मदनः प्रतस्थे, कु०-३-२२
८९ यथा प्रसिद्धैर्मधुरं शिरोरुहैर्जटाभिरप्येवमभूत्तदाननम् (कुमार० ५-९) तथा तदाननश्रीरलकैः प्रसिद्धैश्चिच्छेद सादृश्यकथाप्रसङ्गम् (कुमार० ७-१६)
९० रघु०, १९-५६
९१ ओएह, १९-५७
९२ कुमार० ३-१८
९३ ओएह, १-२५
९४ ओएह, ५-४६

व्याकरणक गाढ़ शृंखला मे बाँधब पसन्द नहि करैछ प्रत्युत किछु उन्मुक्त भए तद्भिन्न शब्द तथा शब्द रूपहुकें ग्रहण करबा मे संकोच नहि करैछ। अतएव पुराणक भाषा मे अपाणिनीय प्रयोग बहुलता सँ उपलब्ध होइछ जकरा टीकाकार आर्ष प्रयोग मनैत छथि। महर्षि पाणिनि 'सम्बुद्धो शाकलस्येताबनार्षे'[९५] आदि सूत्र मे अनार्ष शब्दक प्रयोग वेद सँ भिन्न ग्रन्थक निमित्त कएलैन्ह अछि। फलतः आर्ष पदक प्रयोग वेदक भाषाक निमित्त मानब पाणिनिक सम्मति प्रतीत होइछ। पुराण मे आर्ष प्रयोगक सत्ता अछि जे वैदिक व्याकरणक सर्वथा अनुकूल अछि। जेना भागवत मे 'भस्मनि हुतम्'क स्थान पर 'भस्मन् हुतम'[९६] 'प्रतिहर्तुम्'क स्थान पर 'प्रतिहर्तवे,[९७] तथा धीमहि एवं अभिधीमहि आदि प्रयोग निश्चय रूपें वैदिक प्रक्रिया सँ सुसंगत आर्ष प्रयोग थिक। एकर अतिरिक्त अनेक प्रयोग पालि एवं प्राकृत सँ साम्य अछि।

पुराण मे अनेक अपाणिनीय प्रयोग पाओल जाइछ जे छन्दक अनुरोधे सँ ओहि रूप मे प्रयुक्त अछि। पाणिनिक व्याकरण-सम्मत प्रयोग कएला पर छन्दक सर्वथा भंग तथा परिहार भए जाइछ। काव्य शिक्षाक तँ कथन थिक जे—'अपि माषं मषं कुर्यात् छन्दोभङ्ग न कारयेत्'। वस्तुतः एहि वाक्यक पूर्ण निर्वाहक निमित्त पुराण अपना के छन्द भङ्ग सँ बचेबाक हेतु एहेन पद्यक प्रयोग कएल। एकर अतिरिक्त एक और तथ्य अछि जे पुराण रचनाक मात्र उद्देश्य थिक जनसामान्यक हृदय धरि धर्मशास्त्रक विषय के पहुँचायब। जन साधारणक भाषा पुराणक निर्माणक पूर्वे सँ प्राकृत एवं पालि निर्धारित भए गेल छल। अतः एहि लोक भाषाक प्रभाव पुराण पर पड़ब उचिते छल।

निम्नलिखित किछु अपाणिनीय प्रयोग एवंक्रमें पाओल जाइछ—

(१) 'भर्तव्या रक्षितव्या च भार्या हि पतिना सदा'[९९] मे पत्याक स्थान मे पतिना; (२) 'चित्तकेतोरतिप्रीतिर्यथा दारे प्रजावति'[१००] मे दार शब्दक

---

९५ १-१-१६

९६ १-१५-२१

९७ ३-५-४७

९८ ८-३-१२

९९ मार्क०, २१-७१

१०० भागवत, ६-१४-३८

स्थान मे दारेषु; (३) तान् वदस्वानुपूर्व्येण छिन्धिनः सर्वसंशयान[१०१] मे वदस्व तथा (४) कुतोऽन्यथा स्याद् रमतः स्व आत्मनः[१०२] मे रममाणस्य होयबाक चाही।

पुराणक एवंक्रमक भाषा जनसाधारणक भाषा छल। जाहि प्रकारेँ काव्यक उपमा शास्त्रीय विषय पर प्रायः अवलम्बित भेलहि अपन गौरव बोध करबैछ ओहि पुकारेँ दिन-प्रतिदिनक अवस्था पौराणिक उपमाक थिक। पुराणक निर्माता अपन दिन-प्रतिदिनक जीवन मे, अपन आस-पासक क्षेत्र मे जे किछु अपन इन्द्रिय सँ अनुमान कएलैन्ह ओकरहि पौराणिक तथ्यक विशदीकरणक निमित्त प्रयुक्त कएलैन्ह।

अतएव पुराणक भाषा मे देश भाषा ओ रूप उपलब्ध होइछ जे वस्तुतः जनजीवन पर अवलम्बित पाओल जइाछ।

परवर्ती वैदिक काल मे देशभाषाक विकास केँ विद्वान लोकनि निम्न-लिखित रूप मे विश्लेषित कएलैन्हि अछि—

(१) उदीच्य वा उत्तरीय विभाषा,
(२) मध्यदेशीय विभाषा, तथा
(३) प्राच्य वा पूर्वीय विभाषा।

उदीच्य वा उत्तरीय विभाषा ओहि युगक परिनिष्ठ विभाषा छल जकर प्रयोग सप्त सिन्धु प्रदेश मे कएल जाइत छल। एहि परिनिष्ठ विभाषा मे ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् साहित्यक रचना भेल। आधुनिक पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त तथा उत्तरीय पंजाबक भाषा परिनिष्ठ वा शुद्ध मानल जाइत छल। कौषीतकि ब्राह्मणक[१०३]—

'तस्माद्उदीच्यां प्रज्ञाततरा वागुद्यते, उदञ्च उ एव यान्ति वाचं। शिक्षितुं, यो वा तत् आगच्छति, तस्य वा शुश्रुपन्त इति।'

एहि वाक्य मे उदीच्य भाषाक महत्ता एवं परिनिष्ठताक बोध होइछ। एहि भाषा केँ आधार मानि पाणिनि अष्टध्यायीक रचना कए संस्कृत भाषाक

---

१०१ ओएह, ३-१०-२
१०२ ओएह ५-१९-५
१०३ ७-६

आधारशिला केँ दृढ़ कएल। पाणिनिक जन्म गन्धारक शालातुर गाम मे तथा हुनक शिक्षा तक्षशिला मे सम्पन्न भेल। ई दुहु स्थान उदीच्य प्रदेशे मे अछि।

मध्यदेशीय विभाषाक रूप यद्यपि स्पष्ट नहि अछि किन्तु ई तँ निश्चिते अछि जे ई विभाषा नै तँ उदीच्य सन रूढ़िबद्ध वा नै प्राच्यासन शिथिले छल। एहि भाषाक स्वरूप मध्यवर्गीय छल।

प्राच्या उपभाषा आधुनिक अवध, पूर्वीय उत्तर प्रदेश एवं बिहार प्रान्त मे बाजल जाइत छल। ई असंस्कृत तथा विकृत विभाषा छल। एहि मे द्रविड़ एवं मुण्डा भाषाक तत्त्वक पूर्ण मिश्रण विद्यमान छलैक। एहि भाषा मे बजनिहार एहेन लोक छल जनिका यज्ञीय संस्कृत मे विश्वास नहि छलैन्ह। अतः हुनका व्रात्य कहल जाइत छल। एहि व्रात्यक सामाजिक एवं राजनैतिक संघटनो आर्यक अपेक्षा भिन्न छल। डा० सुनीति कुमार चाटुर्ज्य,[१०४] ताण्ड्य ब्राह्मणक[१०५]—'अतदुरुक्त वाक्यं दुरुक्त माहुः अदीक्षिता दीक्षित वाक्यं वदन्ति' वाक्यक आधार पर कहैत छथि जे व्रात्यगण सरस वाक्य केँ कठिनता सँ उच्चारण करैत छलाह तथा यद्यपि ओ लोकनि दीक्षित नहि छलाह तथापि दीक्षित व्यक्ति सन आचरण एवं संभाषण करैत छलाह।

एवंक्रमक आन्तर्प्रादेशिक भाषाक समिश्रण प्राचीन आर्य भाषा कालहि सँ होइत आएल अछि। अतएव भारतीय भाषाक इतिहास तीन युगक विकासक श्रेणी मे विभक्त कएल जाइछ—(१) प्राचीन भारतीय आर्यभाषा युग (५०० ई० पूर्व धरि); (२) मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा युग (५०० ई० पूर्व सँ १००० ई० धरि) तथा (३) आधुनिक आर्यभाषा युग (१००० ई० सँ एखन धरि)।

प्रथम युगक भाषाक नमूना ऋग्वेदक भाषा थिक। ऋग्वेद मे तत्कालीन अनेक भाषाक समिश्रण अछि जे प्राग्वैदिक काल मे भारतीय आदिवासी द्वारा प्रयुक्त होइत छल। ऋग्वेदक भाषाक विकास आन-आन वेद, ब्राह्मण एवं सूत्र ग्रन्थ मे भेल।

मध्यकालीन आर्य भाषा युग मे एक दिश वेदक भाषाक विविधता केँ नियमित कए एकरूपता प्रदान कएल गेल। फलतः एके राष्ट्रीय, अन्तर्प्रान्तीय

---

१०४ भा० आ० भाषा और हिन्दी, पृ० ७२ (दो० सं०)
१०५ १७-४

साहित्यिक भाषा संस्कृतक नामे तथा दोसर दिश एकरहि समकालीन ऋग-वेदक विविधामयी भाषा अनेक प्रान्तीय बोलीक रूप मे विकसित भेल। भगवान बुद्ध मगध प्रान्त मे भ्रमण करैत जखन मगधक ओहि कालक लोक भाषा मे अपन उपदेश देल तँ ओ ओहि ऋग्वेदक विविधामयी भाषाक प्रान्तशः विकसित अनेक रूप मे सँ एक छल। तथागतक "वाचनामग्ग" भेला सन्ता पश्चात् एहि भाषाक रूप राष्ट्रीय भेल। एवंक्रमेँ अनेक बोली, प्रान्तीय भाषा, उपभाषाक समिश्रणो एहि भाषा मे भेल जकरा आइ पालि कहल जाइछ। अतएव संस्कृत एवं पालिक विकास समकालीन थिक।

मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाक युग मे एहि जनभाषाक विकास मे तीन स्तर पाओल जाइछ—(१) पालि एवं अशोकक धर्म लिपिक भाषा (५००-१०० ई० पूर्व०), प्राकृत भाषा (१०० ई० पू०-५०० ई०), तथा अपभ्रंश भाषा (५००-१००० ई०)।

पालिक विषय मे यद्यपि भिन्न-भिन्न प्रकारक मत अछि किन्तु पालिक स्वभाविक प्रवृत्ति एवं अशोकक शिलालेख आदिक आधार पर पालि केँ मागधी मानबे उचित थिक। सिंहली परम्परा पालि केँ मागधी वा मगधक भाषा मानैत अछि। जर्मन विद्वान मैक्स वेलेसर पालि केँ पाटलि वा पादलिक संक्षिप्त रूप मानि पाटलिपुत्रक भाषा मानैत छथि। पिपाक श्रुत मे[१०६] पालि शब्दक अर्थ ग्राम भाषा कएल गेल अछि। गायगर[१०७] पालिक मूलाधार मागधी केँ मानैत छथि। स्थविरवादी परम्परा मे एहि तरहेँ कहल गेल अछि—

सामागधी मूल भासा नरा ययादि कप्पिका।
ब्रह्मातो चस्सुतालाया सम्बृद्धा चापि भासरे॥
—कच्चायन व्या०, भू० पृ० ३३

जेम्स एल्विस तथा चाइल्डर्सक विचारेँ मागधीए पालि भाषाक उपयुक्त नाम थिक। जेम्स एल्विसक अनुसार बुद्ध कालीन भारत मे सोलह प्रादेशिक बोली प्रचलित छल। एहि मे सँ मागधी बोलीए मे जे ओहि समय मगध मे प्रचलित छल भगवान बुद्ध उपदेश देल। विंटरनिज्जक मत सेहो

---

१०६ पृष्ठ ३८-३९
१०७ पालि लिटरेचर एण्ड लैन्गुएज, पृ० ५१

एहने छैन्ह। हिनकर कथन अछि जे पालिक विकास अनेक प्रादेशिक बोलीक समिश्रण सँ भेल जाहि मे प्राचीन मागधी प्रधान छल।[१०८]

ई तँ निर्विवाद अछि जे भगवान बुद्ध पयरे घूमि घूमि अपन उपदेश मध्य मण्डल (मज्झिमेसु पदेसु) अर्थात् काशी, कुरुक्षेत्र सँ पाटलिपुत्र एवं हिमालयक प्रदेश धरि देलैन्ह। इहो निर्विवाद अछि जे भगवान बुद्धक शिष्य मध्य नाना जाति, वर्ग एवं प्रदेशक व्यक्ति सम्मिलित छल। अतएव बुद्ध वचनक भाषा मूलतः मागधी भेलहुँ सन्ता विविधरूपता कें प्राप्त कएल।

विनयपिटकक चुल्लवग्ग मे एक कथा अछि जे एक समय दुइ ब्राह्मण भिक्षु तथागत कें सूचना दैत छथि जे 'सकाय निरुत्तिया बुद्ध वचनं दूसेन्ति' तथा निवेदन करैत छथि जे 'हन्द मयं भन्ते बुद्ध वचनं छन्द सो आरोपे माति'। भगवान एहि प्रकारक कार्य कें अपराध बुझि पश्चात् विधानात्मक आदेश प्रसारित कएल–"सकाय निरुत्तिया बुद्ध वचनं परिया पुणितु"।[१०९]

पालि शब्दक सर्वप्रथम व्यापक प्रयोग आचार्य बुद्धघोषक (चारिम पाँचम शताब्दी ईसवीक) अट्ठकथा तथा विशुद्ध मग्ग मे पाओल जाइछ जे मूल त्रिपिटक वा बुद्ध वचनक अर्थ मे प्रयोग कएलैन्ह अछि। आचार्य बुद्ध घोषक पश्चात् तेरहम शताब्दी धरि पालिक अर्थ मूल त्रिपिटकक पाठक निमित्त कएल जाइत छल।

पालि मागधीक अपर नाम थिक जे अत्यन्त प्रारम्भे सँ मगधक लोक भाषाक रूप मे प्रख्यात छल। अथर्ववेद मे जाहि मागधक एवं व्रात्यक चर्चा पाओल जाइछ वस्तुतः मागधीक सम्बन्ध ओहि मागध एवं व्रात्यक भाषा सँ अछि।

अतः पालि प्राकृतक पूर्ववर्ती रूप थिक जे लोक भाषाक रूप मे समस्त बिहार प्रान्त मे बुद्ध काल मे प्रचलित छल। एहि प्रसंग मे विदेह वा मिथिलाक भाषाक सम्बन्ध मे साधिकार कहल जा सकैछ जे ओहि समय मिथिला एवं मगध दुहु एके वैदेही वंशक राजाक अधीन भेला सन्ता एके राज्य मे गनल जाइत छल जकर लिपि एवं भाषा मागधीए रहैक।[११०]

मागधीए सँ जैन आगमक भाषा अर्ध मागधीक विकास भेल जे

---

१०८ इन्डिन लिटरेचर का इतिहास, भा० २, पृ० १३
१०९ भरत सिंह उपाध्याय, पालि साहित्यक इतिहास, पृ० २२
११० डा० राजेन्द्र लाल मित्र, ललित विस्तरक अँ० अनुवाद पृ० ३८

मागधी एवं शौरसेनीक मिश्रण सँ उद्भूत भेल छल। अर्धमागधीक प्रधान क्षेत्र पश्चिम मगध एवं शुरसेनक (मथुरा) मध्यवर्ती प्रदेश अयोध्या छल।[111]

अर्धमागधीक प्रसंग मे भरत नाटक मे प्रयुक्त भाषाक प्रसंगक क्रम मे एहि तरहे निर्देश करैत छथि :—

मागध्यवन्तिजा प्राच्या सूरशेन्यर्धमागधी।
बाल्हीका दाक्षिणात्या च सप्तभाषा प्रकीर्तिताः॥

—नाट्य शास्त्र, ३६-३६

उपर्युक्त विवेचन सँ प्रतीत होइछ जे वैदिक भाषाक संगे जन भाषाक अस्तित्त्व पाओल जाइछ जे स्वरूपतः प्रकृति पर आधारित भेला सन्ता प्राकृत नामे प्रसिद्ध भेल। डा० एलफ्रेड सी वुल्नर[112] संस्कृत कें शिष्ट समाजक भाषा तथा प्राकृत कें जनसाधारणक भाषा मानैत छथि। डा० पिशल[113] मूल प्राकृत के जनताक भाषा कहलैन्ह अछि। पिशलक अनुसार प्राकृत भाषाक जड़ि जनसाधारणक भाषाक मध्य जमल अछि जकर मूल तथ्य आदि-कालक सजीव भाषा सँ लेल गेल अछि।

वैदिक तथा परवर्ती संस्कृतक ओ शब्द जाहि मे "न" क स्थान मे "ण" क प्रयोग भेल अछि प्राकृतक रूप थिक। अतः आणि, पुण्य, फण, काण, निपुण, गण, वेणी आदि शब्द मूलतः प्राकृतक थिक। एवंक्रमें शिथिल शब्द मे इकारक होएब तथा रेफक स्थान मे लक होएब पूर्वीय प्राकृतक संग प्राचीन प्राकृतक अस्तित्व कें सिद्ध करैछ।

प्राकृत साहित्यक गणना मध्य भारतीय आर्य भाषा सँ कएल जाइछ तथा एकर विकास वैदिक संस्कृत वा छान्दस भाषा सँ मानल जाइछ। अतः प्राकृतक प्रकृति वैदिक भाषा सँ प्रायः मिलैत अछि। प्राकृत मे व्यञ्जनान्त शब्दक प्रयोग प्रायः नहि होइछ। संस्कृतक व्यञ्जनान्त शब्दक अन्तिम व्यञ्जनक लोप भए जाइछ जेना—संस्कृतक तावत्, स्यात्, कर्मन प्राकृत मे क्रमशः ताव, सिया, कम्म भए जाइछ। वैदिक भाषा मे व्यञ्जनान्त शब्दक दुहु स्थिति उपलब्ध पाओल जाइछ। कतहु त ओकर अस्तित्व रहैछ तथा

१११ डा० नेमिचन्द शास्त्री, प्रा० भाषा और सा० का आ० इतिहास, पृ० ३२

११२ इन्ट्रोडक्सन टु प्राकृत, पृ० ३-४

११३ प्राकृत भाषा व्याकरण, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद द्वारा प्रकाशित, पृ० १४

कतहु लोप भए जाइछ जेना पश्चात्क स्थान पर पश्चा;[११४] युष्मानक स्थान पर युष्मा;[११५] उच्चात्क स्थान पर उच्चा[११६] तथा नीचात्क स्थान पर नीचाक[११७] प्रयोग पाओल जाइछ। प्राकृत मे विजातीय संयुक्त वर्ण सँ एकक लोप कए पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर केँ दीर्घ कए देल जाइछ जेना निश्वास= नीसास, कर्त्तव्य = कातव्य, दुहरि=दुहार, दुर्लभ=दूलह। एवंक्रमक प्रवृत्ति वैदिक संस्कृतो मे पाओल जाइछ जेना—दुर्दम=दूडम;[११८] दुनशि= दूनाश।[११९]

स्वर भक्तिक प्रयोग प्राकृत एवं छान्दस् दुहु भाषा मध्य समान रूप मे पाओल जाइछ। प्राकृत मे क्लिन्न=किलिन्नः, स्व =सुव पाओल जाइछ। एवंक्रमेँ छान्दस मे तत्वः=तन्वः;[१२०] स्वः=सुवः[१२१] स्वर्गः=सुवर्गः[१२२] इत्यादि। पदरचनो मे एहि दुहु मे पर्याप्त समता पाओल जाइछ। छान्दस एवं प्राकृत मे पदगत कोनो वर्ण के लोप कए ओकरा पुनि संकुचित कए देबाक प्रवृत्ति समान रूप मे पाओल जाइछ। उदाहरणक निमित्त—राजकुल सँ प्राकृत मे राउल; कालायस सँ कालास इत्यादि। वैदिक मे पशवे=पश्वे; निविविसरे=निविविश्रे इत्यादि रूप पाओल जाइछ।

अतएव उक्त विवेचन सँ स्पष्ट अछि जे प्राकृतक विकास प्राचीन आर्य भाषा छान्दस सँ भेल जे तत्कालीन जनभाषा छल। अतः प्राकृतक शास्त्रीय महाकाव्य मे कोमल शब्द, मधुर कल्पना एवं उद्रेकमयी भावनाक संग जीवनक सृजन पाओल जाइछ जाहि सँ एक नवीन विचारधारा प्रादुर्भूत भेल। फलतः मानवताक प्रगतिवादी आधार पर भारतीय संस्कृत एवं साहित्यक खोपड़ी समयानुसार एक पैघ अट्टालिका मे परिवर्त्तित भए अपन गुरुता एवं महत्ता सँ परिनिष्ठित स्वरूप मे आश्रय ग्रहण कए व्याकरणक नियम सँ अनुशासित भए अपन पूर्वक मर्यादा सँ वञ्चित भए गेल।

---

११४ अथर्व०, १०-४-११; शत० ब्रा०, १-१-२-५
११५ वाज०, १-१३-१; शत० ब्रा०, १-२-९
११६ तै० सं०, २-३-१४
११७ ओएह, १-२-१४
११८ ऋग्वेद, ४-९-८; वा० सं० ३-३६
११९ शुक्ल यजुर्वेदीय प्रतिशाख्य, ३-४३
१२० तै० आ०, ७-२२-१
१२१ ओएह, ६-२-७
१२२ ओएह

फलस्वरूप परिनिष्ठित प्राकृतक अतिरिक्त एक नव तृतीय युगीन प्राकृतक विकास भेल जकर नाम अपभ्रंश पड़ल। ई प्राकृत तथा नव भारतीय आर्य भाषाक मध्यक कड़ी थिक। एहि अपभ्रंशक प्राकृत रूप अवहंस, अब्भहंस, अवहट्ट वा अवहट्ठ थिक जे छठम शताब्दी सँ तेरहम शताब्दी ई० धरि प्रचलित छल।

अपभ्रंश शब्दक सर्वप्रथम उल्लेख पतंजलि (ई० पूर्व दोसर शताब्दी) सँ किछु पूर्व मे पाओल जाइछ। वाक्यपदीयम्‌क रचयिता भर्तृहरि भाष्य-कारक पूर्ववर्त्ती संग्रहकार व्याडि नामक आचार्यक मत कें उल्लेख करैत अपभ्रंश शब्दक निर्देश एवंक्रमें कएलैन्ह अछि—

"शब्द संस्कार हीनो यो गौरिति प्रयुयुक्षिते।
तमपभ्रंशमिच्छन्ति विशिष्टार्थ निवेशिनम्"

—प्रथम काण्ड, का० १४८

अपभ्रंश शब्दक उल्लेख पतंजलिक महाभाष्य मे एहि तरहें कएल गेल अछि—"एकस्यैव शब्दस्य बहवोऽपभ्रंशाः। तद् यथा गौरित्यस्य गावी, गोणी, गोता गोपोतालिकेत्येवमादयोऽपभ्रंशाः।[123]

एहि शब्द सँ कतिपय शब्द भिन्न-भिन्न प्राकृत मे पाओल जाइछ। प्राकृत भाषाक व्याकरणकार चंड तथा हेमचन्द्र अपन ग्रन्थ मे उक्त रूप सँ किछु प्राकृतक सामान्य रूप स्वीकार कएलैन्ह—

"गोर्गाविः", —चंड—प्राकृत लक्षण, २-१६

"गोणादयः गोः, गोणी, गावीः, गावः गावीओ"

—हेमचन्द्र, प्राकृत व्याकरण, ८-२-१७४

एहि सँ प्रतीत होइछ जे पतंजलि तथा हुनका सँ पूर्वक आचार्य ओहि सभ शब्द कें अपभ्रंश बुझैत छथि जे शिष्ट-समंत संस्कृत भाषा सँ विकृत एवं भ्रष्ट होइत कालक्रमें काव्योपयोगी भाषा एवं काव्यक रूप मे परिवर्त्तित भए गेल। एहि प्रसंग मे भामह (छठम शताब्दीक) अपन ग्रन्थ काव्यालंकार मे—

शब्दार्थौ सहितौ काव्यं गद्यं पद्यं च तद्‌द्विधा।
संस्कृतं प्राकृतं चान्यदपभ्रंश इति त्रिधा॥[124]

---

१२३ म० भा १.१.१
१२४ १-१६-२८

तथा दंडी (७म शताब्दीक) काव्यादर्श मे एवंक्रमें—

आभीरादिगिरः काव्येष्वपभ्रंश इति स्मृताः।
शास्त्रेषु संस्कृतादन्यदपभ्रंशतयोदितम् ॥[१२५]

वर्णन कएलैन्ह अछि। अतएव भाषाशास्त्र वा व्याकरण मे अपभ्रंशक अर्थ थिक संस्कृत सँ विकृत रूप। काव्य मे आभीरादिक भाषा कें अपभ्रंश कहल गेल अछि।

उपर्युक्त उद्धरण सँ प्रतीत होइछ जे अपभ्रंश कें आभीरक संग सम्बन्ध तँ छल किन्तु आभीरोक्ति होएतहु ओहि समय अपभ्रंश मे काव्य रचना प्रारम्भ भए गेल छल। वलभीक (सौराष्ट्रक) राजा धीरसेन द्वितीय अपन पिता गुहसेनक प्रसंग मे कहैत छथि – संस्कृत प्राकृतापभ्रंशभाषात्रय-प्रतिबद्ध प्रबन्ध रचना निपुणतरान्तः करणः ॥[१२६] जे ओ संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश तीनू भाषाक प्रबन्ध-रचना मे निपुण छलाह।

अपभ्रंशक प्रसंग मे नमिसाधु (१०६६ ई०) काव्यालंकारक टीका मे एहि तरहें कहैत छथि—आभीरी भाषापभ्रंशस्था कथिता क्वचिन्मागध्यामपि दृश्यते" ।[१२७]

अतः प्रतीत होइछ जे अपभ्रंशक एक रूप ओहि समय धरि मगध तक प्रसारित भए गेल छल। मागधी अपभ्रंश १ ई० सँ ५०० ई० मध्य धरि समस्त पूर्वीय प्रदेशक साहित्यिक भाषा छल तथा मगधक राजनीतिक प्रभावक कारणे ई साहित्यिक भाषा समग्र पूर्वीय प्रान्त मे मान्य भए गेल छल। फलतः बंगला, आसामी, उड़ीया एवं मैथिली मे अधिक साम्यता पाओल जाइछ जकर स्रोत एकहि भाषा मागधी थिक।

६ठम शताब्दी सँ दसम शताब्दी ई० मध्य तक स्थान विशेषक अनुसार प्रत्येक प्राकृतक एक अपभ्रंश रूप भेल, जेना शौरसेनी-प्राकृतक, शौरसेनी-अपभ्रंश, महाराष्ट्रीय-प्राकृतक महाराष्ट्रीय-अपभ्रंश तथा मागधी-प्राकृतक मागधी-अपभ्रंश।

---

१२५ १-३६

१२६ धीरसेन द्वितीयक दान पत्र, इंडियन एंटिक्वेरी, भाग १० पृ० २८४

१२७ पृ० १५

अपभ्रंश भाषाक समय तँ ५०० सँ १००० ई० मानल जाइछ[१२८] किन्तु एहि भाषाक साहित्यक विकास करीब ८महि शताब्दी मे भेल जकर क्रम आधुनिक प्रान्तीय भाषाक पूर्ण बिकासक उपरान्तो धरि चलैत रहल। एहि प्रसंग मे विद्यापति कृत 'कीर्तिलता' एवं कीर्तिपताका' प्रमाण स्वरूप राखल जा सकैछ जकर रचना मैथिली साहित्यक पूर्ण बिकासक पश्चात्‌क थिक।

अपभ्रंश काव्य मे भाषाक दुइगोट धार प्रवाहित होइत देखल जाइछ। एक तँ प्राचीन संस्कृत-प्राकृत परिपाटीक साहित्यिक भाषा थिक जाहि मे पदयोजना, अलंकार, शैली आदि प्राचीन अलंकृत शैलीक अनुसार अछि तथा दोसर धार अपेक्षाकृत अधिक उन्मुक्त एवं स्वच्छन्द अछि। एहि मे भाषाक साधारण रूप पाओल जाइछ। अपभ्रंशक किछु कवि लोकनि तँ प्रथम कें तथा किछु दोसर कें अपनौलैन्ह।

अपभ्रंशक कत्रिक ई विशेषता रहल अछि जे ओ लोकनि रूढ़िवद्ध नहि भए प्रत्यक्ष अनुभूत एवं लौकिक जीवन सँ सम्बद्ध घटनाक वर्णन अपन काव्य मे कएलैन्ह अछि। लौकिक जीवन अनुभूति एवं ग्राम्य जीवनक सजीव घटनाक समन्वय अपभ्रंशक कविक भाषा, विषय वर्णन एवं अलंकार योजना मे उपलब्ध होइछ।

भाषा कें प्रभावमयी बनैबाक निमित्त शब्द सभहक आवृत्तिक अनेक उदाहरण अपभ्रंश कविक काव्य मे पाओल जाइछ। एवंक्रमे अपभ्रंश भाषा मे अनेक लोकोक्ति तथा वाग्धाराक प्रयोग भेल जाहि सँ भाषाक माधुर्य्य एवं सरसता बढ़ल। वस्तुतः मैथिलीक मधुरता एवं जन प्रियताक कारण अपभ्रंशक उपर्युक्त प्रवृतिए थिक।

अपभ्रंशक जे साहित्य पाओल जाइछ ओहि मे भाषागत भेद बड़ कम अछि। ई सम्पूर्ण साहित्य यद्यपि एके परिनिष्ठ भाषाक थिक तथापि वैयाकरण लोकनि अपभ्रंश कें देश भेद सँ अनेक भेदक निर्देश कएलैन्ह अछि। एगारहम शताब्दीक नमिसाधुक अनुसार अपभ्रंशक-उपनागर, आभीर एवं ग्राम्य ई तीन भेद छल। परवर्ती वैयाकरण लोकनि एकरहि नागर, उपनागर तथा व्राचडक नामकरण कएलैन्ह अछि।

वस्तुतः एके भाषाक अनेक विभाषा होएब कोनो आश्चर्यक बात नहि होइछ। स्थानीय प्रभावक कारणे भाषाक रूप भिन्न-भिन्न स्थान मे भिन्न-भिन्न

१२८ हरिवंश कोछड़, अपभ्रंश साहित्य, पृ० ३४

प्रकारक होइतहि छैक। तदर्थ अपभ्रंशहु कें देशगत अनेक भेद रहल होएत।

अपभ्रंश एवं आभीर जाति

अपभ्रंशक संग आभीर जातिक सम्बन्ध जोड़ल जाइछ। आभीर जातिक उल्लेख सर्वप्रथम महाभारत मे पाओल जाइछ। महाभारत राजसूय यज्ञक प्रसंग मे आभीर जाति कें शुद्रक रूप मे उल्लेख करैत अछि। महाभारतक एहि उल्लेख सँ स्पष्ट होइछ जे आभीर जाति ईस्वी सनक आस-पासक शताब्दी मे पश्चिमोत्तर भारत मे स्थापित भए गेल छलाह।

रुद्रदामनक अभिलेख जे १६१ ई०क मानल जाइछ, मे आभीर सेनापति रुद्रभूतिक दानक उल्लेख पाओल जाइछ। समुद्रगुप्तक प्रयाग स्तंभ लेख जे ३६० ई०क थिक, आभीरक आधिपत्य गुप्तसाम्राज्यक सीमा, मालवा, गुजरात, राजस्थान इत्यादि मे उल्लेख करैत अछि।

एहि तरहक उल्लेख सँ आभीरक प्रसार एवं अधिकार विस्तारक प्रसंग मे संकेतक उपलब्धि होइछ। क्रमशः ई जाति मध्य भारत एवं पूर्वी प्रदेश मध्य प्रसारित भेल तथा एकर प्रभुत्वो बढ़ल। एहि सँ उच्च वर्गक लोक क्षत्रिय वैश्य वर्ग मे सम्मिलित भेल तथा शेष शूद्र मध्य अपन स्थान ग्रहण कएलक। अपभ्रंशक सम्बन्ध गुर्जर जातियहु सँ जोड़ल जाइछ। भोज गुर्जरक निमित्त लिखलैन्ह अछि जे ओ अपभ्रंशे सँ तुष्ट होइत छथि। गुर्जरक सम्बन्ध इतिहासकार आभीर जाति सँ स्थापित करैत छथि। सम्भवतः गुर्जर जातियो आभीर जातिएक एक शाखा छल।

गुर्जर, आभीर आदि जातिक सम्पर्क सँ भाषा मे नव परिवर्त्तन होएब स्वाभाविके छल। एहि जातिक प्रसारक संगहि अपभ्रंशक प्रसार बढ़ैत गेल तथा मूल भारतीय आर्यभाषा प्राकृतक स्थिति कें छोड़ि अपभ्रंशक दिश अग्रसर भेल।

अपभ्रंश मे ओहि प्रवृतिक प्रारम्भ पाओल जाइछ जे पश्चात् मैथिली मे विकसित भेल। शब्द एवं धातु रूप मे नव प्रयोग सँ अपभ्रंश मैथिलीक विकासक आधारभूमिक प्रादुर्भव कएल। अपभ्रंशक साहित्यिक क्षेत्रो तँ प्राच्ये थिक जाहि क्षेत्र मे मैथिलीक प्रधानता पाओल जाइछ।

अपभ्रंश काव्य मे अनेक छन्दक प्रयोग पाओल जाइछ। संस्कृतक वर्णवृत्तक अपेक्षा मात्रिक छन्दक आधिक्य प्रयोग तँ पाओल जाइछ किन्तु

वर्णवृत्तक पूर्णरूप सँ अभाव नहि रहैछ। संस्कृतक ओहि वर्णवृत्त केँ अपभ्रंश कवि लोकनि ग्रहण कएलैन्ह जाहि मे एक विशेष प्रकारक गति हुनका प्राप्त भेल। 'भुजंग प्रयात' ओहि कविक प्रिय छन्द छल। संस्कृतक वर्णवृत्तहु मे ओ लोकनि अपन प्रवृत्तिक अनुकूल परिवर्त्तन कएल। छन्द मे अन्त्यानुप्रास अपभ्रंश कविक विशेषता थिक। एवंक्रमेँ छन्द केँ गति एवं स्वरक अनुकूल ओ लोकनि निर्माण कएलैन्ह। पद्यक गेयता एहि गुण सँ और अधिक भए गेल। संस्कृतक वर्णवृत्तहु मे एहि प्रकारक अन्त्यानुप्रासक प्रयोग ई कवि लोकनि कएलैन्ह। एतबेक नहि ई अन्त्य नुप्रास प्रत्येक चरणक अन्त मे तँ पाओले जाइछ चरणक मध्य मे सेहो ओकर प्रयोग होइत छल। संस्कृतक वर्णवृत्त केँ नियमानुसार चरण मे जतए यतिक विधान कएल गेल अछि ओतहु अन्त्यानुप्रासक प्रयोग कए ओहि छन्द केँ एक नव रूप देल गेल।

अपभ्रंश साहित्य अधिकांश धार्मिक आचरण सँ आवृत अछि। एहि मे मालाक तन्तु सन सभ प्रकारक रचना धर्मसूत्र सँ ग्रथित अछि। अपभ्रंशक कविक लक्ष्य छल एक धर्मप्रवीण समाजक निर्माण। पुराण चरिउ, कथात्मक कृति, रासादि सभ प्रकारक रचना मे एहि तरहक भाव दृष्टिगत होइछ। एहि प्रवृत्तिक निमित्त अपभ्रंश ग्रन्थ मे एक प्रकारक एकरूपता तथा नीरसताक प्राप्ति होइछ।

अपभ्रंश महाकाव्य जे उपलब्ध भेल अछि ओ सभ के सभ धार्मिक दृष्टिए सँ लिखल गेल। यद्यपि महाकाव्यक विषय धर्मभावना निरपेक्ष ऐहिकता परकहु भए सकैछ जेना संस्कृत एवं प्राकृतक काव्य मे देखल जाइछ किन्तु अपभ्रंश मे एहेन महाकाव्य साधारणतः नहि पाओल जाइछ। एवंक्रमक धार्मिक साहित्य केँ लए निर्मित भेल महाकाव्यक परम्परा मे कवि स्वयंभूक नाम सर्वप्रथम अबैत अछि। स्वयंभूक प्रौढ़ एवं परिपुष्ट रचना केँ देखि स्वतः प्रतीत होइछ जे अपभ्रंशक एहि तरहक प्रांजल परम्परा एकहि बेर स्वयंभू सँ नहि प्रकट भए अवश्य हुनका सँ पूर्वे उत्पन्न भेल जकर विकास स्वयंभूक रचना मे उपलब्ध अछि।

स्वयंभूक तीन कृति उपलब्ध अछि—(१) पउम चरिउ (पद्म चरित); रिट्ठणेमि चरिउ (हरिवंश पुराण) तथा (३) स्वयंभू छन्द। पद्म चरिउ जैन धर्मक अनुसार रामायण कथाक रूप थिक जे पूर्णतः वालमीकि रामायणक कथा सँ साम्य नहि अछि। कवि राम-कथा केँ सुन्दर नदी सँ मिलान कए एहि निमित्त एक सुन्दर रूपकक निर्माण कएलैन्ह। तदुपरान्त आत्म

विनय एवं अज्ञानताक प्रदर्शन करैत सज्जन-दुर्जन-स्मरणक परिपाटियहुक पालन कएलैन्ह।

राम-कथाक आरम्भ लोक प्रचलित किछु शंकाक समाधानक संग होइछ। मगध नरेश श्रेणिक जिनपर सँ प्रश्न करैत छथि—

जइ राम हौ तिहुयणु उयरिमाइ,
तो रामणु कहि तिय लेवि जाइ।
अण्णु विखर दूसन समरि देव,
पहु जुज्जइ मुज्जइ भिच्चु केव॥
किह वाणर गिरिबर उब्बहंति;
बंधिवि मयरहरु समुत्तरंति।
किह रावणु दहमुहु बीस हत्थु,
अमराहिव भुव बंधण समत्थु॥१-१०॥

अर्थात् जँ रामक पेट मे तीनू भुवन अछि तथा ओ एतेक शक्तिमान छथि तँ कोना रावण हुनकर स्त्री कें हरि लए गेल? कोना बानर पर्वत कें उठौलक? कोना दशमुह एवं बीस भुजा सँ युक्त रावण अमराधिप इन्द्र कें बाँधबा मे समर्थ भेल?

काव्य एवं शैली दुहु दृष्टिएँ आधुनिक मैथिली पूर्वा अपभ्रंशक अवदान थिक जे मिथिला एवं तत्सम्बन्धी भूभाग मे अवहट्ठ नामे विख्यात छल।

अवहट्ठ शब्दक सर्वप्रथम प्रयोग ज्योतिरीश्वर ठाकुरक [१२९] 'वर्ण रत्नाकर' (१३२५ ई०) मे उपलब्ध होइछ। प्राकृतपैंगलमक टीकाकार वंशीधर ग्रन्थक प्रथम सूत्रक व्याख्या मे पिंगल कें अवहट्ठक एक रूप मानलैन्ह अछि [१३०] तथा तेरहमीं शताब्दीक प्रसिद्ध अपभ्रंश कवि अब्दुर्रहमान अपन

---

१२९ पुनु कइसन भाट, संस्कृत पराकृत, अवहठ्ठ, पैशाची, सौरसेनी, मागधी छहु भाषाक तत्वज्ञ, वर्णरत्नाकर, पृ० ८८

१३० प्रथमं भास तरंडो राओ सो पिंगलो जअइ। टीका—प्रथमो भाषा तरंडो प्रथम आद्यः भाषा अवहठ्ठ भाषा यथा भाषया अयं ग्रंथो रचित:सा अवहट्ठ भाषा, प्रा० पै० पृ० ३

Scanned by CamScanner

'संदेशराशक' मे अवहट्ठ भाषाक नाम करण कएल अछि।[131]

अवहट्ठ यद्यपि अपभ्रंशक एक रूप थिक किन्तु दुहु भाषा मध्य ध्वनि विचारक दृष्टिए अन्तर अछि जे एवंक्रमे पाओल जाइछ —

पूर्व स्वर पर स्वराघात

पूर्व स्वर पर स्वराघात द्वित्त्व व्यंजन उचारणक दृष्टि सँ हटओल जाइछ तथा ओकर स्थान मे एक व्यंजनक प्रयोग होइछ। एहेन अवस्था मे द्वित्त्व व्यंजनक पूर्ववर्ती स्वर केँ दीर्घ कएल जाइछ। डा० तेसीतोरी[132] एकरा अवहट्ठक सर्वप्रमुख विशेषता मानैत छथि, जेना—

संस्कृत	अपभ्रंश	अवहट्ठ
अक्षर	अक्खर	आखर
ठक्कुरः	ठक्कुर	ठाकुर
नृत्यति	नच्चइ	नाचइ

स्वरक सानुनासिकता मे परिवर्त्तन

स्वरक सानुनासिकताक क्षेत्रहु मे परिवर्त्तन देखल जाइछ। स्पर्श व्यंजन मे अनुस्वार नहि लगैत छल। पंचम वर्णनक संयोगे सँ सानुनासिकताक प्रयोजन सिद्ध होइत छल। अनुस्वार केवल य, र, ल, व, श, ष, स, ह, केँ रहलहि पर लगैत छल। परवर्ती अपभ्रंश मे युक्ताक्षर केँ पूर्वस्वर पर स्वराघात दए अनुस्वार केँ हल्लुक बनेबाक प्रवृत्ति पाओल आइछ। जेना—

आंग < अंग

आँकुस < अंकुस

पाँच < पंच

चाँद < चन्द्र

आंगन < अंगण

एम० जी० पंसे ज्ञानेस्वरीक भाषाक अध्ययन कए एहि विषय पर विस्तार सँ विचार कएलैन्ह अछि।

---

१३१ अवहट्ठय सक्कय पाइयंभि-पेसाइयभि भाषाए। लकखण छन्दाहरणे सुकइत्तं भूसियं जेहि (प० सं० ६)

१३२ इंडियन एंटिक्वेरी, १९१४, प्राचीन राजस्थानी

अकारण सानुनासिकताक प्रवृत्ति

स्वरक क्षतिपूरक दीर्घीकरणक संग अनुस्वार के ह्रस्व करबाक प्रवृत्ति बढ़ल तथा अकारण सानुनासिकताक प्रवृत्ति जे आधुनिक आर्य भाषा मे प्रचुर मात्रा मे पाओल जाइछ तकर आरम्भ अवहट्ठकाले मे भेल। जेना—

काँज>कज्ज
काँच<कच्चु:
भाँग<भग्ग
ओंदिम< ओष्ठ।

एक संग अनेक स्वरक प्रयोग

मध्यकालीन आर्य भाषा मे एके संग दू-दू, तीन-तीन स्वरक प्रयोग पाओल जाइछ। स्वरक एहेन स्वच्छन्द प्रयोग सँ गड़बड़ी प्रारम्भ भेल तथा ओकर स्थान पर पुनि व्यंजनक प्रयोग होमए लागल जाहि सँ तत्सम शब्दक बहुलता देखल जाइछ। एहि प्रसंग मे मात्र एतेक कहल जाइछ जे क्रियाक अन्त मे प्रायः अन्य पदक अन्य स्थानहु मे स्वर केँ संयुक्त स्वर बनेबाक प्रवृत्ति प्रारम्भ भेल। एवंक्रमक दुइ संयुक्त स्वर ऐ एवं औ अवहट्ठक अपन विशेषता थिक।

ऐ (अ+इ)—प्रायः क्रिया तथा अन्य शब्दक अन्तक अ एवं इ एहि दुहु स्वर केँ मिलाए संयुक्त कएल जाइछ—

तूटै< टुट्टै; गुणै<गुणइ
पै < पइ; रहै < रहइ

औ— संप्रयुक्त स्वरक विधानक कारणे अपभ्रंश मे एके संग अनेक स्वर देखल जाइछ। पश्चात्क अपभ्रंश मे एहि स्वर केँ संप्रयुक्त नहि राखि संयुक्त कए देबाक प्रणाली देखल जाइछ—

करौ:< करउ; चौरा∠ चउअर।
दूणौ< दुण्णउ; तौ<तउ
आऔ< आअउ < आगत

संकोच वा अक्षरलोप

ध्वनि विचारक सिलसिला मे अवहट्ठक एक बहुप्रचलित पद्धति संकोचनहुक अर्थ मे उल्लेख कएल जाइछ। एवंक्रमक भाषा विज्ञानक पदावली

मे ओकरा अक्षर-लोपक उदाहरण कहल जाइछ। आधुनिक आर्य भाषा मे एहेन अनेक शब्द पाओल जाइछ जकर प्राचीन एवं नवीन रूप मे आकाश-पातालक अंतर देखल जाइछ।

अन्धार शब्द अन्धकार सँ बनल। एवंक्रमें देवकुल सँ देउर; देवगृह सँ देवहा; कोट्टशीर्ष सँ कौसीस; उपवास सँ उपास; उत्तिष्ठ सँ उँट; सहकार सँ सहार; स्वर्णकार सँ सोन्नार शब्द निस्सृत भेल। एवंक्रमक प्रवृत्ति कीर्तिलता, संदेशरासक एवं प्राकृत पैंगलम् मे पाओल जाइछ।[133]

परसर्गक स्थान पर मूल शब्द

रूप विचारक दृष्टि सँ अवहट्ठ मे सूक्ष्म अन्तर देखल जाइछ। लिंग, वचन, आदि मे तँ कोनो अन्तर नहि अछि किन्तु किछु कारक विभक्ति मे मुख्य अन्तर परसर्गक प्रयोग मे देखल जाइछ। अपभ्रंश काले सँ परसर्गक प्रयोग होमए लागल छल। परसर्ग मे अपभ्रंशक सभ सँ प्रधान 'केहि' एवं 'रेसि' ई दुइ चतुर्थीक परसर्ग देखल जाइछ। निम्नलिखित परसर्गक एक सूची प्रस्तुत कएल जाइछ—

कारण—सन, समान, सहित, बिना, सरिस, सरीख।
सम्प्रदान—लग्गि, लागे, प्रति, कारण,
अपादान—हुते, हुंति, सिउ।
संबंध—कर, के, करेउ।
अधिकरण—माँझ, ऊपर, भीतर, माहि।

सर्वनामक प्रचुरता

अवहट्ठक ग्रन्थ मे सर्वनामक प्रयोगो बड़ शीघ्रता सँ होमए लागल। प्राचीन सर्वनामक एहेन विकसित रूप पाओल जाइछ जे बहुत किछु आइ काल्हिक रूप सन देखल जाइछ—

तोहर कुडिया, तूटइ वासना तोरा, मन तोहर दोसे।

मोर, मेरहु, मों, मइ, तोरा, तोहोर, तोहार, ताक आदि सर्वनामक पूर्वी अपभ्रंश वा अवहट्ठ मे पाएब दुष्कर अछि। कीर्तिलता मे तँ एकर रूप 'जन्ने' पाओल जाइछ।

क्रियापदक विकास

कोनहु पर भाषाक विकासक सूचना ओकर क्रियापदक नाना रूप सँ

१३३ नागरी प्र० पत्रिका, भाग ५८, अंक ४, पृ० ४५५

उपलब्ध होइछ। अवहट्ठ भाषाक विकासक कोन दिशा छल, ओहो ओकर क्रियापदे केँ देखला सँ ज्ञात होइछ। वस्तुतः अवहट्ठक क्रियापद वर्त्तमान भाषाक वाक्य विन्यासक अनेक समस्याक सुलझाव उपस्थित कए सकैछ।

वर्त्तमान काल मे कृदन्तक प्रयोग बढ़ि गेल अछि। आजुक 'ता' वला रूप मध्यकालक 'अन्तः' वला रूप सँ विकसित अछि जे प्राचीन अत् सँ विकसित भेल अछि।

अपभ्रंशक 'अन्त' प्रत्यय वला रूप एहि काल मे प्रचुर मात्रा मे प्रयुक्त होमए लागल। कीर्तिलता, प्राकृत पैंगलम्, थूलिभद्द फागु आदि मे इएह प्रवृत्ति चरम रूप मे अछि। जेना—

मधुर मेघ जिमि जिमि गाजन्ते,
पंचवाण निज कुसुमवाण तिमि तिमि साजन्ते।
सीतल कोमल सुरभि वाय जिमि जिमि वायन्ते,
मान मडप्फर मानिनि तिमि तिमि नाचन्ते।

—थूलि० फागु, पृ० ५८

भूतकालिक कृदन्तो वर्त्तमान सन प्रयोग मे अबैछ। कखनहु तँ ओ अपन पूर्ण रूप मे रहैछ, जेना—कहअ, बाँधअ, आदि तथा कखनहुँ केवल धातु मात्रेटा रहैछ, जेना—काहु होअ अइसनो आस।

—कीर्तिलता, पृ० ३८

बाँटत मिलल महासुख साँगा।

—चर्या० ८

हरिणी बोलअ सुनु हरिणा तों

—चर्या० ६

दोसर प्रकारक रूप मूलतः धातुरूपे मे होइछ, जेना—

चलि चूअ कोइल साव महुमासपंचम गाव।
मण मज्झ वम्मह ताव ण हु कंत अज्जवि आव।

—प्रा० पैं०, ८७

निर्विभक्तिक प्रयोग

अवहट्ठक सभ सँ पैघ विशेषता ओकर निर्विभक्तिक प्रयोग थिक जकरा कारणे बहुधा अर्थ मे अनर्थ भए जेबाक सम्भावना रहैछ, जेना—

भुवन जागर तुम्ह परतापा

—कीर्ति०

मकरंद पाण विमूढ़ महुअर सह मानस मोहिआ।

अवहट्ट मैथिल अपभ्रंश थिक जे पश्चिमी प्रान्त मे पिंगल नाम सँ ख्यात छल। प्राकृत पैंगलमक टीकाकार पिंगल एवं अवहट्टक सदृशार्थक प्रयोग कएलैन्ह अछि। भिखारी दास षट भाषा मे नाग भाषाक नाम लेलैन्ह अछि।[१३४] नाग भाषा सँ सम्भवतः भिखारीदासक तात्पर्य पिंगलसँ थिक। पिंगलाचार्य नाग जातिक छलाह। एक दिश तँ पिंगल केँ नाग भाषा कहल गेल तथा दोसर दिश मिर्जा खाँ अपन ब्रजभाषा व्याकरण मे प्राकृत अर्थात् अपभ्रंश के नागबासी वा पातालबासी कहलैन्ह अछि।[१३५]

पउमचरिउक भाषा विद्यापतिक भाषा सँ अधिक साम्य प्रतीत होइछ। पउम चरिउक आरम्भो तँ मगध नरेशक जिज्ञासे पर आधारित अछि। अतएव स्वयंभुक भाषा अवश्य मगध एवं मगध सँ सम्बन्धित भू-भागक तत्कालीन लोक भाषा सँ अछि जे आधुनिक मैथिलीक प्रारूप थिक। मागधी भाषा के तिरहुतिया सेहो कहल जाइछ।[१३६] वस्तुतः मागधी एवं मैथिली दुहु एके भाषा थिक जे एक समय मगधक राजनैतिक प्रभावक कारणे मागधी नामे विख्यात छल तथा पश्चात् मिथिलाक लोक भाषा भेला सन्ता मैथिलीक नामे प्रख्यात भेल।

मैथिली भाषाक उल्लेख सर्वप्रथम कोलब्रुक्स[१३७] १८०१ ई० मे कएलैन्ह। अबुल-फजलक आईने अकवरी मे मिथिला क्षेत्रक भाषा के 'तिरहुता' कहल गेल अछि।[१३८]

मिथिलाक विद्वान सतत् मैथिली केँ जन भाषा भेला सन्ता उपेक्षेक दृष्टि सँ देखल जे अपना केँ आर्यक सन्तान भेलाक निमित्त संस्कृत भाषा केँ देववाणी बुझि अपनौने छलाह। मात्र एहि कारणे जाहि मिथिला क्षेत्र सँ असंख्य तालपत्र अंकित संस्कृतक पाण्डुलिपि उपलब्ध होइछ ओतहि सँ मैथिली भाषा मे लिखल नितान्त अल्पमात्रा मे पाण्डुलिपि उपलब्ध होइछ। एतबेक नहि जँ किओ विद्वान मैथिली मे पुस्तक लिखबाक प्रयासो करैत छलाह तँ आन आन विद्वान हुनकर ततेक नै निन्दा करैत छलथिन्ह जे मैथिली

१३४ व्रज मागधी मिले अमर नाग जवन भाखानि।
सहज पारसीहू मिले खट्विधि कहत बखानि, काव्यनिर्णय १-२५

१३५ नागरी प्रचा० पत्रिका, वर्ष ५८ अंक ४, पृ० ४५०

१३६ हरिऔध, हिन्दी भाषा और साहित्य का विकास, पृ० ६०

१३७ एसियाटिक रिसर्चेज, भाग ८, पृ० १९९

१३८ जे रेट द्वारा सम्पादित. भाग ३, पृ० २५३

मे ग्रन्थ लिखबाक प्रयास के ओ दु:साहस बुझैत छलाह।

विद्यापतिक निम्नलिखित पद्य सँ एहि कथनक पुष्टि होइछ जे ओ प्राय: अपन उपहासक प्रसंगक उत्तर मे बनौलैन्ह :—

"बालचन्द विज्जावई भासा,
दुहु नहि लग्गइ दुज्जन हासा।
ओ परमेसर हर सिर सोहइ,
ई णिच्चइ नाअर मन मोहइ।"

—कीर्तिलता, पल्लव १, पृ० ४

मैथिली केँ देशी वा मैथिल अपभ्रंश कहबाक परिपाटी अद्यावधि धरि पाओल जाइत अछि। रागतरंगिनिक कर्त्ता लोचन (१७म शताब्दीक) विद्यापतिक कतिपय पद्य केँ अपन ग्रन्थ मे उद्धृत करैत ओहि पद्य केँ मैथिल अपभ्रंशक संज्ञा देलैन्ह अछि। स्वत: विद्यापति अपन भाषा केँ देशी नाम सँ सम्बोधन कएलैन्ह अछि। पं० मुकुन्द झा वक्सी अमरकोषक अनुवाद मे मैथिली भाषाक निमित्त मैथिल अपभ्रंश शब्दक प्रयोग कएलैन्ह अछि।[१३९] अतएव मैथिली जे मिथिलाक लोकक भाषा थिक सतत् विद्वान वर्गक द्वारा उपेक्षित एवं तिरस्कृते रहल जकरा ओ लोकनि यद्यपि 'लोक भाषा', 'भाषा', 'देशी' वा 'मैथिल अपभ्रंश' कहि समुचित आसन नहि देल तथापि ई भाषा चाहे 'मागधी' वा 'तिरहुता', 'देशी' वा 'मैथिल अपभ्रंशक' नामे कहल गेल, अपन साहित्यिक सुकुमारता, सांस्कृतिक प्राचीनता, शब्दक माधुर्य, स्वतन्त्र लिपि एवं अपन व्याकरणक संग साहित्यिक क्षेत्र मे प्रारम्भे सँ उन्नत, गौरवान्वित एवं जन प्रियता केँ प्राप्त कए अपन प्रभाव बंगला, उड़ीया, आसामी एवं नेवारी भाषा-अहु पर राखल जे कोनो आन समृद्ध साहित्य केँ नहि प्राप्त भेल।

१३९ डा० सुभद्र झा. फौरमेसन आफ मैथिली लैंगुएज, प्राक्कथन, पृ० ४

२

प्रारम्भिक रूप एवं विकसित साहित्य

मानवक सहज वृत्ति वाणीक रूप धारण एक साहित्य बनैत अछि जकर (१) गीति-काव्य; (२) महाकाव्य तथा (३) खण्ड काव्य ई तीन रूप अछि।

गीति-काव्य मे वाणीक स्वरूपक प्रदर्शन कएल जाइछ। वाणी अपन स्वरूपताक निमित्त कान पर निर्भर रहैछ। तदर्थ गीत केँ अमूर्त कहल जाइछ। गीति-काव्य क्षण-जीवनक क्षणाभिव्यंजन रूप एकान्तिक काव्य थिक जे भविष्य कल्पना कलित आदान-प्रदान विशिष्ट क्षणातिक्रान्त परम्परित जीवन पारस्परिकता, सामाजिकता पर निर्भर रहैत अपन अभि व्यंजन रूपहु मे परापेक्षी रहैछ।

मानवताक प्राचीनतम उपलब्ध साहित्य ऋग्वेदक प्राचीन ऋचा गीति काव्य थिक। एहि गीति-काव्यक उद्भव मनुष्यक वाणीक संगहि भेल। तदर्थ मनुष्य अपन जीवन सँ सम्बद्ध प्रत्येक सुख-दुःखक अवसर पर एहि आदि काव्यक माध्यम सँ अपन जीवनक चरम उद्देश्यक पूर्तिक प्रयास करैछ।

मिथिला मे गोसाउनीक गीत एवं पितर-गीत सँ ओहि गीति काव्यक सम्बन्धक संकेत पाओल जाइछ। विशेषतः एहि सहज काव्यक तेहेन ने व्यापक सम्बन्ध मिथिलाक जीवन मे पाओल जाइछ जे उपनयन, विवाह आदिक कोन कथा कन्याक विदागरी कालक रागात्मक रूदन एवं सम्बन्धी वर्गक मृत्युपरान्त क्रन्दनहु मे एक विशिष्ट राग परिलक्षित होइछ।

मैथिल अपभ्रंशक यद्यपि प्रचार मैथिल संस्कृतिक अत्यन्त प्रारम्भे सँ होइत छल तथापि मैथिली साहित्यक आधुनिक रूप गीति-काव्यक माध्यमे सँ प्रारम्भ भेल जकर श्रेय बौद्ध सिद्धाचार्य लोकनि केँ छैन्ह। वज्रयानक वज्रक स्थान पर सहजयानक सहजक 'सरल-नैसर्गिक' प्रतिष्ठा भेल। एहि तत्त्व के

प्रमुखता देबाक निमित्त सहजयानी बौद्ध सिद्ध लोकभाषाक रचना मे वज्र, वज्रसत्व, वज्रधर, वज्रगुरु आदि शब्दक प्रयोग अत्यन्त अल्पमात्रा मे कएलैन्ह।

मिथिलाक जीवन मे वज्रयानी सिद्धक तेहेन ने प्रभाव पड़ल जे कार्यमात्रक सिद्धि मे प्रथमतः सिद्धक नाम लेबाक परम्परा स्थापित भए गेल। विद्यारम्भक समय मे सर्वप्रथम एवंक्रमक वाक्य जे शक्तिक-प्रशंसा मे पहिने छल—

सा ते भवतु सुप्रीता देवी शिखरवासिनी।
उग्रेण तपसा लब्धो यया पशुपतिः पतिः॥[1]

ओकर स्थान "ओ ना मा सी द्यं" लेल जे 'ॐ नमः सिद्धम'क अपभ्रंश थिक।

वज्रयानक गुह्यसमाज तंत्र, ज्ञानसिद्धि, प्रज्ञोपायविनिश्चयसिद्धि, अद्वयवज्रसंग्रह, सकोद्देश टीका, साधनमाला आदि ग्रन्थ यद्यपि मिश्रित संस्कृत मे लिखल गेल जाहि मे मैथिली शब्दक प्रयोग पाओल जाइछ किन्तु बौद्ध सिद्ध लोकनि सर्वप्रथम अपन-अपन साधना पद्धति, जगत, जीव तथा परम तत्व सम्बन्धी विचार एवं अनुभूति कें लोक भाषा मे निर्मित चर्यापद एवं दोहाक माध्यम सँ व्यक्त कएलैन्ह।

साधारणतः सहज शब्दक अर्थ जाति वा जन्मक संगहि उत्पन्न होएब थिक जे धर्म एवं पदार्थ मे स्वभावतः पाओल जाइछ। हेवज्र मे कहल गेल अछि जे विश्वक स्वभाव सहज थिक। सहजे सभहक स्वरूप थिक। ई स्वरूपे शुद्ध चित्तक निर्वाण थिक। एहि विचारधारा कें जन सामान्य तक पहुँचेबाक उद्देश्य सँ सिद्ध लोकनि भाषाक गीतक आश्रय लेलैन्ह। आदि सिद्ध सरहपादे सँ सिद्धक निमित्त भाषाक कवि होयब आवश्यक छल। सिद्ध यद्यपि भाषा मे गीतक रचना कए अपन विचार कें जनसाधारणक समक्ष राखल तथापि हुनका लोकनि कें भ्रम छलैन्ह जे कतहु हुनकर आचार विरोधी कार्य कलाप जन मध्य घृणाक भावना ने उत्पन्न करैन्ह। तदर्थ ओ लोकनि एहेन भाषाक निर्माण कएलैन्ह जकर अर्थ वामाचार एवं योगाचार दुहु मे यथार्थ रूप मे लागि जाइत छल। एहि भाषा कें प्रथमतः तँ सन्ध्या भाषा तथा पश्चात्

---

१ गंगा नाथ झा, कवि रहस्य पृ० १०

"निर्गुण" रहस्यवाद वा छायावाद कहल गेल। सरहपाद[2] एहि भाषा एवं नव छन्दक आदि कवि थिकाह। "सरहपादक संग एक नव धार्मिक प्रवाहक संचार भेल जे अद्यावधि सन्तपरम्पराक रूप मे पाओल जाइछ। सन्तक संग जाहि योग एवं भावनाक सम्बन्ध अछि ओहो एहि समय अपन नव रूप मे प्रकट भेल। एहि मे गुरुक बचन केँ सर्वोपरि मानल जाइछ।

सिद्ध लोकनि ८म शताब्दी सँ १२म शताब्दी धरि अपन सिद्धान्त केँ गीत एवं दोहा मे प्रतिपादित कएलैन्ह जकर अवशिष्ट अहुखन कवीरक पद मे पाओल जाइछ।

दोहाक प्रयोग कहिया भेल ई यद्यपि विवादग्रस्त अछि तथापि एकर प्रयोग बड़ प्राचीन थिक। विक्रमोर्वशीय मे एकर सभ सँ प्राचीन रूप प्राप्त होइछ। जेना श्लोक लौकिक संस्कृतक तथा गाथा प्राकृतक प्रतीक भेल तहिना दोहा अपभ्रंश साहित्यक प्रतीक भेल। माइल्ल धवल नामक कवि 'दव्व सहाव पयास' (द्रव्य स्वभाव प्रकाश) नामक ग्रन्थ केँ प्रथमतः तँ दोहाबंध अर्थात् अपभ्रंश मे लिखलैन्ह किन्तु जखन लोक हुनकर उपहास करए लागल सम्भवतः एहि हेतु जे अपभ्रंश गँवारू भाषा छल तखन ओ गाहाबंध (प्राकृत) मे लिखलैन्ह। अतः स्पष्टे दोहाबंधक अर्थ अपभ्रंश तथा गाहाबंधक प्राकृत थिक। माइल्लधवल कहैत छथि—

दव्वसहावपयासं दोहयबंधेण आसि जँ दिट्ठं।
तं गाहाबंधेणय रइयं माइल्ल धवलेण ॥

—जैनसाहित्यक इतिहास पृ० १६८

ई सहज छन्द कोना और कहिया सँ प्रयुक्त होमए लागल से कहब कठिन थिक। कालिदासक विक्रमोर्वशीयक दोहा छन्द अपभ्रंश भाषे मे निवद्ध अछि :—

मइँ जाणि अँ मियलोयणी, णिसयरु कोइ हरेइ।
जावण णव जलि सामल, धारा घरु वरसेइ ॥

—विक्रमोर्वशीय, चतुर्थ अंक

अर्थात् "हम बुझल जे कोनो निशाचर मृग लोचनी केँ हरि लए जाए रहल

२ महापण्डित राहुल सांकृत्यायन सरह केँ आठम शताब्दी मे मनैत छथि, दोहा कोश, भूमिका, पृ० १

अछि। किन्तु ई हमर भ्रम छल। एहि भ्रम केँ हम तखन बुझल जखन नव विद्युत सँ संयुक्त श्याम मेघ बरसए लागल।"

दोहा अपभ्रंशक प्रिय छन्द थिक। सातम शताब्दीक पश्चात् भारतीय साहित्य मे ओकर दर्शन होइछ। धर्मक क्षेत्र मे सरह, कण्ह एवं तिल्लोपा आदि बौद्ध सिद्धक रहस्यमयी भाषा मे उपदेश केँ प्रचारित कएल।

कण्हपाक एक पद्य—'साखि करब जालन्धर पाएँ' मे जालन्धर पाद के साक्षी करबाक बात अछि जाहि सँ ई निस्सृत होइछ जे जालन्धर पादक कथन केँ कण्हपा साखि रूप मे उल्लेख करैत छथि। क्रमशः गुरु बचन केँ साखि कहल जाए लागल। बौद्ध सिद्धक उपदेश दोहा छन्द मे लिखल गेल। अतएव दोहा एवं साखि समानार्थ शब्द मानल गेल। सरहपाद अपन एक दोहा मे ओकरा 'उएस' वा उपदेश कहलैन्ह अछि जे परवर्ती काल मे साखि बनि गेल।

साखि शब्द गेय पद्य होइत अछि। सिद्ध लोकनि गेय पद्य केँ कोनो नै कोनो रागक नाम सँ लिखैत छलह जेना राग गवड़ा (गौड़), राग धनाश्री, इत्यादि।

प्रायः देखल जाइछ जे प्रत्येक युग मे जनसाधारण मे प्रचलित काव्य-रूप केँ सन्त लोकनि अपन मत प्रचारक साधन बनौलैन्ह। श्री हर्षक रत्नावली तथा वाणभट्टक पुस्तक मे चर्चरी गीतक संकेत प्राप्त होइछ। बारहम शताब्दीक सोमप्रभ वसन्तकाल मे चर्चरी गीतक चर्चा कएलैन्ह अछि। कबीर-दासक बीजक मे चाँचर नामक एक अध्याय अछि। एहि चाँचर मे पुरान चर्चरीएक अवशेष पाओल जाइछ। बीजकक एक चाँचर एहि प्रकारक अछि—

खेलति माया मोहिनी जिन्ह जेर कियो संसार।
रच्यो रंग ते चुनरी कोइ सुन्दरी पहिरे आय॥

एहि मे केवल गीतक रूपेटा नहि लेल गेल, अध्यात्मिक उपदेश मे चर्चरी सन लोकप्रिय गीतक प्रिय विषय शृंगार रसक आभासहु रहल अछि।

अपभ्रंश मे जिनदत्त सूरिक लिखल चर्चरी प्राप्त भेल अछि। हुनक टीकाकार, जिनपाल उपाध्यायक अनुसार ई भाषाक बिबिध गीत नाचि-नाचि कें गाओल जाइत छल। एहि चर्चरीक प्रथम पद एवंक्रमक अछि—

कव्वु अउव्वु जु विरयइ नवरस भर सहिउ।
लद्ध पसिद्धिहिं सुकइहिं सायरु जो महिउ॥
सुकइ माहु ति पसंसहिं जे तसु सुहगुरुहु।
साहु न मुणइ अयाणुय मइजिय सुरगुरुहु॥

एहि सभ सँ प्रतीत होइछ जे चर्चरीक दीर्घ परम्परा छल जकरा विभिन्न संप्रदायक गुरु अपन धर्म प्रचारक निमित्त अपनौलैन्ह। कृष्ण लीलाक पद जे नाचि-नाचि गाओल जाइत छल कहिया सँ प्रारम्भ भेल यद्यपि एकर कोनो ठोस प्रमाण उपलब्ध नहि अछि किन्तु दशम-एगारहम शताब्दी मे मात्रिक छन्द मे कृष्ण लीलाक गीत गएबाक प्रथा प्रचलित छल। ११म शताब्दीक क्षेमेन्द्र अपन ग्रन्थ "दशावतारवर्णन" मे लिखलैन्ह अछि जे जखन श्रीकृष्ण मथुरापुरी कें चल गेलाह तँ वियोगक्षिप्त हृदया गोपी गोदावरीक तट पर श्रीकृष्णक गुण-गान करए लगलीह—

गोविन्दस्य गतस्य कंसनगरीं व्याप्ता वियोगाग्निना।
स्निग्धश्यामल कूल लीनहरिणे गोदावरी गह्वरे॥
रोमन्थस्थितगोगणैः परिचयाद्यस्कर्णमाकर्णितम्।
गुप्तं गोकुल पल्लवे गुण गणं गोप्यः सरागा जगुः॥[३]

गोपीक गीत कें कवि मात्रिक छन्द मे लिखल। अनुमान कएल जा सकैछ जे क्षेमेन्द्र एवंक्रमक गीत कें कतहु सुननै होएताह जकरा ओ अपन ग्रन्थ मे अनुकरण कएलैन्ह जे एवंक्रमक अछि—

ललितविलासकलासुखखेलन ललनालोभनशोभनयौवन
मानितनवमदने।
अलिकुलकोकिलकुवलयकज्जल कालकलिन्दसुताविगलज्जल
कालियकुलदमने॥
केशकिशोरमहासुरमारण दारुणगोकुलदुरितविदारण
गोवर्धनधरणे।
कस्य न नयनयुगं रतिसंङ्गे मज्जति मनसिजतरलतरंगे
वररमणीरमणे॥

३ आचार्य डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य का आदिकाल, पृ० १०९

एहि गीत सँ अनुमान होइछ जे एगारहम बारहम शताब्दी मे दशावतारवर्णन परम आवश्यक छल तथा क्षेमेन्द्र अपन ग्रन्थ कें मैथिली भाषा मे वर्णित प्राय: कोनो दोसर ग्रन्थ वा प्रचलित गीतक आधारे पर निर्माण कएलैन्ह। हेमचन्द्रक प्राकृत व्याकरणक आठम अध्यायक निम्नलिखित—

पुत्तें जाएं कवणु गुणु अवगुणु कवणु मुएण।
जा बप्पीकी भुंहडी चम्पिज्जइ अवरेण॥

(अर्थात् ओहि वेटाक जन्म सँ कोन लाभ तथा मरला सँ कोन हानि होएत जकर रहैत ओकरा बापक धरती पर आन अधिकार करैछ।) वाक्यक भाषा एवं कीर्तिलताक भाषा मे बड़ समता प्रतीत होइछ।

हेमचन्द्र कें देशी शब्द बड़ प्रिय छलैन्ह। अतएव ओ देशीनाममाला नामक एक कोष बनौलैन्ह जाहि मे प्राकृत रचना मे आएल देशी शब्दक गणना अछि। हेमचन्द्र देशीक वैज्ञानिक बिवेचन नहि कए कहैत छथि जे "महाराष्ट्र, विदर्भ, आभीर आदि देश मे जे शब्द प्रसिद्ध अछि जँ ओहि शब्द कें गनल जाइ तँ देश कें अनंत भेला सन्ता पुरुषायुषहु सँ ओकर संग्रह नहि भए सकैछ। अतएव "अनादिप्रसिद्धप्राकृतभाषाविशेषहि' देशी कहल जाइछ"*। हेमचन्द्रक रचनाक किछु नमूना प्रस्तुत कएल जाइछ—

ते धन्ना कन्नुल्लडा हिअउल्लाति कयत्थ।
जो खणि खणि विनवुल्लडअ घुराटहिँ धरहिँ सुअत्थ॥७३॥

एहि वाक्य मे वर्णित खण-खण क्षण-क्षणक अर्थ मे, घुराट पिपाक अर्थ मे तथा नव नयाक अर्थ मे मैथिली भाषा मे प्रयुक्त होइछ। एवंक्रमें एहि श्लोक—

अङ्गहि अङ्ग न मिलिअउ हलि अहरें अहरु न पत्तु।
पिअ जोअन्ति हे मुह-कमलु एम्बइ सुरउ समत्तु॥

मे वर्णित अङ्ग, मिलिअउ आदि शब्द तथा एहि श्लोकक—

अग्गिएं उराहउ होइ जगु वाएँ सीअलु तेवँ।
जो पुणु अग्गि सीअला तसु उराहतणु केवँ॥

अग्गि आगिक, तेवँ त्योक तथा पुणु पुनिक निमित्त प्रयुक्त भेल अछि जे मैथिलीक विशुद्ध शब्द थिक।

* देशीनाममाला, गाथा २-३

निम्नलिखित पदक—

ते मुग्गडा हराविआ जे परिविट्ठा ताहं ।
अवरोप्परु जो अन्ता हं सामिउ गञ्जिउ जाहं ।।

मुग्गडा मूंगक, हराविया हरैनाइ, परिविट्ठा परोसनाइ, एवं गञ्जिउ गञ्जन केनाइक अर्थ मे प्रयुक्त भेल अछि।

एहि तरहक हेमचन्द्रक ग्रन्थ मे मैथिली शब्दक प्रावल्य पाओल जाइछ जाहि सँ प्रतीत होइछ जे हेमचन्द्र अपन ग्रन्थक रचना मे मैथिली कें प्रमुख स्थान देल।

अतएव बुझना जाइछ जे सिद्धक चर्या शब्द सँ चचरीक उत्पत्ति भेल। वज्रयानक गुप्त पूजा कें चर्या, अनुष्ठान वा आचरण कहल जाइत छल। एहि चर्या शब्दक भ्रष्ट नेवारी रूप 'चचा' थिक। नेपालक बौद्ध संप्रदाय मे नव-जागृति भेला सन्ता वज्रयानक क्रिया कलाप सँ शिक्षितवर्गक आस्था उठि गेल किन्तु ओकर प्रचलन नेपाल मे अद्यावधि पाओल जाइछ।

यद्यपि चर्या गीत अपभ्रंशक थिक किन्तु ओहि गीत कें गेनहार नेवारी भाषाक लोक थिकाह जे ओकर अर्थ कें नहि बुझैत छथि। एतवेक नहि हुनका लोकनिक मुँह मे पड़ि यथार्थ शब्दक उच्चारणो अशुद्ध भए जाइछ। नेवार जाति बाजबा मे 'त' एवं 'ट'क भेद-भाव नहि बुझैछ। एवंक्रमे 'र'क स्थान पर 'ल'क प्रयोग करैत छथि। जेना कि चचा पोथी १०, पृष्ठ १० मे 'सतगुरु चरणे'क स्थान पर 'सतगुलु चलने' आएल अछि।[४] एकर विकृत उच्चारणक निमित्त कण्ह (कर्ण) पाक वज्रगीतिः (तन् जुर यु १६३, प्रज्ञा) देखल जा सकैछ जे एवंक्रमक अछि[५]—

कोल्लइ रे ठिअ वोल्ल, मुम्मुणि रे कक्कोला ।
घणई किपीटई बज्जइ, करुणे किअइ ण रोला ।।ध्रु ।।
तहिं पल खाजइ गाढ़े मअ ण पिज्जइ ।
हले कलिंजर पाणिअइ, दुन्दुरु तहं बज्जिअइ ।।२।।
चउसम कत्थुरिसिहल कप्पुर लाइअइ ।
मलअइ घणसालिअइ तहि भलु खाईअइ ।।३।।
पेंखण खेट करन्त सुद्धासुद्ध ण मणिअइ ।

४ राहुल सांकृत्यायन, दोहा कोश, भूमिका, पृ० ७०
५ ओएह पृ० ७१

निरंशु एङ्ग चड़ाविअइ, तहि जस राव पणिअइ ॥४॥
मलअज कुंदुरु बापइ, डिण्डिम तहि ण. बजजिअई ॥५॥

सिद्धक आदि गुरु सरहपाद छलाह। सरहपादक कृति दोहाकोश वा दोहागीतिक नाम सँ प्रसिद्ध अछि। डा० हर प्रसाद शास्त्री नैपाल सँ प्राप्त उत्तरी बौद्ध धर्मक परवर्ती विकसित रूपक रचना कें "बौद्धगान ओ दोहा"क नाम सँ संपादन कएलैन्ह अछि जकर भाषा कें ओ बंगला तथा लिपि कें बंगलाक्षर कहैत छथि जे नितान्त भ्रामक थिक। महापण्डित राहुल सांकृत्यायनक अनुसार ८४ सिद्ध मे सँ ३६ सिद्धक सम्बन्ध बिहारक आधुनिक भू-भाग सँ छल जाहि मे अधिकांश मैथिल छलाह। दोहाकोश वा दोहागीतिक मूल पाण्डुलिपि नैपाल सं प्राप्त भेल जकर सम्बन्ध मिथिला सँ बड़ घनिष्ट अछि। मल्लराजाक शासन काल मे त मैथिली राजभाषाक रूप मे गौरवान्वित भेल छल। तदर्थ चर्यापदक भाषा कें बंगला तथा ओकर लिपि कें बंगला लिपि मानब नितान्त भ्रामक थिक।

चर्यापदक तात्विक दृष्टि सँ विश्लेषण कएला पर ओकर दुइ पक्ष—(१) दार्शनिक तथा (२) साधना पक्ष मानल जाइछ। चर्यापद मे जे दार्शनिक आधार पाओल जाइछ ओ महायान बौद्धधर्म मे अन्तर्भुक्त विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायक सिद्धान्तक आधारे पर निर्मित अछि। जाहि युगमे चर्यापदक रचना भेल ओ पाल-युग धर्म एवं संस्कृतिक क्षेत्र मे सर्वांगीण समन्वयक युग छल। एहि समन्वय काल मे हिन्दू एवं बौद्ध विचारधाराहुक समन्वय भेल तथा साधनाक क्षेत्र मे दुहु धारा एकस्थ भए एक समन्वित लोकायत साधना धाराक निर्माण कएल। ध्यान, मनन एवं साधनाक दृष्टि सँ चर्यापद मे जे उपादान उपलब्ध अछि ओहि मे कतेक मात्रा मे हिन्दू तथा कतेक मात्रा मे बौद्ध अछि, यद्यपि ओकर पृथकीकरण दुष्कर अछि किन्तु विज्ञानवादी महायान धर्म क्रमशः हिन्दूक ब्रह्मवाद वा आत्मवादक दिश अग्रसर भेल।

चर्यापदक किछु एहेन पद अछि जे साधारणतः बौद्धधर्मक विचारधारा सँ निस्सृत भेल अछि। एहि प्रसंग मे एवंक्रमें कहल जाइछ—

भवणइ गहण गम्भीर वेगें वाही।
दुआन्ते चिखिल माझे न थाही॥

उपर्युक्त पद मे संसार प्रवाहक समता अखंड जल प्रवाह सँ कएल गेल अछि। जेना नदीक प्रवाह मे प्रत्येक मुहूर्त्त प्रत्येक जलकण दोसर जलकण

सँ पृथक रहैछ किन्तु सभहक समिश्रण एक विशाल एवं अखण्ड जल प्रवाहक रूप मे प्रतीत होइछ तहिना संसार प्रवाहक भीतरक प्रत्येक अस्तित्व क्षणिक एवं पृथक-पृथक रहैछ जकर समिश्रणे एक अखण्ड भवक रूप मे प्रवाहित होइछ। दोसर पंक्ति मे बौद्धधर्मक संकेत पाओल जाइछ। साधारणतः बौद्धमत केँ माध्यमिक मत कहल गेल अछि। तीव्र वेग सँ प्रवाहित भेनिहारि भवनदीक एक किनार शून्यता तथा दोसर किनार करुणा थिक। एहि मे सँ कोनो एक केँ छोड़ि दोसराक आश्रय ग्रहण कएला सँ परमसत्य सँ च्युत भए पाँक मध्य फँसि जेबाक भय रहैछ। एहि दुहु केँ परस्पर मिलौले सँ बोधिचित्तक प्राप्ति होइछ। शून्यता वा प्रज्ञाक संग करुणा वा उपाय केँ मिलौला पर प्रज्ञा लोक केँ आत्म केन्द्रित निवृत्तिक संकीर्ण पथ पर नहि खींचि सकैछ तथा करुणा वा उपायक संग शून्यता वा प्रज्ञा केँ मिलौला सँ बोधिसत्वक आदर्श सँ अनुप्राणित कुशल कर्म समूहो कथमपि बंधनक कारण नहि भए सकैछ। काण्हपादक निम्नलिखित पद मे—

ते तिनि ते तिनि तिनि हो भिन्ना।
भणइ काण्हु भव परिच्छिन्ना॥
जे जे अइला ते ते गेला।
अवण गवणे काण्हु विमन भइला॥

कहल गेल अछि जे ओ तीन छथि, तीनू पृथक छथि। काण्ह कहैत छथि जे "सभ भव परिच्छिन्न अछि। जे अएलाह सएह गेलाह। एहि आवागमन सँ काण्ह अन्यमनस्क भए गेलाह।'

काण्हपाक उपर्युक्त पद अनादि अविद्याजनित मायाक स्वप्न मे प्रतिभात शून्यताक बीच भवबोध एवं अस्तित्वबोधक द्वारा समग्र पदार्थ केँ पृथक एवं परिच्छिन्न प्रतीतिक संकेत करैछ। एहि संसार प्रवाहक स्वरूप एवं ओकर भीतर निहित विशुद्ध विज्ञान-रूप सत्यक वर्णन लुइपाद निम्नलिखित पद मे एवंक्रमेँ करैत छथि—

भाव ण होइ अभाव ण जाइ।
अइस संबोहेँ को पतिआइ॥
लुइ भणइ वट दुलक्ख विणाणा।
तिअ धाए विलसइ उह लोग णा॥

जाहेर वाण चिन्ह रवण जाणी।
सो कइसे आगम वेएँ वखाणी॥
काहेरे किस भणि मइ दिवि पिरिच्छा।
उदक चान्द जिम साच न मिच्छा॥

"भावो नहि होइछ तथा अभावो नहि जाइछ। एहेन संबोध केँ के पतिया सकैछ। लुइ कहैत छथि जे ई विज्ञान नितान्त दुर्लक्ष्य थिक। ई तीन धातु मध्य विलास करैछ किन्तु एहि सँ कोनो उद्देश्यक प्राप्ति नहि होइछ। जकर कोनो वर्ण-चेन्ह नहि अछि तकर व्याख्या आगम-वेद सँ कोना भए सकैछ? ओकर सत्यता जलक चन्द्रमा सन अछि जे नैँ त सत्य थिक वा नैँ मिथ्ये।"

उपर्युक्त पद मे विज्ञानवादिक अनुसरण कएल गेल अछि। भाव एवं अभाव—(अस्तित्व एवं नास्तित्व)—एकर कोनो अंश नैँ त सत्य थिक वा नैँ मिथ्या। केवल दुर्लक्ष्य विज्ञानस्वरूप मात्रेटा सत्य थिक। ई समस्त अस्तित्व प्रवाहक मध्य तँ विलास करैछ किन्तु अभूत-परिकल्प कहाए ओ सम्पूर्ण 'अवाङ मनसगोचरम्' अछि। निम्नलिखित पद मे प्रतीत्यसमुत्पाद हेतु प्रतिभास संसारक अनुत्पन्नत्व एवं अनस्तित्वे केँ नाना रूप मे व्याख्या कएल गेल अछि। ओतए मिथ्या प्रतिभास प्रवाहक पश्चात् अन्य कोनो तरहक सत्य केँ कोनो तरहक रूप मे स्वीकार नहि कएल गेल अछि।

आइए अनुअनाए जगरे भाँतिएँ सो पड़िहाइ।
राजसाप देखि जो चमकिइ साँचे किता वोड़ो खाइ॥
अकट जोइआरे माकर हथा लोह्ना।
अइस सभावेँ यदि जग बूझसि तुटइ वासना तोरा॥
मरुमरीचि गन्धर्वनअरी दापन पड़िविम्बु जइसा।
वातावत्तेँ सो दृढ़ मइआ अपेँ पाथर जइसा॥
बान्धे सुआ जिमि केलि करइ खेलइ बहुविह खेला।
बालुआ तेलेँ ससरसिंगे आकाश पूलिला॥
राउतु भणइ कट भुसुकु भणइ कट सअला अइस सहाव।
जइ तो मूढ़ा अच्छसि भान्ती पुच्छतु सदगुरु पाव॥

"आदिए सँ अनुत्पन्न हेतु ई जगत भ्रान्ति द्वारे प्रतिभात होइत अछि। रज्जु-सर्प केँ देखि जे व्यक्ति चौंकैत अछि तकरा की वस्तुतः वोड़ा नामक साँप खाइत अछि? हे अकट (मूर्ख योगी)! अपन हाथ कथमपि खाली नहि

करब। एहि स्वभाव सँ जँ जगत केँ बुझलहुँ तँ अहाँक सभ वासना अन्तर्धान भए जाएत। आगाँ भुसुक जगतक स्वरूपक वर्णन करैत कहैत छथि—'जाहि प्रकारें मरुमरीचिका, गन्धर्व नगरी तथा ऐनाक प्रतिविम्ब अछि, जाहि प्रकारेँ पवनक तरंग मध्य जलक दृढ़ पाठर (जलस्तम्भ) रहैछ, जाहि प्रकारेँ वाँझक पुत्र खेलाइत अछि, ई सभ ओहि प्रकारक अछि जेना वालक तेल, गीदरक सींघ तथा आकाशक फूल रहैछ।' भुसुक कहैत छथि—सभहक इएह स्वभाव थिक। जँ अहाँ मूर्ख भए रहब तँ सत्गुरुक चरण मे अपन सभ भ्रान्तिक जिज्ञासा करू।''

जाहि प्रकारेँ व्यवहारिक जीवन मे वस्तुज्ञान रहैछ किन्तु ओकर पाँछा कोनो तरहक वस्तुसत्ताक होएब सम्भव नहि अछि तथा जेना चित्तविकल्पक द्वारा लोक सभ किछु स्वतः प्राप्त कए लैछ तहिना जगतक समग्र अस्तित्वक सम्बन्धहु मे सएह सत्य थिक जे अनादि अविद्याजात एक चित्त विकल्पक प्रतीतिमात्र थिक। असल मे ई एक पैघ निराधार भ्रम थिक।

काण्हपादक निम्नलिखित पद मे अभूत पारिकल्प विज्ञान महासुख रूप मे एक सर्वव्यापी शाश्वत आनन्दस्वरूप मे परिलक्षित होइछ तथा इएह महा-सुख-स्वरूप विज्ञानक आनन्द-स्वरूप सर्वव्यापी ब्रह्मक संग मोनक अज्ञाते मे संयुक्त भए जाइछ—

चिअ सहजे शुण संपुण्णा।
कान्ध वियोएँ मा होहिं विसण्णा॥
भण कइसे काण्ह नाहि।
फरइ अनुदिन तैलोए पमाइ॥
मूढ़ा दिठ नाठ दि देखि काअर।
भाग तरंग कि सोसइ साअर॥
मूढ़ा अच्छन्ते लोअ न पेखइ।
दूध-माझे लड़ अच्छन्ते न देखइ॥
भव जाइ ण आवइ एथू कोइ।
अइस भावे विलसइ काण्हिल जोइ॥

"चित्त सहज द्वारा शून्य सम्पूर्ण अछि। स्कन्ध वियोग सँ विषण्ण नहि होएबाक चाही। काण्ह नहि छथि ई कोना भए सकैछ? ओ सतत् त्रिलोक मध्य व्याप्त भए आनन्दक उपभोग करैत छथि। मात्र मूर्खेटा दृश्यवान केँ नष्ट होइत देखि दुखानुभव करैत अछि; तरंगक गति की

सागर केँ सोखि लैछ? हे मूर्ख! ओ ओकरा तहिना नहि देखैछ जेना दूध मे लोक चिकनाहट केँ नहि देखैछ।"

कोनो अस्तित्व ने तँ अबैछ वा ने समाप्ते होइछ। एवंक्रमे काण्हिल योगी विलास करैत छथि। एहि मे शून्यता नहि भए पूर्णतेक नामान्तर अछि। मृत्यु सँ सभ किछुक अन्त नहि भए एहि स्थूल देहक अवसान होइछ। पंचतत्वक वियोग मात्र होइछ। एहि पंचतत्वक वियोगक उपरान्त मात्र आनन्दमय सहज स्वरूप अवशिष्ट रहैछ। एहि आनन्दमय सहज स्वरूपक असल मे आनन्दमय सर्वव्यापी शाश्वत अस्तित्व अछि। ई आनन्दमय अस्तित्व एक सागर सन तथा व्यक्तिमात्रक जीवन ओकर प्रत्येक तरंग सन अछि। तरंगक उत्थान एवं पतन सँ जेना सागरक अस्तित्व एवं नास्तित्वक सूचना नहि प्राप्त होइछ तहिना एक आनन्दमय अस्तित्वक महासागर मे अविद्या विक्षुब्ध जे ई व्यक्तिमात्रक जीवनक तरंग थिक ओकरा द्वारा महासागर मे कोनो प्रकारक परिवर्त्तन सूचित नहि होइछ। पंचतत्त्वक वियोगक पश्चात् जे अखण्ड आनन्द स्वरूपक संग अभिन्न भए त्रिलोक व्यापी आनन्द विलास थिक, स्थूल दृष्टि सँ ओकरा देखबा एवं बुझबाक कोनोटा सम्भावना नहि अछि। मात्र सूक्ष्म दृष्टि सम्पन्न प्रज्ञसम्पन्न व्यक्तिएटा ओहि आनन्दमय आस्तित्वक अनुभव कए सकैछ। इएह सहजानन्द-स्वरूप शून्य-स्वरूप थिक अनित्य संसारक भीतर एकमात्र अपन वस्तु थिक। एहि हेतु सरहपाद कहैत छथि—

अदभुअ भव मोहरे दिसइ पर आप अप्पणा।
ए जगजल विम्बाकारे सहजेँ सुण अपणा॥

"ई भवमोह अद्भुत अछि। इएह तँ अपन एवं परायाक बोध करबैछ। एहि जल बिम्बाकार रूप जगत मे सहज से प्रतिष्ठित शून्य-स्वरूपे तँ आत्म-स्वरूप थिक जे मात्र अपन थिक।"

"सैद्धान्तिक अन्यान्य भेद होइतहुँ नागार्जुनक शून्यवाद एवं मैत्रेय, असंग तथा वसुबन्धुक विज्ञानवादक बीच एहि मे समानता अछि जे वस्तु जगतक जाहि प्रकारेँ कोनो पारमार्थिक सत्ता नहि अछि ओहि प्रकारेँ मनो-धर्म एवं ओहि मनोधर्म सँ उद्भूत आत्मबोध वा पुद्गल बोधहुक कोनो टा पारमार्थिक सत्ता नहि अछि। वस्तुक असारता केँ साधारण रूप सँ धर्म

नैरात्म्य एवं आत्मबोधक असारता केँ पुदगल नैरात्म्य कहल जाइछ। एवं-क्रमेँ दुहु रूप मे नैरात्म्यक प्रतिष्ठो शून्यक प्रतिष्ठा थिक।

बौद्ध शिद्धायार्चक चर्यागीत एवं दोहा मे चतुः शून्य तत्वक व्याख्या विभिन्न रूप मे कएल गेल अछि। कारहपाद—'पत्त चउट्ठ चउ-मृणाल चिअ महासुह वासेँ'—महासुखक आवास स्थान मे चारि पत्र एवं चारि मृणालक रूप मे वर्णन करैत छथि। चर्याकार सहजिया बौद्ध छलाह। सहजिया बौद्ध धर्मक उत्पत्ति महायान सँ भेल। साधनाक क्षेत्र मे सहजिया साधकगण शून्यता एवं करुणा केँ जेना समिश्रण कएल तकरा छोड़ियो अन्यान्य विविध रूप मे चर्यापद मे एहि करुणा एवं शून्यताक एकीकरणक उल्लेख उपलब्ध होइछ। बौद्ध चर्यागीत दोहा एवं बौद्ध तन्त्र मे एहि करुणाक बड़ प्रभाव पाओल जाइछ।

सरहपादक जन्मस्थान पूर्व दिशाक राज्ञी नगरी थिक जे प्रायः भागल-पुर वा पुर्णियाक अन्तर्गत छल।[६] हिनक पूर्वक नाम राहुलभद्र तथा सरोज बज्र छलैन्ह। हिनक शिक्षा नालन्दा मे भेलैन्ह तथा पश्चात् ओतएक ओ अध्यापक सेहो भेलाह। सिद्धाचार्यक पूर्व ओ शास्त्रक अध्ययनक संगहि काव्यक अवगाहन सेहो कएलैन्ह।

सरहपाद विचार दुनियाक संग समाजक विरोधी छलाह। ओ अपन दोहाकोश–चर्यागीतिक प्रथम १२ दोहा मे तत्कालीन धार्मिक संप्रदाय एवं ओकर विचारक खण्डन कएलैन्ह अछि जकर किछु अंश उदाहरणरूप मे एहि प्रकारे प्रस्तुत कएल जाइछ :—

जइ णग्गाविअ होइ मुत्ति, ता सुणह सिआलह ॥६॥
लोमु पाडणें अत्थि सिद्धि, ता जुवइ णिअम्बह।
पच्छीगहणे दिट्ठ मोक्ख, ता मोरह चमरह ॥७॥
उञ्छे भोअणें होइ जाण, ता करिह तुरङ्गह।
सरह भणइ खवणाण मोक्ख, महु किम्पि न भावइ[७] ॥८॥

अर्थात् "जँ नग्न रहला सँ मुक्ति प्राप्त हो तँ कुकुर एवं गदीरो मुक्त भए सकैछ, मयुरक पाँखि ग्रहण कएला सँ जँ मोक्ष उपलब्ध हो तँ मयुर एवं चमरी

६ राहुल सांकृत्यायन, दोहाकोश, भूमिका, पृ० १०
७ ओएह, पृ० ३

सेहो मुक्त भए सकैछ तथा शिला चुनि खएला सँ जँ ज्ञानक प्राप्ति हो तँ हाथी एवं घोड़ा सेहो ज्ञानी भए सकैछ ।"

तत्कालीन अनेक मूढ़ प्रचलित विश्वासक खण्डन सरहपाद अपन पद्य मे कएलैन्ह अछि। जेना एहि—

गुरु—बअण—आमिअ—रस, धवहिं ण पिविउ जहिं ।
बहु सात्यात्थ मरुत्थलिहिं, तिसिअ मरिव्वो त्तेहि[८] ॥४४

पद्य मे शास्त्र कें मरुस्थल कहल गेल अछि जकर चक्कर मे पड़ला पर लोक पुनि बाहर नहि भए सकैत अछि ।

सरह निष्कपट एवं सरल जीवनक पक्षपाती छलाह। बाहरी आडम्बर एवं ढकोसलापन सँ हुनका घृणा छलैन्ह । ओ तरह-तरहक भेष आदिक निन्दक तथा इन्द्रिय संयमक यद्यपि प्रसंशक छलाह किन्तु इन्द्रिय संयमक चरम रूपक ओ विरोधी छलाह जे हुनक एहि उक्ति सँ पुष्ट होइछ—

घरहि म थक्कु म जाहि वणे, जहि तहि मण परिआण।
सअलु णिरन्तर बोहि—ठिअ, कहिं भव कहिं णिब्वाण।
णउ घरे णउ वणें बोहि ठिउ, एहु परिआणहु भेउ।
णिम्मल चित्त-सहावत्ता, करहु अविकल सेउ[९] ।

तथा

त्रिस आ सत्ति म बन्ध करु, अरे वढ़ सरहें बुत्त ।
मीण पअङ्गम करि भमर, पेक्खह हरिणह जुत्त ।

जकर तात्पर्य थिक जे "नै घर मे रहू आ नै वन मे सभ स्थान मे तँ निरन्तर परमज्ञान स्थित अछि पुनि कतए संसार और कतए मोक्ष ? परमज्ञान नै तँ घर मे रहैछ वा नै वन मे। एहि भेद कें यथार्थ रूप मे बुझबाक चाही। चित्त निर्भरता सर्वोपरि थिक जकर सर्वदा सेवेन करवाक चाही ।"

"रस-रूप-स्पर्श-गंध-शब्दक लोभ मे पड़ि मीन, पतंग, भ्रमर, हाथी तथा हरिण नष्ट भए जाइछ ।"

पुनि सरह कहैत छथि—

खाअन्तें पीवन्तें सुरअ रमन्तें ।
आलिउल बहलहो चक्क फरन्तें ॥

---

८ ओएह, भूमिका, पृ० २६
९ ओएह, पृ० २७

एवहि सिद्धि जाइ परलोकह ।
माथे पाअ देइ भुअलोक ॥

तथा सहज जीवनक निर्देश करैत ओ पुनः कहैत छथि—

देक्खउ सुनउ पईसउ साद्दउ ।
जिग्घउ, भमउ बईसउ उट्ठउ ॥
आलमाल बवहारें बोल्लउ ।
मण च्छुड्डु एकाआरे म्म चलउ ॥
चिन्ताचित्तवि परिहरहु ।
तिम अच्छहु जिम बाल ॥

सरहपादक एहि कथन सँ स्पष्ट अछि जे ओ जीवनक भोग केँ त्याज्य नहि मानैत छथि। ओहि मे आसक्ति त्याज्य थिक। उपनिषद्क सन्त हुनका सँ डेढ़ हजार वर्ष पूर्व ज्ञानी केँ 'बाल्येन तिष्ठासेद'क उपदेश देल। सरह सेहो कहैत छथि जे ओहिना रहू जेना बालक रहैत अछि। आसक्ति एवं छद्मपूर्ण जीवनक ओ विरोधी छलाह। सरहक दृष्टि मे मुक्ति स्वतः सिद्ध वस्तु थिक। जीवनक कल्पना मिथ्या थिक तथा परमार्थ मे एकमात्र ब्रह्म सत्य थिक। जगतक क्षणिक किन्तु मूल्यवान स्थिति केँ मानैत ओ जगतक महत्त्व केँ स्वीकार कएल तथा प्रत्यक्ष केँ छोड़ि परोक्षक पाछाँ जएबा केँ ओ मूर्खता कहलैन्ह। सरहक दृष्टि मे परमपद मनक एक विशेष अवस्था थिक—

जहिं म्मण मरइ, पवणहो तहि खअ जाइ।
एहु सो परममहासुह, सरह कहिहउ जाइ ॥[10]

"मनक शंकायुक्त स्थिति तथा ओकर चंचलता केँ हटला पर परम महासुखक स्थिति अबैत अछि।" ओहि स्थिति केँ और अधिक स्पष्ट करैत ओ कहैत छथि —

जहि मण पवणण संचरइ, रवि-ससि णाहिं पवेस।
तहिं बढ़ चित्त विसाम करु, सरहें कहिअ उएस ॥
एक्क करु मा वेण्णि करु, मा करु विण्णि विसेस।
एक्के रंगे रञ्जिया, तिहुअण सअलासेस ॥[11]

अतएव ई स्पष्ट अछि जे सरहपाद नव भाषा एवं छन्दक आदिकवि

१० ओएह, पृ० ८, पद ३०
११ ओएह, पृ० १२, प० ४९-५०

थिकाह जे प्राकृत सँ अपन सम्बन्ध तोड़ि आधुनिक मैथिली भाषा मे पद्यक रचना कएलैन्ह जे पश्चात् सिद्ध लोकनिक भाषा बनल।

दोहाकोशक लिपि केँ महापण्डित राहुल सांकृत्यायन कुटिलाक (वर्तुलक) पश्चात्क सम्भवतः १२ म शताब्दीक मागधी मानैत छथि।[१२] महापण्डितक एहि तरहक उक्ति भ्रामक थिक। किएक तँ ओहि युग मे मागधी नामक ने तँ कोनो लिपिक वा ने कोनो भाषेक पता पाओल जाइछ। ओहि युगक उत्तर एवं दक्षिण, पूर्व एवं पश्चिमक समग्र बिहार सँ जे किछु शिला-लेख उपलब्ध भेल ओ सभ केँ सभ मिथिलाक्षर मे अंकित अछि। अतएव दोहाकोशक लिपि केँ मिथिलाक्षर मानबे उचित थिक।

सिद्ध सरहपादक एक दोसर शिष्य शबरपा छलाह। ओ शबर (कोल-भील) सदृश वेश-भूषा धारण करैत छलाह एहि हेतु ओ शबरपा नाम सँ प्रख्यात भेलाह। महापण्डित राहुल सांकृत्यायनक अनुसार हिनक जन्म स्थान विक्रमशिला छलैन्ह। सरहपादक शिष्य परम्परा मे हिनक स्थान तेसर छल।

शबरपा रहस्यवादी विचारक छलाह। हिनक श्लेष परमपद-परक भेलहु साधारणतः कामुकता केँ प्रकट करैत अछि। फलतः ओ पश्चात् घोर वामाचारक सहायक बनि गेलाह जकर पुष्टि हुनक निम्न गीत सँ होइछ—

उँचा उँचा पावत तहिं बसइ सबरी बाली।
मोरंगी पिच्छ परहिरहि सबरी गीवत गुजरी माला ॥ध्रु०॥
ऊमत सबरो पागल सबरो, माकर गुली-गुहाडा,
तोहारि णिअ घरिणी सहज सुन्दरी ॥ध्रु०॥
णाणा तरुवर मौलिल रे, गअणत लागेलि डाली।
एकली सबरी ए वन हिण्डइ, कर्णकुंडल वज्रधारी।
तिअ धाउ खाट पडिला सबरो, महासुह सेजिज छाइली।
सबरो भुजंग णइरामणि दारी, पेक्खत राति पोहाइली।

---

१२ ओएह, भूमिका, पृ० ६८

हिय ताबोला महासुहे कापुर खाई।
सून निरामणि कण्ठे लइआ महासुहे राति पोहाई।
गुरु वाक पुंछआ बिन्ध णिअ मणे वाणें।
एके शर-सन्धानें विन्धह, विन्धह परम णिवाणें।
उमत सबरो गेरुआ रोषे;
गिरिवर सिहर सन्धि पइसन्ते, सबरो लोडिव कइसे।[१३]

"ऊंच पर्वत पर शवर-वालिका बैसल छथि जकर माँथ पर मयूरक पाँखि तथा गरा मे गुंजाक माला छैक। ओकर प्रेमी शबर प्रेम मे उन्मत्त अछि। हे शवर! अहाँ हल्ला-गुल्ला नहि करू। अहाँक गृहिणी सहज सुन्दरी छथि। ओहि पर्वत पर नाना प्रकारक तरुवर फुलाएल अछि जकर डारि गगन मण्डल केँ स्पर्श करैत अछि। कान मे कुण्डल वज्र धारण कए शवरी एकसरे वन मध्य घूमैत अछि। शवर दौड़ि कए महासुख सेज पर पड़ि रहलाह। शवर भुजंग (विट) एवं नैरात्म्य (शून्यता) वेश्या (दारी) केँ देखैत राति बीताओल। हृदय तांबूल केँ महासुखरूपी कपूरक संग खाए, शून्य नैरात्मा केँ गरा लगाए महासुख मे राति बीतल। गुरु वचन पूछि अपन मोनरूपी वाण सँ बेध—एके शर-सन्धान सँ परम निर्वाण केँ वेधल।"

किछु विशेष सांकेतिक शब्द केँ छोड़ि ई एक शृंगारिक पद्य थिक। शबर साधक थिकाह। बुद्धक सिद्धान्तक अनुसार जगत्, आत्मा एवं ब्रह्म रहित नहि थिक। ओ सभ के सभ आत्म-रहित, निरात्मा वा नैरात्म्य थिक। ओहि नैरात्म्य तत्व-शून्यता केँ साक्षात्कार करब थिक। ओकर साक्षात्कार महासुखक अनुभूति थिक जकरा योगी ध्यान मग्न भेला पर प्राप्त करैत छथि।

लूइपाद राजा धर्मपालक (७६६-८०६ ई०)[१४] कायस्थ लेखक छलाह। ओ शबरपाक शिष्य छलाह। हिनक लूहिपा तथा मत्स्यान्त्राद आदि अपर नाम छल। तिब्बतीय स्तनग्युर मे हिनका भंगल देश वासी[१५]

---

१३ ओएह, भूमिका, पृ० २५
१४ राहुल सांकृत्यायन, पुरातत्व निवंधावली, पृ० १४३
१५ धर्मवीर भारती, सिद्ध साहित्य, पृ० ५१

Scanned by CamScanner

कहल गेल अछि। हिनक निम्नलिखित पद्य सँ ज्ञात होइछ जे अपन गुरु सन इहो रहस्यवादक पक्षपाती छलाह[१६]—

काआ तरुवर पञ्च वि डाल।
चञ्चल चीए पइठो काल॥
दिट करिअ महासुह परिमाण।
लुइ भणइ गु पच्छिअ जाण ॥ध्रु०॥
सअल समाहिअ काहि करिअइ।
सुख दुखेतें निचित मरिआइ॥
एड़िएउ छान्दक बान्ध करणक पाटेर आस।
सुनु पाख भिति लाहु रे पास ॥ध्रु०॥
भणइ लुइ आम्हे साणे दिठा।
धमण-चमण वेणि पाण्डि बइण ॥ध्रु०॥

चर्याचर्यविनिश्चयक टीका मे दारुड़ीपादक (दारिकपा) निम्नलिखित श्लोक पाओल जाइछ—

"प्राणी वज्रधरः कपालः वनितातुल्यो जगत स्त्रीजनः
सोऽहं हेरुक भूर्तिरेष भगवान योनः प्रभिन्नोऽपिच।"

जाहि मे कहल गेल अछि जे "प्राणी वज्रधर, जगतक स्त्री कपाल वनिता तथा साधक हेरुक थिक।"

दारिकपा उड़ीसाक राजा छलाह जे सिद्ध लुइपाक शिष्यत्व ग्रहण कएलैन्ह। यद्यपि ई मिथिला क्षेत्रक नहि छलाह किन्तु हिनक भाषा पर विक्रमशिलाक तत्कालीन भाषा एवं अपन गुरु लुइपाक बड़ प्रभाव बुझना जाइछ। हिनकर एहि गीत मे—

सुनकरुणरि अभिन वारें काअ-वाक्-चिअ,
विलसइ दारिक गअणत पारिमकुलें ॥ध्रु०॥
अलक्ष-लख-चित्ता महासुहे, बिलसइ दारिक ॥ध्रु०॥
किन्तो मन्ते किन्तो तन्ते किन्तो रे झान बखाने।
अपइ ठानमहासुहलीणे दुलख परम निवाणें ॥ध्रु०॥
दुखे-सुखे एकु करिआ भुञ्जइ इन्दीजानी।
स्वपरापर न चेवइ दारिक सअलानुत्तर माणी ॥ध्रु०॥

१६ राहुल सांकृत्यायन, पुरातत्व निबंधावली, पृ० १४४

राआ राआ राआरे अवर राअ मोहेरा वाघा,
लुइ-पाअ-पए दारिक द्वादशभुअणें लघा ।।ध्रु०।।

राज्य कें मोहक वंधन कहल गेल अछि तथा ओ लुइपाक आश्रय प्राप्त कए चौदहो भुवन प्राप्त कए लेलैन्ह। वस्तुतः सिद्धिक निमित्त गुरुए समस्त श्रेयक मूल थिकाह।

यद्यपि सहजयानी सिद्ध अक्षयनिरंजन-निरालंब शून्य कें नमस्कार करैत छथि तथा एक अनिर्वचनीय शून्य कें अपन उपास्य मानैत छथि तथापि ओ लोकनि सरहपादक महासुख सत् आनन्दे कें चरम प्राप्तव्य बुझए लगलाह तथा सहजयानी एवं वज्रयानी साधक शून्य कें निषेधात्मक नहि मानि विद्यात्मक वा धनात्मक रूप मे बुझए लगलाह। एहि भावक निमित्त ओ लोकनि सुखराज वा महासुख शब्दक व्यवहार अपन पद मे कएलैन्ह अछि।

साधकक अनुसार चारि प्रकारक आनन्द छल—प्रथमानन्द, परमानन्द, विरमानन्द तथा सहजानन्द। अन्तिम एवं श्रेष्ठ आनन्द सहजानन्द, सुखराज वा महासुख थिक जे अनुभववैकगम्य होइत छल। ओहि मे इन्द्रिय बोध लुप्त भए जाइत छल तथा आत्मभाव विलुप्त भए मात्र रूप मे अवस्थित होइत छल। सरहपाद एहि भावक निमित्त कहैत छथि—

इन्दिअ जाथ बिलअ गउ
णट्ठिउ उप्प सहावा।
सो हले सहजन तनु फुड़
पुच्छहि गुरु पावा ।।

नाडपादक सेकोद्देशक टीका मे एवंक्रमक भाव एहि प्रसंग मे व्यक्त कएल गेल अछि—

जयति सुखराज एष कारण रहितः सदोढितो जगताम।
यस्य च निगदन समये वचन दरिद्रो वभूव सर्वज्ञः ।।

—पृ० ८६३

सरहपाद अपन एक दोसर पद मे एहि सुखराज के एवंक्रमें कहैत छथि—

आइ ण अन्त ण मज्झ णउ,
णउ भव णउ णिब्बाण।

एहु सो परम महासुह,
णउ पर णउ अप्पाण[१७]

अर्थात ई सुखराजे सार एवं शून्यावस्था थिक। एकरा "ने तँ आदि, ने अन्त आने मध्य अछि। एहि मे ने तँ अपन ज्ञान रहैछ आ ने दोसराक। ई ने तँ जन्म थिक, ने मोक्ष, ने भव, ने निर्वाण।"

सिद्ध साहित्य मे कण्हपाक गीतक बड़ पैघ स्थान अछि। (८०६-८४६)[१८] ई महाराज देवपालक समय मे एक प्रसिद्ध भिक्षु छलाह। चौरासी सिद्ध मध्य कवित्व एवं विद्या दुहुक दृष्टि सँ हिनक स्थान नितान्त महत्त्वक अछि। हिनक अनुसार एहि शरीरे मे चरम प्रातव्यक प्राप्ति होइछ। शरीरक जे मेरुदण्ड थिक तकरहि कंकाल दण्ड कहल जाइछ। एकरहि मेरु पर्वत कहल जाइछ। श्रीसम्पुटतन्त्र मे कहल गेल अछि जे पयरक तरबा मे भैरव-रूप धनुषाकार वायुक स्थान अछि। कटिदेश मे त्रिकोण उद्धरण अछि जकर तीन दल पर वर्त्तुलाकार वरुणक वास तथा हृदय मे पृथ्वी रहैछ जे चतुरस्त्र भाव सँ सभ दिशा व्याप्त अछि। एहि प्रकार कंकाल-दण्डक रूप मे गिरिराज सुमेरु स्थित छथि। एहि गिरिराजक कन्दर कुहर मे नैरात्म धातु जगत उत्पन्न होइछ। एहि गिरि कुहर मे स्थित पद्म मे यदि बोधिचित्त पतित होइछ तँ कालाग्निक प्रवेश होइछ तथा सिद्धि मे वाधा पड़ैछ। कण्हपाक वज्रगीत एवं क्रमकपाओल जाइछ—

कोल्लअ रे ठिअ बोल्ल, मुम्मुणि रे कक्कोल ॥
घन किपीटह बज्जइ, करुणे किअइ णरोला।
तहि पल खज्जइ, गाढ़ें मअ णा पिज्जइ।
हले कलिञ्जर पणिअइ, दुन्दुर वज्जिअइ।
चउसम कत्थुरि सिल्हा, कप्पुर लाइअइ।
मालइ घाण-सालि अइ, ताहिं भलु खाइअइ।
ऐंखण खेट करन्त, शुद्धाशुद्ध ण मणिअइ।
निरंशु अंग चडावि अइ, तहिं जस राव पणिअइ।
मलअजे कुन्दरु, वापई, डिण्डिम तहिन्न वज्जि अइ ॥

---

१७ ज० डि० ले०—भाग, पृ० १३
१८ राहुल सांकृत्यायन, पुरातत्व निवंधावली, पृ० १५५

ठीक एहि तरहक भाव डोम्भिपाक गीत मे सेहो पाओल जाइछ। डोम्भिपा मगधदेशक बासी छलाह। विणपा एवं विरूपा दुहु हिनक गुरु छलथिन्ह। ई हेवज्रतन्त्रक अनुयायी छलाह। हिनक निम्नलिखित गीत मे—

नगर बारिहिरे डोम्बो तोहोरि कुड़िया,
छइ छोई याइ को बाह्म नाड़िआ ॥ध्रु०॥
आलो डोम्बि तोए समकरिबे म सांग।
निघिण काहण कापलि जोइ लाग ॥ध्रु०॥
एकसो पद्मा चौषट्ठी
तहिँ चढ़ि नाचअ डोम्बी वापुडी ॥ध्रु०॥
हालो डोम्वि तो पुछमि सद्भावे,
अइससि जासि डोम्बि काहरि नावँ ॥ध्रु०॥
तान्ति विकणअ डोम्बी अवर ना चंगता,
तोहोर अन्तरे छाड़िनड़ एट्टा ॥ध्रु०॥
तु लो डोम्बी हाउँ कपाली,
तोहोर अन्तरे मोए घलिलि होड़ेरि माली ॥ध्रु०॥
सरबस भाञ्जीअ डोम्बी खाअ मोलाण,
मारमि डोम्बी लेमि पराण ॥ध्रु०॥

अवधूती नाड़ी केँ डोम्बिनी वा डोमिन तथा चंचल चित्त केँ ब्राह्मण कहल गेल अछि। डोमिन सँ छूत हेबाक भय सँ ओ ब्राह्मण भागल फिरैत अछि। विषयक जंजाल एक नगर थिक तथा अवधूती रूपी डोमिन एहि नगर सँ बाहर रहैछ। एहि गीत मे वर्णित छुआछूत सँ पड़ाएबाक तात्पर्य अबधूती वृत्ति सँ थिक। चौसठ पंखुड़ीक दल पर डोमिनक नांचबाक तात्पर्य जालंधर नामक शिखर पर स्थित उष्णीषकमल सँ अछि। एवंक्रमेँ हुनक कहबर जे मंत्र-तन्त्र निरर्थक तथा अपन गृहणीक संग आनन्दक उपलब्धिएटा एकमात्र आनन्द थिक, एहि सँ तात्पर्य अवधूतीक संग बिहार करबाक प्रसंगक थिक।

एवंक्रमेँ कतिपय सिद्ध जनिकर जन्म स्थान मिथिला क्षेत्र मे छल वा हुनकर सम्बन्ध विक्रमशिला सँ छलैन्ह अपन पद्यक माध्यम सँ मैथिली केँ गौरवान्वित कएल। एहि मे भुसुकपा, शान्तिपा, जयानन्तपा एवं निर्गुणपा आदिक[१९] नाम प्रख्यात अछि जे अपन पद्य-रचना सँ मैथिलीक साहित्यक उत्तरोत्तर वृद्धि कएल।

१९ शिवपूजन सहाय हिन्दी साहित्य और बिहार

मैथिलीक गीति काव्य मे विनयश्रीक स्थान १३म शताब्दीक आदि काल मे सर्वोच्च पाओल जाइछ।

विनय श्री[२०] अपन गुरु तथा भारतक संघराज शाक्यश्रीभद्रक संग १२०३ ई० मे विक्रमशिला एवं जगत्तला केँ तुर्क द्वारा नष्ट भेलाक उपरान्त तिब्बत पहुँचलाह। ओहि समय हुनकर वयस ३५ वर्ष छलैन्ह। महापण्डित राहुल सांकृत्यायन केँ ताल पत्र पर लिखल विनयश्रीक १४ गोट गीत प्राप्त भेल सिद्धक टकसालक गीत छल, जकर भाषा १२म तेरहम शताब्दीक विक्रमशिला क्षेत्र मे बाजल जाइत छलैक। विनयश्रीक एक पद्य मे—गेल्लिअहुं' शब्द अद्यावधि ओतए एहि अर्थ मे प्रयुक्त होइछ।

विनयश्रीक परिमार्जित एवं परिष्कृत गीत आधुनिक मैथिलीक प्रारूप थिक जे सरहक रहस्यमयी भाषा मे परमतत्वक वर्णन करैत अछि —

निमूल तरुवर डाल न पाती ।
निभर फुल्लिल्ल पेखु बिआती ॥१॥
भणइ बिनयश्री नोखौ तरुवर ।
फुल्लेए करुणा फलइ अणुत्तर ॥
करूणा मोदें सएलवि तोसए ।
फल संपत्तिएँ से भव नासए ॥२॥
से चिन्तामणि जे जइ सबासए ।
से फल मेलए नहि ए सांसए ।
वरगुरु भत्तिएँ चित्त पवोही ।
तहि फल लेहु अणुत्तर बोही ॥३॥
गेल्लिअहुं गिरिसिहर रि जातें ।
तहिं झंपाविल्लि कलिके अन्ते ॥४॥
हल कि करमि सहिएँ एकेल्लि ।
बिसरे राउ लेल्लइ पेल्ली ।
तहिं झंपइ टठेल्लि हेरुअ मेले ।
भणइ विनयश्री वरगुरु-बएणे ।
नाह न मेल्लअ रे गमणे ॥५॥

सरह तत्त्व केँ मूलरहित तथा विनयश्री निमूल तरुवर कहलैन्ह अछि। करुणाक फूल फुलाएब एवं अनुत्तरक फल फरबो तँ सरहेक कथनक रूपान्तर

२० राहुल सांकृत्यायन, दोहा कोश, भूमिका, पृ० १७

थिक। गिरि शिखर मे गेल्हिअहु'क सरहक गीत "ऊँचा-ऊँचा पावत" मे संकेत भेटैछ। सरह वा सिद्ध परम्पराक ई पद्य थिक। विनयश्रीक भाषा १२म शताब्दीक उत्तरार्द्धक भाषा थिक जे अपभ्रंश भेलहुँ आधुनिक मैथिली दिश मोड़ लेलक।

सरहक एवं आन-आन अपभ्रंश कृति मे भूतकालक निमित्त इल प्रत्ययक प्रयोग नहि पाओल जाइछ। जतए ओकर प्रयोग देखल जाइछ ओ पश्चातक लिखल हस्तलेख मे लेखक द्वारा कएल गेल परिवर्त्तनक निमित्त अछि। किन्तु एतए विनयश्रीक स्वतः अपनहि हस्तलेख मे फुल्लिल्ल, गेल्लि-अहु' एवं झंपाविल्ल सन इल-प्रत्ययान्त शब्द उपस्थित अछि जकर प्रयोग अहुखन मैथिली मे होइत अछि।

प्राकृतक काल मे व्यञ्जनक स्वर मे जे परिवर्त्तन भेल ओ अपभ्रंश कालहु मे ओहिना रहल तथा तरुवरक स्थान मे तरुअरे सरहक दोहाकोश मे पाओल जाइछ। किन्तु विनयश्री तरुवर लिखि कए प्राकृत अपभ्रंशक चरम विकारयुक्त व्यञ्जनक स्थान मे स्वरक परम्परा कें छोड़ि तत्सम रूपक दिश फिरलाह। एतबेक नहि अपन नामहु मे ओ एहि बातक अनुसरण करैत छथि। प्राकृत अपभ्रंशक नियमानुसार हुनका अपन नाम विनअसिरि लिखबाक चाहैत छलैन्ह किन्तु ओ ओहि स्थान मे शुद्ध तत्सम रूप विनयश्री कें प्रयोग कए मैथिलीक अग्रिम प्रारूप कें निर्धारित कएलैन्ह।

दोहा एवं चौपाईक अतिरिक्त सिद्ध लोकनि अनेक गीतहुक रचना कए-लैन्ह। एहि गीतक संग ओ लोकनि भिन्न-भिन्न रागक नाम सेहो लिखल जाहि सँ बुझि पड़ैछ जे राग रागिनीक परिपाटी ईसाक आठमे शताब्दी मे मिथिला मे देशी भाषा मध्य प्रचलित भए गेल छल।

वस्तुतः मिथिलाक जीवन मे संगीत कें बड़ विशिष्ट स्थान अछि। महाराज नान्यदेव (१०९७–११३३ ई०) देशी राग ओ रागिनि कें जनप्रिय बनाओल, हुनक ग्रन्थ 'सरोस्वती हृदयलंकारहार' जकरा ओ मिथिलाक राज्य प्राप्तिक उपरान्त निर्माण कएल, संगीतक अपूर्व ग्रन्थ मानल जाइछ।[२१] तत्-पश्चात जयदेव (११००-१२०० ई०) प्रख्यात गीतगोविन्दक कर्त्ता मिथिलाक संगीत कें नितान्त प्रभावित कएल।

गीतगोविन्दक रचयिता जयदेवक पिताक नाम श्रीभोजदेव, माताक राधा देवी वा रामा देवी तथा स्त्रीक नाम पद्मावती छल।* हुनक वृत्तिग्राम

२१ आन्ध्र हि० सो० प०, भाग १
* गीतगोविन्द, श्लोक ११ सर्ग १२

किंदु विल्व छल ।† श्रीयुत राखाल दास बनर्जी अपन ग्रन्थ "दी पालाज आफ
बेंगाल" मे केंदुली ग्राम कें "बंगालक वीर भूमि प्रांत मे" मानैत छथि। एहि
प्रसंग मे हमर कहब अछि जे मैथिल ब्राह्मणक बेलौचें एक मूलग्राम पाओल
जाइछ। सम्भवतः ई मूल किन्दु विल्वहि सँ निस्सृत भेल हो। खाहे जे किछु
हो जयदेवक बास स्थान बंगाल, मिथिला वा उत्कल रहौऽ गीतगोविन्दक प्रभाव
मिथिला पर तेहेन नै पड़ल जे अद्यावधि लोक सखवारक दरवारी दासक मूहेँ
गीतगोविन्द सुनबाक निमित्त सतत् उत्कण्ठित रहैछ। एतबेक नहि गीतगोविन्दक
प्रत्यक्ष प्रभाव बिद्यापतिक गीत पर पाओल जाइछ तथा शंकर मिश्र प्रभृति
कतिपय विद्वान एहि ग्रन्थ पर टीका लिखलैन्ह। रतिपति भगत नामक एक
मैथिल कर्ण कायस्थ तँ एहि ग्रन्थ कें मैथिली मे अनुवादो कएलैन्ह।‡

जयदेव बङ्गाधिपति महाराज लक्ष्मण सेनक एक दरवारी कवि छलाह। हुनकर समकालीन कवि गोवर्धन, धोयी, श्रुतधर, शरण तथा उमापतिधर छलाह जनिकर संग पञ्चम कवि जयदेव कें मिलाए लक्ष्मण सेनक पञ्चरत्नी सभा विक्रमादित्यक नवरत्न सँ मण्डित राजसभा सँ कतहु अधिक ऐतिहासिक सत्यताक निमित्त प्रतिस्पर्धा करैत छल जाहि मे सँ अधिकांश सभासद् मैथिल छलाह। अतएव गीतगोविन्दक कर्त्ता जयदेव वा तँ मैथिल छलाह वा हुनकर सम्बन्ध मिथिला सँ बड़ घनिष्ट रहला सन्ता हुनकर गीत समग्र मिथिला मे बड़ प्रेम सँ गाओल जाए लागल।

गीतगोविन्द मे नाटकीय लक्षणक अनुसार कथावस्तुक विविध अङ्कक अन्वेषणक वितथ प्रयास थिक जतए कवि अपन प्रतिपाद्य विषय कें बारह सर्ग एवं चौबीस प्रबन्ध मे विभाजित कए विविध प्रकारक गेय पद्य मे प्रस्तुत कएलैन्ह। गीत कृष्ण, राधा एवं हुनक सखी द्वारा गाओल जाइछ। गीतक उपक्रम विभिन्न वृत्त मे ग्रथित पद्य द्वारा प्रस्तुत कएल जाइछ तथा अन्त मे कृष्ण के सम्बोधित कविकृत विनय पाओल जाइछ।

कहल जाइछ जे अन्त्यानुप्रासक संग संस्कृत काव्य मे प्रचलित मध्य-यमकक प्रयोग अपभ्रंश रूपान्तर सँ परिगृहीत कएल गेल अछि किन्तु प्रस्तुत रचना कोनो आदर्श कें सम्मुख राखि रचल गेल अछि एहेन कल्पना भ्रममूलके कहल जा सकैछ। प्रत्युत ई तँ काव्य-कलाक अत्यन्त विकसित एवं अपना तरहक एक अद्भुत रूप थिक जे संस्कृत भाषाक सविशेष सौन्दर्यक

† किंदु बिल्वो जयदेव कुलवृत्ति ग्रामः शंकर मिश्रक रस मंजरी टीका।
‡ आचार्य परमानन्द शास्त्री द्वारा प्रकाशित

एहेन अवदान प्रदान करैछ जकर समक्ष अपभ्रंश भाषा कथमपि नहि आबि सकैछ।

गीतगोविन्दक शैली, रसानुरूप श्रुति-स्वारस्यक संसाधान मे ओकर कला अप्रतिम अछि। वर्णनीय वस्तु बहुत सरल अछि। कृष्ण अपन प्रियतमा राधा केँ बिसरि अन्य गोपीक संग रास-लीला मे मग्न तथा राधा बिरह मे उत्कण्ठित भए रस विह्वला भए गेलीह। सहचरीक प्रयासक फलस्वरूप कृष्ण पुनि राधाक सम्पर्क मे अएलाह। अन्ततः पुनि संयोगक आमोद-प्रमोदक संग काव्यक उपसंहार होइछ।

भारतीय प्रणयक स्वरूप थिक—अभिलाष, मान, प्राप्त्याशा, निर्वेद, अमर्ष, पर्युपासन एवं फलागम जाहि मे प्रकृति सौंदर्य सतत् मानव भावनाक संग ओत-प्रोत रहैछ। जयदेव वासन्ती ज्योत्सनाक महिमाक गीत गौलैन्ह अछि। हुनकर गीत कुञ्ज मे स्थित तरुवृन्दक अन्तराल मे प्रस्फुटित रसाभाव केँ उद्दीपित, सुरभि मलयमारुत तथा सर्वविजेता मदनक महिमा स सम्बद्ध पाओल जाइछ। पक्षिगण जयदेवक गीतक मनोहर विषय थिक। भारतीय सौन्दर्यक सर्वाङ्ग स्वरूप केँ अङ्कित करैत कविप्रवर वात्स्यायनीय कामकलाक विविध अङ्ग केँ गीत रूप मे परिणत कए मधुवर्षण कएल।

मानवाक थिक जे जयदेवक कृति मे कृष्ण केँ भगवत्स्वरूपक चित्रण नहिए सन अछि। यत्र-तत्र केवल संकेते टा पाओल जाइछ जे ओ सर्वशक्तिमान प्रभु थिकाह जे सांसारिक यातनाक मुक्ति मे सामर्थ्य सँ सम्पन्न छथि तथा ई मात्र कल्पना थिक जे प्रभुक ब्रजाङ्गनाक संग लीला मे जीवात्माक मोहजाल मे बन्धन तथा विविध द्वन्द्व मे उलझन एवं परिणाम मे राधाक मिलन परम्ब्रह्मक संग परमैक्यक भावनाक प्रतीति थिक। जयदेवक विचारेँ कृष्ण-कथा एक वास्तविक तथ्य थिक जाहि मे जन सामान्यक कोन कथा स्वयं ओहो विश्वास करैत छथि।

कृष्णक राधाक संग प्रणय तथा क्षणिक प्रणयभङ्ग तँ मानवीय व्यवहारक प्रतिबिम्ब मात्र थिक। जँ कृष्ण एवं राधाक लीला मे जनसामान्यक धारणाक अनुसार कोनो अन्तर्निहित रहस्य सन्निहित अछि तँ ओ कवियहुक अन्तः स्थल मे ओतबेक अछि।

गीतगोविन्दक शैली, मनोहर पद्यक प्रवाह एवं सरस भाव प्रकृत रस-भाव केँ आभिव्यक्त करैत श्रोता एवं पाठकक हृदय मे रसोद्रेकक उद्बोधन

मे सर्वथा सिद्ध अछि। गीतक संग अनुबद्ध नितान्त मधुर ध्रुवपद समग्र गीत केँ एक सूत्र मे ग्रथित कए विविध भावक शृंखला केँ क्रमबद्ध रखैत अछि।

नामसमेतं कृतसङ्केतं वादयते मृदुवेणुम्,
बहु मनुतेऽतनु ते तनु-सङ्गत पवनचलितमपि रेणुम्।
धीर समीरे यमुना-तीरे वसति वने वनमाली ॥१॥
पतति पतत्रे विचलति पत्रे शङ्कित-भवदुपयानम्।
रचयति शयनं सचकितनयनं पश्यति तव पन्थानम।
धीरसमीरे यमुनातीरे वसति वने वनमाली ॥२॥

राधा कृष्ण केँ ताकि केँ हारि गेलीह किन्तु ओ हुनका कुञ्ज मे नहि प्राप्त कए सकलीह। हुनकर धैर्यक लोप भए गेल। हुनक सखी कृष्णक ओतए जाए हुनका कुञ्ज मे राधा सँ भेटक निमित्त अनुनय कएल।

पश्यति दिशि दिशि रहसि भवन्तं
तदधर-मधुर-मधूनि पिबन्तम्।
नाथ! हरे! सीदति राधाऽऽवासगृहे ॥१॥
त्वदभिसरणरभसेन बलन्ती
पतति पदानि कियन्ति चलन्ती।
नाथ! हरे! सीदति राधाऽऽवासगृहे ॥२॥
निहित विशद-विस-किसलय-वलया
जीवति परमिह तव रतिकलया
नाथ! हरे! सीदति राधाऽऽवास गृहे ॥३॥
त्वरितमुपैति न कथमभिसारम्
हरिरिति वदति सखीमनुवारम्।
नाथ! हरे! सीदति राधाऽऽवास गृहे ॥४॥
श्लिष्यति चुम्बति जलधरकल्पम्
हरिरुपगत इति तिमिरमनल्पम्।
नाथ! हरे! सीदति राधाऽऽवास गृहे ॥५॥

प्रणय-वासनाक तृप्ति-रूप फलक प्राप्तिए तँ समाप्ति थिक। एवंक्रमक भावना यथार्थतः तान्त्रिक थिक जाहि मे चरम साधनाक सिद्धि दिव्य तत्वक संग जीवक सारूप्यक आवाप्ति अछि। ई भावना संस्कृत कविताक अभिराम-ताक परिधान मे विलीन भए गीतगोविन्द मे उपस्थित भेल।

यद्यपि गीतगोविन्दक भाषा विशुद्ध मैथिली नहि भए संस्कृत सँ सम्बद्ध अछि तथापि एहि मे लोक-भाषाक तेहेन ने व्यापक समावेश कएल गेल जे मैथिलीक अग्रीम प्रारूप केँ निर्धारण मे सर्वथा समर्थ रहल।

आधुनिक मैथिलीक गीत जे कालक्रमेँ समृद्धशाली साहित्य मे अग्रसर भेल मिथिलाक कर्णाट-राजवंशक अन्तिम एवं छठम राजा महाराज हरिसिंहदेवक (१२६८-१३२४ ई०) आश्रित कवि हरि ब्रह्मक थिक जे सप्तरत्नाकरक रचयिता महासान्धिविग्रहीक पं० चण्डेश्वर ठाकुरक प्रशंसा मे लिखल गेल—

जहा सरअ ससि बिंव,
जहा हर हार हंस ठिअ,
जहा फुल्ल सिअ कमल,
जहा सिरि-खंड खंड किअ।
जहा गंग कल्लोल,
जहा रोसायिअ रुप्पइ,
जहा दुग्धवर सुद्ध फेण,
फँफाइ तलप्पइ।
पिअपाअ पसाए दिट्ठि पुणि,
णिहुअ हसइ जह तरुणि जण
वरमति चंडेसर कित्ति तुअ,[२२]
तत्थ पेक्ख हरिबंभ भण॥

सिद्ध लोकनिक उपर्युक्त गीतक उद्देश्य थिक साधारण एवं सीमित मानव चेतना सँ त्राण प्राप्त करब। ओकर लक्ष्य थिक अज्ञान तथा आशक्तिक आबरण सँ अपना केँ मुक्त करब एवं ज्योति तथा शक्तिक विशालतर क्षेत्र मे प्रवेश करब। एहि लक्ष्यक निमित्त चेतन रूप सँ कएल गेल प्रयत्न केँ योग कहल गेल अछि। योग शब्दक दुइ अर्थ—(१) जगत मध्य व्याप्त दिव्य जीवन सँ एकात्म लाभ करब जे मानव जीवनक उद्देश्य थिक आ (२) बुद्धिपूर्वक नियोजित आत्मानुशासन केँ साधनक्रम एवं ओहि लक्ष्यक प्राप्तिक निमित्त स्वाध्याय एवं अभ्यास।

वज्रयानी एवं सहजयानी सिद्ध लोकनि अपन शक्तिक माध्यम सँ विभिन्न योग-पद्धतिक वर्णन सरल, सहज एवं मधुर भाषा मे कए लोक

२२ हिन्दी काव्यधारा, पृ० ४६४-४६६

साहित्यक प्रगतिक प्रयास मे अग्रसर भेलाह जाहि सँ समृद्ध साहित्यक क्रमशः विकास भेल।

चर्या पद केँ किओ बंगला किओ भोजपुरी आ किओ हिन्दीक पद्य मानैत छथि। किन्तु एहि पद्य मे ठाम-ठाम वर्णित आठो कारक जाहि रूप मे प्रयुक्त भेल अछि ओ सभ केँ सभ अपन ओहि रूप मे विद्यापतिक पद्य मे प्रयुक्त पाओल जाइछ।

उदाहरण निमित्त निम्नलिखित पद्य प्रस्तुत कएल जाइछ—

कर्त्ताकारक

कर्त्ताकारकक निम्नलिखित शब्द जकर अन्त 'उ'मे भेल अछि—

तुला धुणि धुणि आँसु रे आँसु
आँसु धुणि धुणि निरवर सेसु (शान्ति०)
तइ लो डोम्बी सअल बिटालिअ (कृष्ण०)

विद्यापतिक—

फनिपति नहि मोरा मुकता हार,

ओ शब्द जकर अन्त 'ए' मे होइछ—

कान्हे गाइ तु काम चण्डाली (कान्ह०)

विद्यापतिक—

भणे कवि कण्ठहारे,

तथा ओ शब्द जकर अन्त 'ओ' मे ओइछ—

जीवन्ते मअलेँ नहि विशेसो (सरह)
उमत सवरो पागल शवरो (शवर)

प्राकृत एवं अपभ्रंश मे कतिपय स्थान मे वर्णित पाओल जाइछ।

कर्मकारक

कर्मकारकक ओ शब्द जकर अन्त आ' मे होइछ—

मार रे जोइआ मुसापवणा (भुसुकु)

विद्यापतिक—

वन्दह नन्द किशोरा,

ओ शब्द जकर अन्त 'क' मे होइछ—

तिशरण णावी किअ अठक मारी (कान्ह)

विद्यापतिक—

कवोनक कहब मेदिनि से थोल,

ओ शब्द जकर अन्त 'के' मे होइछ—

केडुआल नाहि कें कि
कहब के पारअ,

विद्यापतिक—

एकक हृदय अओके न पाओल।
पिया कें लिखिए पाठाउवि पाती।

करणकारक

करणकारकक ओ शब्द जकर अन्त 'ए' मे होइछ—

भवनइ गहण गम्भीर वेंगें वाही।
अपना मांसें हरिणा वैरी (भुसुक)
सद्गुरु बोहें जितेल भववल। (कान्ह)

विद्यापतिक—

जनि सुधाकर करें कबलित अमियबम चकोरा।
एहनि सुन्दरी गुणक आगरि पुनें पुनमत पाव।

सम्प्रदान कारक

सम्प्रदान कारकक ओ शब्द जकर अन्त 'ए' मे होइछ—

कान्ह डोम्बी विवाहे चलि आ

विद्यापतिक—

कमने पुरुखे हर अराधिअ,

ओ शब्द जकर अन्त 'एरे' मे होइछ—

रवर रवि किरण सन्तापेरे
गअणाङ्गण गइ पइठा (महीधर)

अपादान कारक

अपादान कारकक ओ शब्द जकर अन्त 'हु' मे होइछ—

रवेयहु जोइनी लेला न जाय (गुगुरी)
रअनहु षहुजे कहेइ (भुसुक)

विद्यापतिक—

सब फुल मधुर नहीं फुलहु फुल विसेष।

सम्बन्ध कारक

सम्बन्ध कारकक ओ शब्द जकर अन्त 'क' मे होइछ—

एडिएउ छन्दक बान्ध कारणक पाटेर आस (लूइ)

विद्यापतिक—

विपारिव कनक कदलि तर
शोभित थल पंकजक रूप रे।

ओ शब्द जकर अन्त 'र' मे होइछ—

ससर सिंगे (भुसुक)
हरिणा हरिणिर निलउ ण जानी (भुसुक)

विद्यापतिक—

नाह न हिअरा लाग बचन सुनहु किछु मोरा।

ओ शब्द जकर अन्त 'एरि' वा 'एरी मे होइछ—

तोहोर अन्तरे मोए छलिलि हाड़ेरि माली (कान्ह)
तो महासुदरी टुटि गेलि कंरवा (ताड़क)

विद्यापतिक—

नन्दक नन्दन कदम्बेरि तरुतरे।
नन्देरि नन्दन सजे देखि आव जो।

तथा ओ शब्द जकर अन्त 'एरे' मे होइछ—

हाथेरे काङ्काण मा लोउदायण (सरह)

विद्यापतिक —

आपनि अथिक सुधि
न धर परेरे बधि।

अधिकरण कारक

ओ शब्द जकर अन्त 'ए' मे होइछ—

आलि कालि घण्टा नेउर चरणे (कान्ह)
दुहिल दुधु कि वेण्टे षामाय (ढेण्ढण)

विद्यापतिक :—

जनि जगे मनसिज भूप रे।
श्रवणे सोहङ्गम कुण्डल डोले।

एँ' मे अन्त वाक्य—

सासु घरेँ छालि कोञ्चा ताल (गुगुरी)
उड़त्ता गअण माझेँ अद्भूआ (भुसुक)

विद्यापतिक—

आसाञ मन्दिर निसि गमावए।
चेतन पायु चिन्तामे आकुल॥

'हि' मे अन्त वाक्य—

भुसुक भणइ मूढ़ा हिअहि ण पइसई (भुसुक)

विद्यापतिक—

थावर जङ्गम मनहि अनुमान।

सम्बोधन कारक

सम्बोधन कारकक आलो, हालो, लो एवं अलो सँ युक्त वाक्य—

आलो डोम्बि तोए सम करिबे म साङ्ग (कृष्ण)
होलो डोम्बि तो पुछमि सद्भावे (ओएह)
तु लो डोम्बि हाउँ कपाली (ओएह)
वाजइ अलो सहि हेरुअ बीणा (वीणा)

विद्यापतिक—

वेड़लिह मोहि बड़े सापे मोरे पापे लो।
नृप सिवसिंह रस जाने नव कान्हे लो॥

उपर्युक्त प्रसंग सँ प्रतीत होइछ जे चर्यापद केँ कोनहु टा हालत मे मैथिली सँ भिन्न मानब मात्र भ्रमे टा होएत।

संस्कृत साहित्य मे मैथिलीक शब्दक यथास्थान समावेश करबाक परिपाटी तँ अत्यन्त प्राचीने पाओल जाइछ किन्तु नवम, १०म शताब्दीक संस्कृत साहित्य मध्य अनेक ग्रन्थक अनेक स्थल पर एहि प्रसंगक दिग्दर्शन होइछ। बाचस्पति मिश्र अपन प्रसिद्ध भामती टीका मे 'हरि' शब्दक प्रयोग कएलैन्ह अछि जे विशुद्ध मैथिली शब्द थिक।[२३]

२३ डा० समुद्र झा, फोरमेशन आफ दी मैथिली लैंग्वेज, भूमिका, पृ० ३२

सर्वानन्द अमर कोषक टीका मे कतिपय मैथिली शब्दक प्रयोग कएलैन्ह जाहि मे निम्नलिखित शब्द प्रधान अछि

अरदा>अरार

ओहालि>ओहारि

सिहाद्>सिर

हकर>हकार

सर्वानन्दक ग्रन्थ आनो दृष्टिकोण सँ बड़ उपयोगी अछि। एहि सँ प्रमाणित होइछ जे एगारहम शताब्दी मध्य मे मैथिली अपभ्रंश सं पृथक भए एक स्वतंत्र भाषाक रूप मे मानल जाए लागल छल।[२४]

२४ बोएह

३

समृद्ध साहित्य

मनुष्यक भावक प्रकट रूप ओकर भाव जगतक बहिः प्रतिफले तँ साहित्य थिक। साहित्य मे शब्द केँ अर्थ सँ, बहिर्जगतक भाव जगत सँ, मानवक मानवेतर सृष्टि सँ, अथच विषयीक विषय सँ तादात्म्य भए जाइछ। कौञ्च पक्षी केँ निषादक वाण सँ बिद्ध देखि महाकवि वाल्मीकिक—

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।[१]
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

श्लोक मे परिणत शोक तत्प्रकरण विशिष्टे टा नहि भए सार्वजनीन एवं सार्वदेशिक शोक छल। साहित्यक सभ सँ पैघ विशेषता होइछ जे ओ देश-कालक परिधि सँ मुक्त भए पवन सन किओ ओकर सेवन कए आह्लाद केँ प्राप्त कए सकए।

उपर्युक्त भाव मैथिलीक समृद्ध साहित्य मे परिपूर्ण पाओल जाइछ जकर आदि काल एक एहेन क्षेत्र अछि जे समस्त पूर्वीय भाषाक स्रोतस्वरूप थिक।

मैथिलीक समृद्ध साहित्यक प्रथम निर्माता डाक थिकाह। पं० श्री जीवानन्द ठाकुर कतिपय अकाट्य प्रमाणक आधार पर डाक केँ मैथिल सिद्ध कएलैन्ह अछि जिनका ओ दशम शताब्दी मध्य मानैत छथि।[२] श्री जीवानन्द ठाकुर जाहि प्राचीन तालपत्र मे अंकित डाकक बचन केँ संपादित कएलैन्ह तकर समता विद्यापतिक कीर्तिलताक भाषा सँ होइछ। डाकक जे किछु रचना अद्यावधि उपलब्ध भेल अछि ओहि सभहक आधार संस्कृते थिक। निम्नलिखित उद्धरण—

नवमी चौठि चौदसि भउषोड़े
पड़िव एकादशि छठिक बिजोड़े।

---

१ रामायण, बालकाण्ड, सर्ग १
२ श्री जीवानन्द ठाकुर, मैथिल डाक, मैथिली साहित्य परिषद्, दरभंगा, पृ० ३

तिअ अट्ठञ्जि तेरसि भूपूत्ते
सओञ्जि दुइ दोआदशि बाउत्ते
पाचञ्जि पुनिमा दशाञ्जि वेहप्पए
सिद्धियोग एह, मुनिवर जम्पए ॥

मूहूर्त्तचिन्तामणिक टीकाक एवंक्रमक बचन—

नन्दा च भद्राच जयाच रिक्ता
पूर्णेति तथ्योऽशुभमध्यशस्ता:
सितेऽसिते शस्तसमाधमा: स्यु:

तथा कश्यपसंहिताक—

नन्दा तिथि: शुक्रवारे सौम्येभद्रा कुजेजया ।
रिक्तामन्देगुरोर्वारे पूर्णा सिद्धाह्वया तिथि: ॥

श्री जीवानन्द ठाकुर एवंक्रमक कतिपय प्रमाणक आधार पर प्रमाणित कएल जे डाकक रचना ज्योतिष शास्त्रक संहिता ओ सैद्धान्तिक ग्रन्थक आधारे पर भेल ।

डाकक प्रसंग मे चण्डेश्वरक कृत्य चिन्तामणि मे किछु संकेत भेटैछ । एहि ग्रन्थ मे क्षपणक जातक, भृगुसंहिता तथा कपालिक जातकक नामक उल्लेख पाओल जाइछ जकर पद्य एवंक्रमक अछि—

अस्सिन रबि सोमह चित्ती, पूवाषाढ़ महीसुअ युत्ती ।
होइ जइछह सरना मङ्गो, सवाती होइ वेहप्पइ अङ्गो ॥

—क्षपणक जातक

तथा

खोला कुजा जाहेरि सङ्गा
ता हेरि कोटीन कविवर रङ्गा ।
हा हो सइ इहे वितसा ।
ताहि परणी कनकर विआसा ॥

—भृगुसंहिता

एवं

सङ्गो अङ्गा अङ्गाचार दशक मूल न हय विचार ।
जे हे से चन्दा से हेम सेहे जान शुभाशुभ सेम ।
एगुण वेगुण तेगुण जाइ एहा अन्त अरि कअगन पाइ ।
एगुण वेगुण तेगुण करिआँ जानह जीवन मरण करिआँ ।

—कपालिक जातक

श्री जीवानन्द ठाकुर उपर्युक्त ग्रन्थक विषय ओ भाषा कें डाकहिक रचना मानैत छथि।

डाकक पद मे लोक-जीवन सँ सम्बद्ध प्रायः प्रत्येक तथ्यक समावेश कएल गेल अछि। भारतक मुख्य जीविका खेती थिक। खेतीक निमित्त उचित समय पर वृष्टि होएब नितान्त आवश्यक थिक। वर्षाक प्रसंग मे गृहस्थक अनुभव बड़ विलक्षण अछि। गिरगिट, साँप, बेंग, बकरी आदिक गतिविधि कें देखि ओ लोकनि वर्षाक अनुमान करैत छथि। सभ सँ आश्चर्यक वस्तु तँ ई थिक जे पूस एवं माघक वायु, मेघ एवं बिजली कें देखि हुनका लोकनि कें साओन एवं भादवक वर्षाक अंदाज भए जाइत छलैन्ह। डाकक निम्नलिखित पद—

पूसक अन्हरिआ जतदिन मेह,
साओन सुदि ततदिन जलदेह।
माघ सुदि जतदिन मे जान,
साओन ततदिन वर्षा मान।
माघ वदि मे मेघ देखाय,
भादव सुदि तत वर्षा आय।

पुनि वायुक प्रसंग मे डाक कहैत छथि—

आषाढ़क पछवा सोना बहए,
सीक डोले मही भरए।
रोहिनि लब्बए मृगशिरा तब्बए,
आर्द्रा देल भुभुआए॥
कहए डाक सुनू सज्जना,
कुकुरो अन्न नहि खाए।

डाकक रचना मे लोक जीतन सँ सम्बन्धित नक्षत्र, राशि, दिन, आदिक चर्चाक संग-संग कोन ग्रहक दशा मे कोन कार्य कएला सँ शुभ होइछ आदिक प्रसंग मे सेहो उल्लिखित अछि। डाकक निम्नलिखित पद—

रविक दशा जँ करी घर,
घरनी राजा झगड़ा कर।
सोमक दशा जँ करी घर,
दूधे पूते भरी घर।
मंगलक दशा जॅ करी घर,
घोड़ा घोड़ी मनुष मर।

डाकक निम्नलिखित पद मे लोक जीवन सँ सम्बद्ध कटु सत्यक आभासक अनुभव होइछ जे व्यवहारक रूप मे समाज मध्य व्याप्त पाओल जाइछ—

गोड़कट खाट उटकन छाड़,
नारि कुलच्छनि चाकर चार ।
ई चारू केँ तुरंत परिहरी,
तुम्बा वाहि फकीरी करी ॥
शनि रवि फड़की मंगल खाट,
ई तीनू ताकए स्वर्गक बाट ।
कपटी मित्र कोशलिआ माय,
बुड़िबक बेटा टेटा जमाय ।
कहहि डाक चारू परिहरी,
बुड़िबक सन शशुरो नहि करी ॥
महतम सौँ भेल बहिया बरी ।
कहथि डाक जे सन्तापहि मरी ॥

डाकक पद मे प्रकृतिक गतिविधिक संग समाजिक जीवनक संकेत से हो भेटैछ—

पछबा सँ उघड़ए मेघ,
विधवा करए सिंगार ।
ओ उढ़ड़ए ओ बरिसए,
कहि गेल डाक गुआर ॥

डाकक भाषा विशुद्ध लौकिक भेला सन्ता समस्त उत्तर भारत मे एहि तरहेँ व्याप्त भेल जे हुनक देश-काल निर्णय मे बड़ व्यामोह उत्पन्न भेल। श्रुतिसन हुनक मूलवाणी लोकक कण्ठ मे अत्यन्त प्राचीन काले सँ तँ रहल किन्तु देशकालक व्यवधान सँ स्वभावतः हुनकर भाषा मे अनेक परिवर्त्तन उपस्थित भेल। फलतः जाहि प्रान्त सँ हुनक वचनक संकलन कएल गेल ओकरहि आधार पर ताहि प्रान्तक संकलयिता विद्वान् हुनका तद्देशीय सिद्ध करबाक प्रयास कएल।

डाकक सम्बन्ध मे अद्यावधि जे किछु अनुसंधान कएल गेल अछि ओहि मे अनुश्रुतिए केँ प्रश्रय देल गेलैक अछि। पण्डित रामनरेश त्रिपाठी द्वारा संकलित तथा हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग सँ १९३१ मे प्रकाशित 'घाघ

ओ भड्डरी' नामक पुस्तक मे डाकक वचनक संकलन अछि। एहि ग्रन्थक अधिकांश वचन मे घाघक नाम पाओल जाइछ जे डाकहिक एक अन्य नाम थिक।

डाक मिथिलाक छलाह, एहि सम्बन्ध मे सभ स पुष्ट प्रमाण हुनक रचल पद सँ होइछ जे मैथिली मे अछि।[3] एकर अतिरिक्त मैथिल निबन्धकार अपन निबन्ध मे डाक केँ प्रमाण रूप मे उद्धृत कएल अछि जनिकर ई परम्परा रहल अछि जे ओ अपन धर्मशास्त्र एवं ज्योतिषक सम्बन्ध मे देशीय मान्यता केँ प्रश्रय दैत ओहि वचन केँ प्रमाण कोटि मे मानैत छथि। किन्तु आन कोनो देशक निबन्धकार हुनका प्रमाण कोटि मे नहि उल्लेख कएल अछि। अतएव डाक मैथिल छलाह तथा हुनकर रचना मैथिलीक समृद्ध साहित्यक प्रथम सोपान थिक।

मैथिलीक समृद्ध साहित्यक प्रत्यक्ष संकेत शार्ङ्गधर पद्धति मे पाओल जाइछ। शार्ङ्गधर पद्धति शार्ङ्गधर कविक एक सुभाषित संग्रह थिक। एहि मे एक स्थल पर भाषा चित्रक एक विशिष्ट प्रमाण पाओल जाइछ। एहि पदक कर्त्ता श्री कंठ पण्डित थिकाह तथा एहि मे मल्लदेव राजाक वीरताक वर्णन अछि। मल्लदेवक सेनाक वीर-गण मारू, काटू कहैत अछि तथा शत्रुक स्त्री अपन पति केँ अहंकार केँ छोड़ि मल्लदेवक शरण जेबाक परामर्श एवंक्रमे दैत अछि—

नूनं बादल छाइ खेह पसरी निःश्राण शब्दः खरः
शत्रुं पाडि लुटालि तोडि हिनसौं एवं भणंत्युद्भटाः।
भूठे गर्व भरा मघालि सहसा रे कन्त मेरे कहे
कंठे पाग निवेश जाह शरणं श्रीमल्लदेवं विभुम्॥

उपर्युक्त अवतरण मे प्रयुक्त 'पसरी', 'हनिस', 'पाग' आदि शब्द विशुद्ध मैथिलीक थिक।

मल्लदेव कर्णाट-कुलक संस्थापक नान्यदेवक पुत्र छलाह जनिक चर्चा विद्यापति अपन पुरुष-परीक्षा नामक ग्रन्थ मे कएलैन्ह अछि। एहि मल्लदेवक एक गोट गीत श्री शिवपूजन सहाय द्वारा सम्पादित "हिन्दी साहित्य और बिहार" नामक पुस्तकक पृष्ठ १८२ मे वर्णित अछि जे एवंक्रमेँ पाओल जाइछ—

३ मैथिल डाक, श्री जीवानन्द ठाकुर, पृ० ४

कुसुमित कानन माँजरि पासे।
मधुलोभेँ मधुकर धाओल आसे॥
सजनी हिअ मोर भूरे।
पिआ मोर बहु गुने रहल विदूरे॥ ध्रुवं॥
माघ-मास कोकिल रय विरल नादे।
मन बसि मनभर कर अवसादे॥
तन्हि हम पिरिति एक पराने।
से आबे दोसर के राषत ज्ञाने॥
हृदय हार राखल भोरे।
अइसन पिआर मोर गेल छाड़ि रे॥
नृप मलदेव कह सुन ···· ····।

प्राकृतपैंगलम् मैथिली भाषाक एक अन्य महत्वपूर्ण छन्दक ग्रन्थ थिक। ईहो एक संकलित ग्रन्थे थिक। संग्रह कर्त्ताक नाम अज्ञात अछि। ग्रन्थ मे मात्रिक छन्दक विवेचना कएल गेल अछि।एहि ग्रन्थ मे मेवाड़क प्रसिद्ध राजपूत राजा हम्मीरक वीरताक सुन्दर चित्रन कएल गेल अछि। हम्मीरक शासन १३०२ ई०[४] मे प्रारम्भ भेल तथा ओ ६४ वर्ष धरि राज्य कएलैन्ह।

पिंगल छंदपर विचार विनिमय केनहार एकमात्र छंदशास्त्रक ग्रन्थ थिक। एहि मे यद्यपि वैदिकक संग लौकिक छन्दक विवेचन सेहो भेल अछि किन्तु वैदिक छन्दक कोनो पृथक् स्वतंत्र ग्रन्थ नहि उपलब्ध भेला सँ एहि ग्रन्थ केँ लोक छठम वेदांग मध्य गणना करैत अछि।

एहि ग्रन्थक कर्त्ता पिंगलाचार्यक समय कीथक अनुसार-२०० ई० पूर्वक लगभग मानल जाइछ।[५] परम्परा मे पिंगलाचार्य पौराणिक व्यक्ति तथा शेषनाग सँ अभिन्न मानल जाइछ।

अपभ्रंश एवं अवहट्ठ मे प्रयुक्त छंदक निमित्त सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्राकृतपैङ्गलम् थिक। एहि ग्रन्थ मे दुई गोट शब्द अछि "प्राकृत" और "पिंगल"। प्राकृत सँ ओहि भाषाक बोध होइछ जाहि मे एहि ग्रन्थक मूल पाठ निबद्ध अछि तथा पिंगल शब्द रचयिताक नाम-निर्देशक नहि भए वर्ण्य विषय-परिचायक थिक। अतएव प्राकृतपैङ्गलमूक मंतव्य थिक प्राकृतभाषा

४ टॉड कृत राजस्थान
५ ए० बी० कीथ, हिस्ट्री आफ संस्कृत लिटरेचर, पृ० ४१५

मे रचित पिंगल अथवा छन्द शास्त्र विषयक ग्रन्थ जकर सम्बन्ध नाग जाति सँ छल।

पिंगलक छन्दःशास्त्रक विवेच्य विषय आठ अध्याय मे विभक्त अछि। एहि ग्रन्थक चौदहटा टीका उपलब्ध अछि। एहि टीकाक अतिरिक्त एहि ग्रन्थ पर 'पिंगलवार्त्तिक' सेहो लिखल गेल।

छन्द शास्त्रीय विवेचनक प्रसंग मे पिंगलक तेहेन नै प्रख्याति भेल जे पाछाँ ओ मात्र एक व्यक्तिक नाम नहि रहि छन्दशास्त्रक पर्यायवाची बनि गेल तथा प्राकृत मे जखन लोकप्रचलित छन्दक विवेचनक निमित्त एक बृहत् लक्षण ग्रन्थक रचना भेल तँ ओकर नामहु 'प्राकृतपैंगलम्' वा 'प्राकृतपिंगलसूत्राणि' पड़ल। हलायुधवृत्ति सहित पिङ्गलच्छन्दः सूत्रम्क आरम्भे मे ई उल्लेख अछि जाहि मे पिंगल केँ नाग कहल गेल अछि—

श्रीमत् पिङ्गलनागोक्तच्छन्दः शास्त्र महोदधी
वृत्तानि मैक्तिकानीव कानिचिद्विचिनोम्यहम्[६]

शुक्ल यजुर्वेदक शतपथ ब्राह्मण मे पैंग ऋषिक वर्णन पाओल जाइछ जनिका वंश मे यास्क पैंगीक जन्म भेल। सम्भवतः पिंगलाचार्यहुक जन्म ओहि वंश मे भेल।[७] खाहे वस्तुस्थिति जे किछु हो ई तँ साधिकार कहल जा सकैछ जे पिंगलक समय बड़ प्राचीन अछि।

पिंगल ग्रन्थ मे मुनि, आचार्य तथा नागक नाम वर्णित अछि। ग्रन्थ मध्य गरुड़ तथा नागक एक मनोरंजक कथा सन्निहित अछि।[८] गरुड़ नाग केँ खाय जेबाक धमकी देल किन्तु नाग अपन बुद्धिक द्वारा गरुड़ केँ ठकि समुद्र मे जाए अपन रक्षा कएल।

ग्रन्थ यद्यपि कोनो एक व्यक्तिक कृति नहि बुझना जाइछ तथापि ग्रन्थ मध्य १०८ एवं ११५ श्लोक मे हरिब्रह्मक नामक उल्लेख कएल गेल अछि जे मिथिलाक कर्णाट राजवंशक अन्तिम एवं छठम राजा महाराज हरिसिंह देवक (१२६८–१३२४ ई०) आश्रित कवि छलाह।

श्लोक १०८ जे सप्तरत्नाकरक रचयिता महासांधिविग्रहीक पं० चण्डेश्वर ठाकुरक प्रशंसा मे लिखल गेल अछि ग्रन्थक भाग दुई मे वर्णित अछि तथा श्लोक ११५ एवंक्रमक अछि—

६ पिङ्गलच्छन्दः सूत्रम्, अ० १ श्लोक १
७ वेवर, हिस्ट्री आफइन्डियन लिटरेचर, पृ० ४६
८ प्राकृतपैंगलम, चन्द्रमोहन घोष द्वारा संपादित, पृ० २

पचतालीसह बत्थुआ छंदे छंद विअंभ।
अड्वा कइ पिंगल कहइ चलइण हरिहरबंभ ॥

एहि तरहेँ श्लोक १४५ मे विज्जाहर (विद्याधर)क चर्चा पाओल जाइछ जे एहि क्रमेँ उल्लिखित अछि—

जहा भअ भंजिअ बंगा भंगु कलिंगा
तेलंगा रणभुक्ति चले,
मरहट्टा धिट्ठा लग्गिअ कट्ठा
सोरट्ठा भअ पाअ पले।
चंपारण कंपा पब्बअ झंपा
ओत्था ओत्थी जीव हरे,
कासीसर राणा किअउ पआणा
विज्जाहर भण मंति बरे ॥

विज्जाहरक (विद्याधर) उपयुंक्त पद एवं कदर्पीघाट मे वर्णित लाल कविक निम्नलिखित पद जे ओ महाराज नरेन्द्रसिंहक प्रशंसा मे लिखने छथि बड़ साम्य प्रतीत होइछ—

बीजापुर वङ्का और सुरङ्का जित नृप शङ्क जोग भरे ॥३८॥
हूगली कलकत्ता नृप अति सत्ता तेजहि लत्ता फिरत फिरै।
दक्षिण नर नाहा तेज सिलाहा भेजहि बाहा को टहरे।
ढक्का की रानी फिरहि दिबानी ओ मकसानी नृपहहरे।
डिल्ली सग बग्गी काशी भग्गी बेतिया टग्गी को टहरे,
दिनन के गति डरत सकल अति मैथिल भूपति को वहरे, ॥३९॥

विज्जाहर वा विद्याधर जयचन्द्रक नितान्त प्रवीण एवं विद्यात्रन्त मंत्री छलाह। प्रबन्ध चिन्तामणि मे विद्याधर केँ "सर्वाधिकारभारधुरंधर" एवं "चतुर्दशविद्याधर" कहल गेल अछि। पुरातन-प्रबंध-संग्रह मे हिनक उदारता एवं चतुरताक कतिपय कथा उपलब्ध अछि जाहि मे विद्याधरक निर्भीक चरित्र, उदार हृदय एवं जयचन्द्रक विश्वासपात्रताक वर्णन अछि।

पुरातन-प्रबंध-संग्रह मे वर्णित अछि जे राजा जयचन्द्र केँ जखन ज्ञात भेलैन्ह जे परमर्दी 'कोपकालाग्निरुद्र', 'अबंध्यकोपप्रसाद' तथा रायद्रहबोल' आदिक विरुद धारण कएलैन्ह तखन ओ अपन कटक साजि हुनकर राजधानी (कल्याणकटक) केँ घेरलैन्ह तथा सालभरि ओ ओतहि रहलाह। परमर्दी अपन

मंत्री उमापतिधर सँ कहल जे "कोनो एहेन प्रबन्ध करू जाहि सँ राजा जयचन्द्र अपन सेना केँ हटाए लेथि।" तदनुसार उमापतिधर सायंकाल मंत्री विद्याधरक ओतए पहुँचलाह तथा निम्नलिखित सुभाषित हुनका ओतए पठबाओल—

उपकारसमर्थस्य तिष्ठन् कार्यातुरः पुरः।
मूर्त्या यामार्तिमाचष्टे न तां कृपणया गिरा॥

अर्थात् "कार्यार्थी उपकार करबा मे समर्थ व्यक्तिक समक्ष पहुँचि जतेक ओ अपन सूरति सँ कहैछ ओतेक ओ अपन कृपण वाणी सँ नहि कहि सकैछ।"

ई श्लोक विद्याधर केँ मर्माहत कए देल। ओहि समय राजा जयचन्द्र सुतल छलाह। पलंग सहित उठबाइ विद्याधर राजा जयचन्द्र केँ किला सँ बाहर पाँच कोस दूर रखबा देल। निद्रा भंग भेला पर राजा अपन समक्ष मंत्री विद्याधर केँ देखि एहि प्रसंग मे पूछल। विद्याधर राजा सँ सभ किछु यथार्थ रूप मे कहल। विद्याधरक वाणी केँ सूनि राजा अत्यन्त क्रोधित भेलाह। राजाक क्रोध केँ देखि विद्याधर नितान्त नम्र भए कहल—"हे राजन! क्रोध जनु करि। हम ब्राह्मण छी। हमर कण-वृत्ति तँ बनल अछि। हम जाए रहल छी।" विद्याधरक एहि उक्ति केँ सूनि राजा खिन्न भए बजलाह—"हे मंत्री! हम एहि निमित्त अप्रसन्न नहि छी जे अहाँ ई सभ किएक कएलहुँ। हम तँ एहि हेतु नाराज छी जे अहाँ एहि सुभाषित पर हमर सम्पूर्ण राज्य किएक नहि दए देलिऐक।" परमर्दी केँ जखन ई विषय ज्ञात भेलैन्ह तँ ओ ओहि सभ विरुद केँ छोड़ि देल। राजा जयचन्द्र हुनक सभ किछु आपस कए देल तथा सेनाक संग अपन गृह प्रत्यागमन कएलैन्ह।[१]

उपर्युक्त पद ओहि उदार एवं प्रभावशाली मंत्रीक थिक जनिकर मैथिली भाषा मे कविता लिखबे एहि बातक प्रमाण थिक जे ओहू समय काशी-कान्यकुब्ज-दरबार मे मैथिलक प्रवेश छलैक।

एहि ग्रन्थ मे शृंगार, बीर, नीति, राजा एवं देवादिक स्तुति सम्बन्धी भिन्न-भिन्न विषयक पद्य पाओल जाइछ। ग्रन्थ दुइ परिच्छेद मे विभक्त अछि। पहिल परिच्छेद मे मात्रिक छन्दक तथा दोसर परिच्छेद मे वर्णवृत्तक निरूपण कएल गेल अछि। छन्द मे आएल उद्धरण काव्यक दृष्टिएँ नितान्त महत्त्वक अछि। कवि मालाधार, चन्द्रमाला तथा गीता छन्दक उद्धरण मे वसन्त ऋतुक सुन्दर वर्णन कएलैन्ह अछि—

१ हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी-साहित्य का आदिकाल, पृ० २८-२९

वहइ मलआणिला विरहिचेउ संतवणा,
रअइ पिक पंचमा विअसु केसु फुल्ला वणा।
तरुण तरु पेल्लिआ मउलु माहवीवल्लिआ,
वितर सहि णेत्तआ समअ माहवा पत्तआ। —२-१७६

मलयानिल बहैत अछि। बिरहीक चित्त केँ सन्तापित केनहार कोकिल पंचम स्वर मे गबैत अछि। किंशुक विकसित भए गेल। बन फूल फूलाएल। वृक्ष मे नव पल्लव आएल तथा माधवी लता मुकलित भए गेल। हे सखि! अपन नैत्र केँ विस्फारित तँ करू। देखू बसन्तक समय आएल अछि।

अमिअकर किरण धरु फुल्लु णव कुसुम वण,
कविअ भइ सर ठवइ काम णिअ धणु धरइ।
रवइ पिअ समअ णिक कन्त तुअ थिर हिअलु,
गमिअ दिण पुण ण मिलु जहि सहि पिअ णिअलु —२-१६१

अमृतकर चन्द्रमा किरण केँ धारण करैछ, वन मे नूतन सुमन फूलाएल अछि, क्रोधित भए कामदेव बाण केँ स्थापित कए रहल छथि। कोइली कुहू-कुहू करैत अछि। समय मनोरम अछि तथा अहाँक प्रिय सेहो स्थिर हृदय छथि। हे सखि! बीतल दिन की पुनि अबैत छैक? अहाँ अपन प्रियक समक्ष जाउ।

जह फुल्ल केअइ चारु चंपअ चूअमंजरि बंजुला।
सब दीस दीसइ वेसुकाणण पाण वाउल भम्मरा॥
वह पोम्मगंध बिवंध बंधुर मंद-मंद समीरणा।
पियकेलिकोतुकलासलंगिम लग्गिआ तरुणीजणा॥ —२-१६७

केतकी, सुन्दर चम्पक, आम्रमंजरी, तथा बंजुल फुलाएल अछि। समस्त दिशा मे किंशुकक बन प्रतीत होइछ। मधुप मकरन्दपानक निमित्त व्यग्र अछि। पद्मक पाराग मे भीजल एवं मानिनीक मान भंग मे प्रवीण पवन मन्द-मन्द बहैत अछि तथा तरुणी गण अपन-अपन पतिक संग केलि कौतुक एवं लास्य भंगिमा मे निमग्न छथि।

फुल्लिअ वेसु चंप तह पअलिअ मंजरी तेज्जइ चूआ,
दक्खिण वाउ सीउ भइ पवहइ कंप विओइणिहीआ।
केअइ धूलि सब्ब दिस पसरइ पीअर सब्बइ भासे,
आउ वसंत काइ सहि करिअइ कंत ण थक्कइ पासे। —२-२०३

किंशुक फूलाएल। चम्पक प्रकट भेल। आम अपन मञ्जरि कें छोड़ि रहल अछि। दक्षिण पवन शीतल भए बहैत अछि। वियोगिनीक हृदय कँपैत अछि। केतकीक सौरभ सभ दिशा मे प्रसारित भए गेल। सभ पदार्थ पीयर प्रतीत होइछ। हे सखि वसंत तँ आएल किन्तु की करू? प्रिय तँ समीप छथिए नहि।

एहि छन्द मे शरत् ऋतुक चित्रण एवंक्रमें पाओल जाइछ—

> णेत्ताणंदा उग्गे चंदा धवल चमरसम सिअकरविंदा,
> उग्गे तारा ते आहारा विअसु कुमुअवण परिमलकंदा॥
> भासे कासा सव्वा आसा महुरपवण लहु लहिअ रंता,
> हंता सद्दू फुल्ला बंधू सरअ समअ सहि हिअअ हरंता॥
>
> —२-२०५

नैत्र कें आनन्दित केनहार धवल चमर सदृश श्वेत आभा सँ युक्त चाँद उगि गेल। तेज रश्मि तारागण उदित भए गेल। सौरभ सँ परिपूर्ण कुमुद प्रस्फुटित भए गेल। समग्र दिशा मे काश सुशोभित भए रहल अछि। मधुर पवन मंद-मंद गति मे बहैछ। हँस शब्द करैछ तथा बंधूक पुष्प फूलाएल। हे सखि, शरत् ऋतु हृदय कें हरैत अछि।

मंजीरा छन्दक उदाहरण उद्घृत करैत वर्षाक चित्रण निम्न प्रकारें कएल गेल अछि—

> गज्जे मेहा णीलाकारउ सद्दे मोरउ उच्चा रावा,
> ठामा ठामा विज्जू रेहउ पिंगा देहउ किज्जे हारा।
> फुल्ला णीवा पीवे भम्मरू दक्खा मारुअ वीअंताए,
> हंहो हंजे काहा किज्जउ आओ पाउस कीलंताए॥
>
> —२-१८१

नील मेघ गरजैत अछि। मयुर गंभीर शब्द करैछ। ठाम-ठाम पीयर शरीर सँ युक्त बिजली सुशोभित भए रहल अछि। मेघ बिजलीक माला धारण कएने अछि। कदम्ब फूलाएल अछि। भ्रमर गुंजायमान अछि। चतुर पवन बहैत अछि। हे सखि, कहु की करी? पावस क्रीड़ा करैत आएल।

उदाहरण मध्य किछु उद्धरण मे वीररसक सुन्दर परिपाक कएल गेल अछि—

> सुर अरु सुरही परसमणि,
> णाहि वीरेस समाण।

ओ वक्कल अरु कठिन तणु,
ओ पसु ओ पासाण॥

—१-७६

कल्पवृक्ष, सुरभि तथा पारसमणि ई तीनू पदार्थ वीरक समानता नहि कए सकैछ। एक वल्कलयुक्त कठोर शरीरधारी, दोसर पशु एवं तेसर पाषाण थिक। पुनि निम्न पद्य मे बीररसक उद्रेक प्रस्तुत करैत युद्ध प्रयाणक रोमाञ्चकारी चित्र उपस्थित कएल गेल अछि—

मंचहि संदरि पाव अप्पहि हसिऊण सुम्मुहि खग्गं मे।
कम्पिअ मेच्छ सरीर पेच्छइ वअणाई तुम्ह धुअ हम्मीरो॥

—१-७१

युद्धोद्यत वीर हम्मीर अपन प्रेयसी सँ विदाहक काल मे कहैत छथि "हे सुन्दरि! पयर छोड़ू। हँसी केँ तरुआरि दिअ। म्लेच्छक गरदनि केँ काटि अवश्ये हम अहाँक मुँहक दर्शन करब।"

कवि हम्मीरक युद्ध यात्राक सजीव वर्णन लीलावती छन्द मे प्रस्तुत करैत छथि—

घर लग्गइ अग्गि जलइ धह-धह कइ
दिग मग णहपह अणाल भरे,
सब दीस पसरि पाइक्क लुलइ धणि
थणहर जहण दिआव करे।
भअ लुक्किअ थक्किअ बइरि तरुणि जण
भइरव भेरिअ सद्द पले,
महि लोट्टइ पट्टइ रिउसिर टुट्टई जक्खन
वीर हमीर चले।

—१-१६०

जखन वीर हम्मीर युद्धक हेतु प्रयाण कएल तखन शत्रु राजाक घर मे आगि लागि गेल तथा ओ धह-धह कए जड़ए लागल जाहि सँ सभ दिशाक मार्ग एवं गगन पथ अग्नि सँ व्याप्त भए गेल। हुनकर पैदल सेना समस्त दिशा मे पसरि गेल जकरा डरेँ परायत रमणीक स्तनभार ओकरा जाँघ केँ टुकड़ा-टुकड़ा करए लागल। शत्रुक तरुणी भयातुर भए जंगल मध्य नुकाए रहलीह। रणभेरीक भैरव शब्द कर्णगोचर भए रहल छल। शत्रु राजा धराशायी

भए अपन कपार केँ पीटए लगलाह जाहि सँ हुनकर कपार फूटि गेलैन्ह।

युद्ध वर्णनक निम्नलिखित पद्य भाषाक दृष्टिए महत्त्वपूर्ण तँ अछिए संगहि वीररसक दृष्टि सँ तँ औरो अधिक महत्वक अछि—

गअ गअहि ढुक्किअ तरणि लुक्किअ
तुरअ तुरहिं जुज्झिआ,
रह रहहि मीलिअ धरणि पीडिअ
अप्प पर णहि बुज्झिआ।
बल मिलिअ आइअ पत्ति धाइउ
कंप गिरिवर सीहरा,
उच्छलइ साअर दीण काअर
बइर बड्ढिअ दीहरा—॥
—१-१६३

हाथीक हाथी सँ भिड़न्त भेल। सेनाक चलब सँ ततेक धूड़ा उड़ल जे सूर्य भगवान अदृश्य भए गेलाह। घोड़ा घोड़ा सँ तथा रथ रथ सँ लड़ए लागल। पृथ्वी पीड़ित भेलीह तथा अपन एवं परायाक भेद-भाव लुप्त भए गेल। दुहू सेना आबि समर मे संलग्न भेल। पैदल दौड़ए लागल। पर्वतक शिखर काँपए लागल। समुद्र उछलब प्रारम्भ कएल। कायर दीन भए गेल तथा शत्रुता अत्यधिक बढ़ि गेल।

एहि प्रकारेँ एहि ग्रन्थक मैथिली केँ मुक्तक पद्यक दृष्टि सँ अत्यधिक महत्व अछि। मध्ययुगीन मैथिलीक छन्द शास्त्री एहि ग्रन्थक छन्द परम्पराक पूर्ण अनुकरण कएलैन्ह अछि।

ग्रन्थ चाहे एक गोटाक कृति होए वा एक सँ बेसी गोटाक एहि मे योगदान होए किन्तु ई विशुद्ध मैथिलीक ग्रन्थ थिक। एहि मे कोनहु टा भ्रान्ति नहि अछि जकर साक्षी ग्रन्थक भाषा, छन्द तथा स्वतः ग्रन्थकारक नाम अछि।

वर्णरत्नाकर ज्योतिरीश्वर कृत समृद्धशाली मैथिलीक एक अपूर्व ग्रन्थ थिक। ई ग्रन्थ चौदहम शताब्दीक प्रथम चरणक पूर्वार्ध मे रचल गेल। ज्योतिरीश्वर ठाकुर मिथिलाक कर्णाटवंशीय शासक हरिसिंह देवक आश्रित छलाह। हरिसिंहदेवक शासनकाल चौदहम शताब्दीक पूर्वार्ध मानल जाइछ। अतएव ग्रन्थक रचना एहि अभ्यन्तर मे भेल।

एहि ग्रन्थक तालपत्र पाण्डुलिपि, रॉयल एसियाटिक सोसाइटी आफ बंगालक ग्रन्थागार मे सुरक्षित अछि। मूलत: एहि ग्रन्थ मे ७७ पत्र छल। आरम्भक नऽ पत्र तथा बीच-बीचक पत्र ११, १२, १४, १५, १७, १६ तथा २० (सभ मिलाए १७ पत्र) उपलब्ध नहि अछि। सौभाग्य सँ अन्तिम पृष्ठ सुरक्षित अछि। अतएव एहि सँ स्पष्ट होइछ जे ग्रन्थक प्रतिलिपि ३८८ ल० सं० अर्थात् १५०७ ई० मे भेल।

वर्णरत्नाकर, डॉ० सुनीतिकुमार चटर्जी एवं पं० बबुआजी मिश्र द्वारा सम्पादित तथा विवलोथिका इन्डिका द्वारा १६४० ई० मे प्रकाशित भेल। सम्पूर्ण ग्रन्थ सात कल्लोल मे विभाजित अछि। एहि सातहु कल्लोलक शीर्षक थिक— (१) नगर वर्णना, (२) नायिका वर्णना (३) स्थान वर्णना, (४) ऋतु वर्णना, (५) प्रयानक वर्णना, (६) भट्टादि वर्णना तथा (७) श्मशान वर्णना।

सातम कल्लोलक पश्चात् आठम कल्लोलहुक किछु अंश तँ अछि किन्तु ग्रन्थक खंडितावस्थाक कारण कोनो शीर्षक निश्चत करब कठिन थिक। एहि सात कल्लोलक प्रधान वर्णनक संग कतिपय स्थल पर अप्रधान वर्णनो सन्निविष्ठ अछि। सभ मिलाए वस्तुत: वर्णनक निमित्त ई ग्रन्थ रत्नाकर बनि जाइछ। एहि सातो कल्लोल मे वर्णित विषयक सारांश निम्नलिखित अछि।

प्रथम कल्लोल—प्रथम नऽ पत्रक अनुपलब्धि मे प्रथम कल्लोलक अल्पांशे प्राप्त होइछ। ग्रन्थ मध्य प्रवेश करितहि नगर वर्णनक रूप मे जाहि प्रथम पुष्पक साक्षात्कार होइछ ओहि मे लतापादवक सौंदर्य, नगरक तुमुल कोलाहलक गुंजार एवं विभिन्न जातिक वर्णनक संगहि संग जगा-योगीक परिचय सेहो प्राप्त होइछ—

(पु)नु कइसन देषु, नागल, तोँगल, तापसि, तेँलि, ताति, तिवर, तुरिया, तुलुक, तुरुकटारुअ, धेओल, धाङ्गल....कादव नागर प्रमृति मंद जातीय तेँ वास। तत्पश्चात अपराधी वर्गक वर्णन अछि—

चोर, चञ्चल, जुआर, छिनार, लगवार ... अनुचीती ताकर आश्रय देपु कइसन। तदुपरान्क भिक्षुक वर्ग—जगा, योगी, नगारि, भरहर, भण्डुआ प्रभृति अनेक भिषारि तेँ भरल नगरक तुमुल कोलाहल, मजिरा, कठताल, सींगा आदि बाजाक मधुर ध्वनि, लोरिक आदिक गीतक मादक नाद एवं लेह, देह, तोरह, पुनु देहक शब्द सँ युक्त नगरक यथार्थ चित्रण कएल गेल अछि।

द्वितीय कल्लोल—ई नायक वर्णन सँ आरम्भ होइछ। नायक धनुर्विद्या मे कुशल, अञ्जन, गुटिका, पादुका, रस, परस, खन्ह, वेताल, यक्षिणी एहि आठ प्रकारक उपसिद्धि; स्तम्भन, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, मारन, विद्वेष-करण, प्रक्षोभन एवं आकर्षण एहि आठ प्रकारक प्राकृत सिद्धि तथा अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, उशिद्ध, वशिद्ध, प्राकाम्य, कामावशायिता एहि आठ महासिद्धि मे निपुण होइछ। ओ छत्तीस प्रकारक शास्त्र तथा चौरासी प्रकारक राजनीतिक ज्ञाता होइछ। दया, दान, दाक्षिण्य आदि शिष्ट धर्म सँ संयुक्त एवं तेरह प्रकारक गुण जे उपनायक मे रहबाक चाही ओहि सँ समन्वित रहैछ।

एकर उपरान्त नायिका वर्णन मे नायिकाक नख-शिख वर्णन, ओकर अलंकार आदिक विस्तृत वर्णन पाओल जाइछ। नायिकाक सौन्दर्यक वर्णन तुलनात्मक रूप मे अपलब्ध होइछ—कङ्कणनूपुर प्रभृति अनेक। अलङ्कार कएले कइसन देषु॥

जनि कामदेव संसार जिति आएल। तकर पताका। जनि एकर रूप दयकेँ इन्द्र सहस्राक्ष भेलाह, ब्रह्मा जे चतुर्मुख कएहलु, जनि एहि आलिङ्गए लागि एक कृष्ण चतुर्भूज भए गेलाह।

एकर अनन्तर सखी वर्णन प्रकरण मे ओकर नख-शिख सौंदर्यक भव्य वर्णन पाओल जाइछ—पूर्णिमाक चाँद अमृत पूरल अइसन मुह। श्वेत पंकज काँ दल भ्रमर वयिसल अइसन आँषि।

कामदेवक नगर अइसन शरीर। निष्कलङ्क चान्द अइसन मुह। कन्दल खञ्जरीट अइसन लोचन आदि।

एकर पश्चात् नायिकाक हास्य वर्णन मे कुमुद, कुन्द, कदम्ब, कास, भास, कैलास, कर्पूर, पीयूषक कान्ति प्रसारीसन क्षीरसमुद्रक दक्षिणानिले चालल तरङ्ग सनक लहरी अइसन, अमृतक सरोवर तरङ्गक सहोदर सन, शरतक पूर्णिमाचान्दक ज्योत्स्ना अइसन अभिनव प्रकाशित कमल कोष प्रसारि शोभा सन, कन्दर्पक दर्पप्रकासन सन त्रैलोक्यक नागरजन युवजन हृदयमोहन मन्त्रसन, आठ सात्विक भावताक भण्डार सन, कन्दर्पक पाँचो वाणगुणताक सन्धानशक्ति सन नायिका मोहनता, प्रकाशित, वसिता, उत्साहिता आदि रूप मे नायक केँ संचारइतेँ देषु॥ एवंक्रमे द्वितीयकल्लोलक समाप्ति होइछ।

तृतीय कल्लोलक आरम्भ राजदरवारक वर्णन सँ होइछ। एहि मे अनेक प्रकारक व्यापारी, राजोपजीवक, राजविनोदक, स्थान मण्डप, छत्तीस पदक,

राजपादोप जीवक लोकक वर्णन अछि। राजदरवारक वर्णनक पश्चात् स्नान गृहक (समरहर वर्णनाका) वर्णन अबैत अछि। ओतए स्नानक सामग्री, स्नानक विधि आदिक विधिवत् वर्णन पाओल जाइछ। स्नानोपरान्त राजा पूजा हेतु मंदिर (देओरहलि) मे जाइत छथि। ओतए पूजाक विविध सामग्री ओरियाएल रहैछ। पूजाक उपरान्त भोजन एवं पान (तांवुल सेवन) खेबाक बर्णन अछि। तत्पश्चात् शयनगृहक मनोरम वर्णन—

सफुर चित्रशाली एक देवराजगृह ततसमान, तकराँ भीतर हाथिक दान्तक पवा, मानिकक पासि, मरकतक शिरवा, सोनाक पटा, स्फटिक दण्डा, पद्म-रागक दण्डिया, अहुठ हाथ दीर्घ अढ़ाय हाथ फाण्ड, सेजओट एक पालु तकाँ उपर कम्बल चारि.... ....
....स्वर्णकेतकी, चम्पक प्रभृति अनेक सुरभि पूष्प से उपगत कएल अछ, प्रतिष्ठित, आप्त, परम्परीण, विश्वासयोग्य ये गोआर, कोइरि, कुलुत्रि, रजक प्रभृति जनदश नओवति नियुक्त भेल अछ। तदुपरान्त प्रभात, मध्याह्न, रात्रि एवं मेघ आदिक विस्तृत वर्ण पाओल जाइछ।

चतुर्थ कल्लोल ऋतुवर्णना कहबैत अछि। कविपरम्परानुकूले षड-ऋतुक एहि मे विस्तृत विवरण अछि। एहि कल्लोल मे चौंसठि कलाक नाम सेहो गनाओल गेल अछि। संगहि षोडश महादान, अष्टदश प्रकारक रत्न, बत्तीस प्रकारक उपमणि, तीस प्रकारक वस्त्र, बीस प्रकारक देशी वस्त्र, तेरह प्रकारक निरभूषण वस्त्र तथा चौदह प्रकारक नैत वस्त्रक वर्णन अछि। एकर अतिरिक्त विभिन्न प्रकारक वस्त्रगृहक वर्णन, ज्योतिष्विद् वर्णन, द्युत-वर्णन, वेश्यावर्णन एवं कुट्टनी वर्णन आदि प्रकरण अछि। तत्पश्चात् कामावस्था वर्णना मे कामदेवक पँच-त्राण, आठ सात्विक दशा, चारि प्रकारक कोमलाङ्गी, सात कठिनालिङ्गन, दस प्रकारक चुंबन, दस प्रकारक चुंवन स्थान, पाँच प्रकारक नखविन्यास, पाँच प्रकारक दशनविन्यास तथा तीन प्रकारक केशाकर्षणक संग-संग किछु आसनक वर्णन सेहो कएल गेल अछि।

पाँचम कल्लोल राजाक विजय यात्रा सँ आरम्भ होइत अछि। राजाक विजय यात्राक क्रमे मे छत्तीस प्रकारक राजपुत कुल, विभिन्न प्रकारक घोड़ा एवं हाथीक वर्णन अछि। प्रयानक बर्णनक पश्चात् आखेट वर्णनाक प्रसंग मे शिकारक विशद वर्णन प्राप्त होइछ। आठ प्रकारक हाथी, चौबीस प्रकारक घोड़ा, आठ प्रकारक भैंसा तथा दस प्रकारक कुकुरक लालन पालन एवं शिक्षण

संबंधी तत्कालीन व्यवस्थापक सम्यक चित्रण कएल गेल अछि। शिकार मे विपुल सैनिक समुदायक प्रस्थान कएला पर धूरा सँ भरल मार्गो ओकर अविरल पदाघात सँ पंकमय भए जाइत छल। एकर अतिरिक्त बनक भीषणता, सघनता तथा रमणीयताक मनोरम चित्रण कएल गेल अछि। ओहि भयानक जंगल मध्य कोच, किरात, कोल्ह, भिल, षस, पुलिंद, सबर, छैरंग, म्लेच्छ, गोएठ, थोट, नेट, पहलिया, पोध, दोनवार, सागर एवं बांतर आदि जातिक निवास स्थान छल। उपवन वर्णनक प्रसंग मे भाँति-भाँतिक फल फूल, कृत्रिम निर्झर, नाना प्रकारक गाछ-वृक्ष एवं पक्षीक नाम गनाओल गेल अछि। पर्वतक वर्णनक उपक्रम मे पर्वतीय लता, पादप, जीव-जंतु, यक्ष, किन्नर, व्याध एवं विद्याधर, आदि देवयोनिहुक नाम आएल अछि। एहि कल्लोल मे कमल, कोकनद, कल्हार, कुवलय, कुमुद, आदि पुष्प सँ शोभित शरतक चाँद अइसन निर्मल सरोवरक बड़ भव्य वर्णन अछि। अन्त मे श्रद्धाक पुञ्ज अइसन, अग्निक सहोदर अइसन, सन्तोषक रासि अइसन, संयमक प्रतिविम्ब अइसन, ज्ञानक सषा अइसन, ममत्वक शत्रु अइसन, लोभक कृतान्त अइसन, परमहंसदशापन्न महामुनिक रूपक वर्णन भेटैछ। एवक्रमे ई कल्लोल समाप्त होइछ।

छठम कल्लोल नाच-गान एवं काव्य कला सँ संबद्ध अछि। सर्वप्रथम मारक बहुमूल्य पाहेरना, ओकर योग्यता आदिक प्रसंगक सम्पूर्ण रूपरेखा प्रस्तुत कएल गेल अछि। तत्पश्चात् मल्लयुद्धक चर्चा कएल गेल अछि। ओहि अभ्यन्तर एक विद्यावंत गायिकाक वर्णनक क्रम मे राग, श्रुति, सात प्रकारक गायन दोष आदि वर्णित अछि। संगीतक वर्णनक उपरान्त नृत्यक प्रसंग अवैत अछि। नृत्य केँ तीन वर्ग—नृत्यवर्णना, पात्रनृत्य वर्णना, प्रेरणनृत्य-वर्णना मे विभाजित कएल गेल अछि। एकर अतिरिक्त सभ प्रकारक नृत्यक भाव-भंगिमाक वर्णन पाओल जाइछ। एहि मे दस प्रकारक मुरजि, बारह प्रकारक मुरज, वाद्य, ताला, रास, व्यभिचारी एवं सात्विक भावक वर्णन अछि। तत्पश्चात् वीणावर्णना प्रकरण मे सत्ताइस प्रकारक वीणाक उल्लेख अछि।

सातम कल्लोल श्मशान वर्णनाक नाम सँ उल्लिखित अछि। एहि प्रकरण मे आठ भैरव, आठ शक्ति, चौदह योगिनी, बारह वेताल तथा अनेक कापालिक आदिक वर्णन अछि। श्मशान वर्णनक संग मरुस्थल, समुद्र, तीर्थ, नदी, ऋषि एवं पर्वत आदिक सांगोपांग वर्णन कएल गेल अछि। एकर अतिरिक्त चौरासी नाथ पंथी सिद्ध, दशावतार, शिवक अष्टमूर्त्ति, नवग्रह आठ वसु, एगारह रुद्र, दस विश्वदेव, चौदह मनु, बारह साध्य, उनचास पवन, बारह

आदित्य, आठ दिग्गज, अठारह पतिव्रता, रामायणक सात काण्ड, महाभारतक अठारह पर्व, आठ दिक्पाल, दस उपपुराण, सोलह पुराण, अठारह स्मृति तथा अन्त मे आगमक वर्णनक संग ई कल्लोल समाप्त होइछ।

राजपुत्र कुलक वर्णन सँ आठम कल्लोल प्रारम्भ होइछ। एहि मे छत्तीस प्रकारक शस्त्रास्त्रक नामक उपरान्त देश वर्णनक प्रसंग अबैछ। एहि मे मात्र मगध, मुरतान, मालव एहि तीन देशक नाम लए अकारण वैद्यक वर्णन बीचे मे प्रारम्भ कएल गेल अछि। तदुपरान्त जहाजक वर्णन (वहित्र वर्णना), विविध देशक स्त्रीक वर्णन, विवाह वर्णन, द्वादश पुत्र वर्णन, वणिक पुत्र वर्णनक संगहि संग वणिक द्रव्य, रत्नादिक वर्णन उपलब्ध होइछ। तत्पश्चात् चोर, दुर्ग, नौका, वैद्य एवं वोहित वर्णनक प्रसंग अबैछ। अन्त मे भोजनक मनोरंजक वर्णनक संग ग्रन्थक समाप्ति भए जाइछ। दुर्भाग्य सँ एहि आठम कल्लोलक शीर्षक प्रतिलिपिकार द्वारा नहि देल गेल अछि और नै तँ एकर कोनो दोसर प्रतिए उपलब्ध भेल अछि।

ज्योतिरीश्वर वर्णरत्नाकरक अतिरिक्त आरो दू ग्रन्थ—धूर्तसमागम प्रहसन एवं पंचसायकक रचना कएलैन्ह। धूर्तसमागमक प्रस्तावना मे ज्योतिरीश्वर अपना कें कर्णाट वंशीय राजा हरिसिंह देवक आश्रयी कहैत छथि।

धूर्तसमागम मैथिलीक सभ सँ प्राचीन नाटक थिक। ई प्रहसन सम्पूर्ण प्राप्त नहि भेल अछि। किन्तु एकर संस्कृत संस्करण सम्पूर्ण प्राप्त भेल छलैक जाहि सँ एकर कथा बुझबा मे बड़ सहायता प्राप्त भेलैक।

जाहि समय समस्त उत्तर भारत मे कोनो लोक रंग-मंच नहि छल, ज्योतिरीश्वर लोकमंचीय नाटक कें लिखि एक एहेन परम्पराक सूत्रपात्र कएल जे पश्चात् आन-आन प्रदेशहु मे विकसित भेल।

धूर्तसमागम मे वर्णरत्नाकरेक[१०] सदृश १४म शताब्दीक मिथिलाक समाजिक जीवनक परिचय भेटैत अछि। एहि ग्रन्थ मे आइ सँ ७०० वर्ष पूर्वक भोज्य पदार्थ—मांस, माछ, बड़, बड़ी पड़ोर, मूङ्‌क दालि, टटका दही सोन्हाएल दूध, केरा एवं मधुर आदिक विस्तार पूर्वक वर्णन भेटैत अछि।

ज्योतिरीश्वर कालीन मिथिला मे यद्यपि शान्ति छल किन्तु सुखक कोनो खास वस्तु हुनक ग्रन्थ मध्य नहि पाओल जाइछ। मिथिलाक तत्कालीन समाज आइ सँ विशेष भिन्न नहि छल। ओएह राजा-प्रजा, आर्य-म्लेच्छ,

१० डा० जयकान्त मिश्र, धूर्तसमागम, भू० पृ० १

ब्राह्मण-शुद्र, जाति-भेद एवं वर्ग-भेद छल। एक दिश विलासिताक ताण्डव नृत्य भए रहल छल तँ दोसर दिश बाजार मध्य भुक्खरक कोलाहलक संग-संग जगा, योगी एवं भण्डुआ सँ नगरक गली भरल छल।

ज्योतिरीश्वर काल मे प्रायः संस्कृत राष्ट्रभाषा छल। दर्शन, धर्मनिबंन्ध, नाटक एहि भाषा मे होएत छल। राजाज्ञा संस्कृते मे बहराइत छल। किन्तु लोक भाषा सेहो दिनानुदिन प्रवल भए रहल छल। ई लोक-भाषा पाकृत, पाली, अपभ्रंश एवं अवहट्ठ आदिक रूप मे पहिनहि सँ उँच पद प्राप्त कएने छल। किन्तु १००० ई० मे एहि दिश एक नव मोर लेलक जे आधुनिक मैथिली दिश अग्रसर भेल।

ज्योतिरीश्वरक समय धरि मुसलमानक राज मगध एवं बंगाल धरि दृढ़ भए गेल छल। मिथिला तावत धरि बाँचल छल। ओ दिल्ली-बंगाल मार्ग सँ पृथक छल। मगध ठीक ओहि मार्ग पर छल। अतएव प्रथम आक्रमण ओतहि भेल। गंगा, गंडक आदि नदीयो बहुत काल तक एकर रक्षा करैत रहल। उत्तर बिहारक नदी सेनाक मार्गक बाधक छल। सम्भवतः मिथिला मे ब्राह्मण एहि हेतु तावत धरि मुसलमान केँ नहि बौद्ध केँ अपन प्रतिपक्षी मानैत छलाह। ब्राह्मणक रुख बौद्धक प्रति जे रहल ओहि सँ ज्ञात होइछ जे ब्राह्मण एवं बौद्ध मे कटु विरोधाभाव ओहि युग तक छल यद्यपि बौद्ध महाविद्यालय नालन्दा एवं विक्रमशिलाक विध्वंस ज्योतिरीश्वर सँ एक सए वर्ष पूर्वे भए गेल छल। ज्योतिरीश्वर बौद्ध पक्ष केँ "अपात भीषण' तथा बौद्ध विरोधी उदयनाचार्यक सिद्धान्त केँ "प्रसन्न" कहलैन्ह अछि।

ज्योतिरीश्वर स्त्रीक मधुर एवं कटु दुहू रूपक वर्णन कएलैन्ह अछि। एहि वर्णन मे मात्र विलास एवं विरक्तिक समन्वय अछि। नायिका, सखि, वेश्या आदिक चित्रण विलास भावक तथा श्मशान, अन्धकार आदि सँ नारीक समता विरक्ति-भावक द्योतक थिक। एक दिश तँ स्त्रीक 'पूर्णिमाक चाँद अमृत पूरल अइसन मुँह, पारिजातक पल्लव अइसन हाथ तथा विकशित स्थल पद्म अइसन चरण' पर पुरुष मुग्ध अछि तँ दोसर दिश ओ श्मशान केँ स्त्रीक 'चरित्र अइसन दारुण' तथा अन्धकार केँ स्त्रीक चरित्र अइसन दुर्लक्ष्य' केँ पाबि मूक भए जाइत छथि। वेश्याक कृत्रिम लाज, कपट, तारुण्य, धनार्थे प्रेम, लोकार्थे विनय ''' निर्मुक्त स्वामिसिन्दुर एवं शीलवन्ति, विलासवन्ति, वलवन्ति, करुणावन्ति, हृदयहारिणी, यौवनश्री,

पर घृणा प्रकट कएल गेल अछि तथा पाण्डुर भजुह, शङ्काबदात केश, संकुलित त्वचा उन्नति शिरा, निर्मास काय, भाङ्गल कपोल, झलल दाँत वाली कुट्टनी कें "प्राणहारिणी" कहि ओकर भर्त्सना कएल गेल अछि।

ज्योतिरीश्वरक 'अष्टादशपुराणवर्णना' मे सोलह पुराणनक नाम पाओल जाइछ। उपपुराणक संख्या दस कहल गेल अछि किन्तु नाम आठेटा कें देल गेल अछि। ज्योतिरीश्वर चौरासी सिद्ध एवं आगमक जे एक विस्तृत सूची देलैन्ह अछि ओ नितान्त महत्त्वक अछि।

ज्योतिरीश्वरक स्थानादिक वर्णन एवं नदीक नामक वर्णन सँ ज्ञात होइछ जे ओहि मे वर्णित नाम क्रमागत नहि भए अनुप्रासगत छल जे कतिपय महत्व पूर्ण नाम कें ओहि सूची मे नहि रहला सँ प्रतीत होइछ। ग्रन्थ मे मन्दर, महेन्द्र, मलय, मैनाक, माल्यवान् मन्दार, गोवर्द्धन आदिक संग हिमालयक चर्चा नहि रहला सँ मिथिलावासी कें एकर किछु अभाव खटकैत अछि। एवंक्रमें नदीक नाम गंङ्गा, गोमती, गोदावरी, गण्डकी, रेवती, आदि नामहु मे अनुप्रासहिक रक्षा कएल गेल अछि।

तीर्थ वर्णन प्रकरणहु मे अनुप्रासेक धार बहाओल गेल अछि। प्रभास, पारिप्लुत, पञ्चनद, आदिक संग कोकामुखक नाम देल गेल अछि जे 'बराहक्षेत्र' थिक।

उपर्युक्त वर्णन सँ ज्ञात होइछ जे ज्योतिरीश्रक लक्ष्य जन-जीवनक बीच प्रक्षिप्त पुष्कल वैभव कें ओकरहि भाषा मे जगाएब छल। तदर्थ संस्कृतक महान विद्वान होइतहु ओ लोक-भाषा मे ग्रन्थ लिखलैन्ह जे मैथिलीक अमूल्य निधि थिक।

चौदहम शताब्दीक उमापति उपाध्याय कृत मैथिलीक पारिजातहरण नाटक थिक। उमापति अपन आश्रयदाताक नाम हरिहरदेव लिखलैन्ह अछि जे अपना समयक एक प्रतापी राजा छलाह। डा० ग्रियर्सन हरिहरदेव के मिथिलाक राजा हरसिंहदेव (१३०५-१३२४ ई०) मानैत छथि। हरिसिंहदेव कें जाहि मुसलमान शासक सँ युद्ध भेल छलैन्ह ओ गयासुद्दीन तुगलक छल। ओ जखन बंगाल (लखनौती) पर आक्रमण कएल तखनहि हुनक युद्ध हरिसिंह-देवक संग भेल। हरिसिंहदेवक पट्टमहिषी माहेश्वरी देवी छलीह जनिकर उल्लेख पारिजात हरण मे कतिपय स्थल पर आएल अछि।

पारिजातहरण नाटकक कथानक हरिवंशपुराणक १२४-१३५ अध्यायक आधार पर लिखल गेल अछि। पारिजातहरणक विषयवस्तु यद्यपि विष्णु पुराण एवं श्रीमद्‌भागवत सँ लेबाक प्रयास कएल गेल अछि किन्तु पुराणक एवं नाटकक कथानक मे विभिन्नता पाओल जाइछ। परिजातहरणक कथानक एवंक्रमक अछि—

"देवर्षि नारद पारिजात पुष्प जे इन्द्रक कानन मे उपजैतअछि, श्रीकृष्ण के समर्पण करैत छथि। श्रीकृष्ण ओहि दिव्य पुष्प केँ अपन प्रेयसी रुक्मिणी केँ दैत छथि। श्रीकृष्णक छोटकी रानी सत्यभामा केँ अपन रूप एवं लावण्य पर गर्व छलैन्ह ओ श्री कृष्णक एहि प्रकारक पक्षपात कएला सँ मानिनी भए रुसि रहलीह। श्रीकृष्ण द्वारा मान भंग कएला पर ओ सम्पूर्ण पारिजात बृक्षे केँ इन्द्रक उद्यान सँ लए अनबाक बचनवद्ध कएल।

अपन बचन पूर्त्तिक निमित्त श्रीकृष्ण इन्द्रक ओतए अनुनय तँ कएल किन्तु इन्द्र हुनक अनुनय केँ अस्वीकार कएल। अतएव इन्द्र एवं कृष्णक बीच युद्ध भेल तथा श्रीकृष्ण पारिजात वृक्ष केँ स्वर्गक कानन सँ हरण कए सम्पूर्ण पारिजात वृक्ष केँ सत्यभामाक आँगन मे रोपि देल। एहि अनन्तर नारद प्रकट भए कहैत छथि जे जँ किओ अपन अत्यन्त प्रिय पदार्थ केँ दान-स्वरूप प्रदान करत तँ ओकरा एहि वृक्षक छाह मे अमर फलक प्राप्ति होएतैक। तदर्थ सत्यभामा एवं सुभद्रा दुहू अपन-अपन पति श्रीकृष्ण एवं अर्जुन कए दान कए देलन्हि। अतः श्रीकृष्ण एवं अर्जुन दुहू नारदक शिष्य बनि जाइत छथि जनिका ओ बेचबाक हेतु प्रस्तुत भए जाइत छथि। सत्यभामा एवं सुभद्रा दुहू अपन-अपन पति केँ एक-एक गाय दए खरीदैत छथि।" एवंक्रमेँ नाटकक अन्त होइछ।

नारदक चातुर्य एवं दूरदर्शिता केँ प्रमाणित करैत पारिजातहरण एक एहेन नै सफल नाटक थिक जे अपन कलात्मक तथा मनोरंजनक दृष्टि सँ अद्वितीय सिद्ध होइछ। ई मनोविश्लेषण एवं मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर वहु-पत्नी सँ युक्त पुरुषक मनोवैज्ञानिक प्रतिनिधित्व करैछ। रुक्मिणीक श्रेष्ठता एवं सत्यभामाक-स्नेह-पाँक मध्य व्याप्त श्रीकृष्णक चरित्रक उदारताक बड़ सफल निदर्शन उमापति एहि नाटक मे प्रस्तुत कएलैन्ह अछि। प्रधान पत्नी रुक्मिणी तथा उपपत्नी सत्यभामा दुहूक मध्यक इर्ष्या एवं मान केँ बड़ सहज ढंक सँ प्रकट कएल गेल आछि।

पारिजातहरणक रचयिता उमापति किरतनिया नाटकक परम्पराक जनक छलाह[११]। पारिजातहरण नाटकक सफल लेखन एवं दृढ़ अंकनक आधार पर आशा कएल जाइछ जे उमापतिक रचल कोनो आरो ग्रन्थ छल होएत जकर सूचना एखन धरि नहि प्राप्त भेल अछि।

पारिजातहरण नाटक यद्यपि प्राकृत एवं संस्कृत मे लिखल गेल अछि किन्तु ग्रन्थक बीच-बीच मे उमापति जे मैथिलीक गीत योजित कएल अछि ताहि सँ रोचकताक संग सरसताक मधुवर्षण होइछ। वस्तुतः पारिजातहरण नाटक उपस्थित कए उमापति अपन काव्य प्रतिभाक चमत्कार देखओलैन्ह अछि।

पारिजातहरण नाटक मे जे गीत उमापति सजौलैन्ह अछि ओ लोक रुचि एवं हुनकर मनोभावनाक प्रति अदम्य निष्ठाक प्रतीक थिक। मालव, ललित, वसन्त, वैजन्ती आदि राग-रागिनी सँ एहि गीत केँ घनिष्ठ सम्बन्ध छैक।

पारिजातहरण सन छोट ग्रन्थ मे बीसक संख्या मे गीत यद्यपि किछु अस्वाभाविक एवं अत्यधिक प्रतीत होइछ किन्तु ग्रन्थ-पाठक उपरान्त बुझना जाइछ जे अभिनय केँ मनोरंजन बनेबाक निमित्तहि एतेक गीतक समावेश कएल गेल अछि।

सत्यभामाक प्रवेशक प्रसंग मे जे गीत आएल अछि ओहि मे अलंकारिक-ध्वनि पर्याप्त मात्रा मे पाओल जाइछ—

सतिभामा देवि देल परवेस।
स्वामि सोहाग सुहाओनि वेस॥
हरखित हृदय गरुअ अभिमान।
कृष्ण पिआरे परान समान॥
देखइत चान कलाक संदेह।
वसुधा बसु जनि विजुली रेह॥
मनिमय भूखन अंग अमूल।
कनक लता जनि फूलल फूल॥
सूमति उमापति भन परमान।
पट-महिषी देइ हिन्दुपतिजान॥

११ डा० जयकान्त मिश्र, हिस्ट्री आफ मैथिली लिटरेचर, पृ० २८९

देवी सत्यभामाक प्रवेश भए रहल अछि जे स्वामीक स्वभावानुसार वेष्ठित छथि। हृदय कैं ओ प्रसन्न करैत छथि तथा ओ गर्विणी सेहो छथि। कृष्णक प्राण सन प्रेम हुनका मे सन्निहित अछि। हुनक लावण्य कैं देखि चन्द्रकला वा भूतल पर विजुलीक ज्योत्सनाक भ्रम होइछ। हुनकर अंगक अमूल्य मणिमय आभूषण सँ प्रतीत होइछ जे स्वर्णलता मे सुमन उत्पन्न भेल अछि। विद्वान उमापति कहैत छथि जे ई महिषी हिन्दूपति कैं नितान्त प्रिय छथिन्ह।

उपर्युक्त गीति मे उपमा-उपमेय आदिक समन्वय अनुपम अछि। मैथिली साहित्यक माधुर्य एवं भावक सरसताक संग शृंगारक प्राबल्य एहि गीत मे पाओल जाइछ।

सत्यभामाक निम्न लिखित गीत पंचम राग मे गाओल जाइछ—

सखि हे रभस रसचलु फूलवारी।
तहाँ मिलत मोहि मदन मुरारी॥
कनक मुकुट महेँ मनि भल भासा।
मेरु-सिखर जनि दिन-मनि वासा॥
सुन्दर नयन वदन सानंदा।
उगल जुगल कुवलय लय चंदा॥
बन-माला उर उपर उदारा।
अंजन गिरि जनि सुरसरि धारा॥
पिअर वसन तन भूखन मनी।
जनि नव घन ऊगल दामिनी॥
जीवन धन मन सरवस देवा।
से लय करब हरि चरनक सेवा॥
सुमति उमापति भन परमाने।
जग माता देइ हिन्दुपति जाने॥

अर्थात् "हे सखि! सत्वर फूलवारी दिश चलू जतए अहाँ कैं कामदेव सन मुरारी भेटताह। हुनकर स्वर्ण-मुकुट पर मणि मेरु पर्वत पर सूर्यक वास सन शोभित होइछ। सुन्दर नयन एवं प्रसन्न मुखारविन्दु चन्द्रमाक ज्योत्सना मे प्रस्फुटित युगल कुमुदिनी सन भाषित होइछ। अंजनगिरि पर प्रवाहित होइत सुरसरिक धार सन वक्ष-स्थल पर बनमाला शोभित होइछ।

नवघन मध्य दामिनी सन नील बसन मध्य तन शोभित होइछ। ओ जीवन धन हमर सर्वस्व थिकाह जनिकर चरणक हम सेविका छी।"

उपर्युक्त गीत मे पति-प्रेमक उत्कट अभिलाषाक संग त्यागक भावना प्रेमक अन्यताक प्रतीक थिक।

पारिजातहरणक निम्नलिखित गीत मे रुक्मिणीक प्रेमक उत्कर्षताक दिग्दर्शन होइछ—

आज जनम फल भेला।
सभ पति तेजि हरि मोहि फूल देला॥
पूजल पुरुव हम गौरी।
आसा तनि वरि पूरलि मोरी॥
उपर रहल मोर माथे।
सोडस सहस वर नारिक साथे॥
सुमति उमापति भाने।
हे सहि देइ गति हिन्दूपति जाने॥

वस्तुतः बहुपत्नी सँ युक्त नायकक प्रेम एक नारी मे केन्द्रीभूत भेला सँ ओ अपना केँ गर्विणी बुझैत अछि। रुक्मिणीक स्थिति तेहने सन छल। सोलह सय नारी केँ छोड़ि पारिजात पुष्प पाबि रुक्मिणी अपना केँ धन्य तँ बुझैत छलीह किन्तु रुक्मिणीक हर्ष एवं आनन्द सत्यभामाक हृदय मे विषादक कार्य कएल। सत्यभामा यद्यपि कतहु अपन विषाद केँ रुक्मिणीक प्रति नहि प्रकट कएलीह किन्तु पारिजातक निमित्त ओ उन्मत छलीह—जकरा पाबि रुक्मिणी अपना केँ धन्य बुझलैन्ह। सत्यभामाक मनोव्यथाक दिग्दर्शन मालवरागक निम्न गीतसँ होइछ—

हरि सउं प्रेम आस कय लाओल
पाओल परिभव ठामे।
जलधर छाहरि तर हम सुतलहं
आतप भले परिनामे।
सखि हे मन जनु करिअ मलाने।
अपन करम फल हम उपभोगव।
तोहें किअ तेजह पराने॥ध्रुवम्॥

पुरुष पिरिति रिति हुनि जउँ बिसरल
तइओ न हुनकर दोसे।
कतन जतन धरि जउँ परिपालिअ
साप न मानय पोसे॥
कबहु नेह पुनु ननि परगासिअ
केवल फल अपमाने।
बेरि सहस दस अमिअ भिजाबिअ
कोमल न होअ पखाने॥
गुरू उमापति पहु देव दरसन
मान होएब अबसाने।
सकल नृपति पति हिन्दूपति जिउ
महारानि बिरमानै ॥२०॥

अर्थात् हरि सँ प्रेम करबाक फल प्रतिकूले प्राप्त भेल। जलधरक छाह मे सुतलहुँ मुदा ताहि सँ आतपे तँ भेटल। हे सखि! मोन के संतापित जनु करी। कर्मानुसार अपन फल केँ पाबि व्यथाक भागी बनि रहल छी। अहाँ एहि हेतु अपन प्राण किएक तेजब। पूर्वक प्रीति यद्यपि ओ बिसरि गेलाह तथापि एहि मे हुनकर कोनहु टा दोष नहि अछि। साप के कतबोक यत्न सँ पोसला पर पोस नहि मानैत अछि। आब ओ कथमपि प्रेमक प्रदर्शन नहि करताह। पाषाण सहस्त्रो बेर अमृतक रस मे भिजओला पर कोमल नहि होइत छैक।

पुनि निम्न पद मे ओ अपन मानसिक व्यथा केँ विभास राग मे कहैत छथि—

सहस पूर्ण ससि रहओ गगन बसि
निसि बासर देओ नन्दा॥
भरि बरिसओ बिस बहओ दहओ दिस
मलय समीरण मंदा॥
साजनि आब जिबन किअ काजे
पहु मोहि हिन करु
अपजस जग भरु
सहय न पारिअ लाजे ॥ध्रु०॥

कोकिल अलि-कुल कलरब आकुल
करओ दहओ दुहु काने।
सिसिर सुरभि जत देह दहओ तत
इनओ मदन पचबाने॥
सुकवि उमापति हरि होए परसन
मान होएत समधाने।
सकल नृपति पति हिंदूपति जिउ
महेसरि देई बिरमाने॥ २१॥

"हे सखि! अनेक चाँद सतत् अपन दीप्ति सँ, जलद अनवरत मधु वर्षन स तथा मलय समीर अपन मृदु गति सँ भने हमर अन्त:करणक संतापक हरण करथु किन्तु हमरा जीवन मे आब कोन सार अछि? एहि हीन जीवनक लाज असह्य प्रतीत होइछ। कोइली एवं भंमराक आकुल स्वर कान कें कटु, शिशिरक सुरभित पवन डाहक तथा कामदेवक पंचशर हमर तन कें बेधैत अछि। विद्वान उमापति कहैत छथि जे हरि प्रसन्न होएताह तथा अहाँक मानक अन्त होएत। समस्त राजाक राजा हिन्दूपति एवं महेश्वरी देवी दीर्घ जीवन कें प्राप्त करथु।"

एवंक्रमें सुललित भाषा, सरस साहित्य एवं सुकोमल भाव सँ संयुक्त ग्रन्थक अन्त ललितराग मे समवेत गीतक रूप मे कएल गेल अछि—

जलधर समय करथु जल दाने।
भरलि रहथु धरनी धन धाने॥
धरम प्रजा परिपालथु राजा।
चारु बरस करथु निअ काजा॥
बाभन बेद खेद जनु पावे।
साधुक संग कुजन जनु आवे॥
पिसुन पाब जनु नृपतिक काने।
गुन बुझि भूप करिअ सनमाने॥
चिरे जिबथु हिन्दूपति देओ।
गुन कीरति गाबहि सब केओ॥ ४२॥

उपर्युक्त गीत मे उमापति कालीन मिथिलाक समाजिक जीवनक संकेत प्राप्त होइछ। वर्णाश्रमक भेद-भाव, ब्राह्मणक वेदाचार, साधुक प्रति दुर्जनक

प्रतिकूल व्यवहार, राजा क पाछू चूगलखोरी आदिक प्रयोग ओहि युगक प्रचलित समाजक मनोवृत्तिक दिग्दर्शन करबैत अछि।

वस्तुतः उमापति लोकक प्रतिनिधिक रूप मे लोकभाषा के ध्यान मे राखि लोक-रंगमंचक आधार पर लोकक मनोरञ्जनार्थ पारिजातहरणक रचना कएलैन्ह।

मैथिलीक पद-रचयिता मे गणपति ठाकुरक नाम सेहो पाओल जाइछ। गणपति महाकवि विद्यापतिक पिता छलाह। ओ मिथिलाक राजा गणेश्वरक सभापंडित छलाह। हुनक रचल संस्कृतक 'कृत्य-चिन्तामणि' उपलब्ध अछि। निम्न पद गणेश्वरक रचल मानल जाइछ—

मधुकर विमल पर रावे।
जानिकर मधुर मधुर रस पावे॥
पवन परस कर दल तल दूरे।
जनि धरि कोमल अधर अधारे॥
रमण जगत कत फूले।
एहन रस रभस नहि भेट धूले॥
सरस सुधारस बस रस मूले।
रसल बसल मधुपति करथि कलोले॥
सुन पति गनपति कवि भाने।
रसल बसल जन पुनु धरथि धेआने॥[१२]

पदरचनाक परिपाटी मिथिला मे सतत अक्षुण रहल। एहिक्रम मे मिथिलाक ओइनवार वंशीय राजा कीर्त्तिसिंहक सभा पण्डित दामोदर मिश्रहुक नाम लेल जाइछ। पण्डित दामोदर मिश्र "वाणीभूषण" नामक एक छन्द ग्रन्थक रचयिता थिकाह। हुनक रचल मैथिलीक पद निम्न रूपक अछि—

रति मुखि समुख न करु अतिमान।
हसि कए दए मधुर मधुदान॥
आरति न करह रतिसुखबाध।
एहि अवसर न गुनिअ अपराध॥
हठ न उचित अति अलपहुँ दोस।
सगरिओ रइनि गमओलह रोस॥

---

१२ शिवपूजन सहाय, हिन्दी साहित्य और बिहार, पृ० ३६.

गुनमति भए न करिअ अज्ञान ।
अरुण उगल आव होएत विहान ॥
सुनु सुवदनि दामोदर भान ।
एकर समादर होएत निदान ॥[13]

उपर्युक्त पद शृंगारीक भाव सँ ओत-प्रोत तँ अछिए संगहि एहि मे नायक नायिकाक मान प्रसंगक बड़ मनोरञ्जक वर्णन कएल गेल अछि ।

विद्यापतिक पूर्वक मैथिलीक रचयिता मे अमृतकरक नाम सेहो अबैत अछि । अमृतकर वा अमिअकर यद्यपि विद्यापतिक समकालीन छलाह तथापि हम हुनकर नाम विद्यापतिक पूर्वक रचयिता मे एहि हेतु राखल अछि जे ओहि समय तक हुनक गणना प्रौढ़ व्यक्तिक रूप मे मानल जाएत छल । सम्भवतः अमृतकर विद्यापति सँ वयस मे पैघ छलाह तथा हुनकर सम्बन्ध यद्यपि अनुश्रुति मे राजा शिवसिंहक प्रधानमंत्रीक रूप मे अछि किन्तु हुनक सम्बन्ध शिवसिंहक पूर्वक मिथिलाक राजाक संग प्रायः सेहो छलैन्ह । फलतः विद्यापति हुनकर प्रसंग मे एवंक्रमेँ उल्लेख करैत छथि[14]—

नीति निपुण गुण नाह, अंक मे आगर ।
कोष-काव्य-व्याकरण, अधिक अधिकारक सागर ॥
सबकर कर सम्मान सबहु सो नेह बढ़ाबिअ ।
विप्रदीन अतिदुखी सबहुँ का विपत्ति छोड़ाबिअ ॥
कायस्थ माँह सुरसिद्ध भउ, चन्द्र तुलाइब शशिधर ।
'कविकंठहार' कल उच्चरइ, अमिअ बरसइ अभिअकर ॥

अमृतकरक पिताक नाम प्रीतिकर उपनाम चन्द्रकर छलैन्ह । हुनकर पितामह सूर्यकर क्षत्रियकुल भूषण हरिसिंह देवक मंत्री छलथिन्ह । हुनक पूर्वज श्रीधर दास सेहो महाराज नान्यदेवक मंत्री छलाह । अमृतकर कायस्थक बलाइन वंश मे उत्पन्न महाराज शिवसिंहक प्रधान मंत्री छलाह । मिथिलाक अनुश्रुति मध्य (जेना मधुश्रावणीक कथा एवं आन-आन अनेक कथा) चन्द्रकर एवं सूर्यकरक चर्चा पाओल जाइछ जाहि मे मिथिलाक इतिहास प्रक्षिप्त अछि । की मैथिल इतिहासकार एवं लोकगीतक संग्रह कर्त्ता

१३ बदरीनाथ झा, मैथिली गीत रत्नावली, पृ० ३

१४ हरिनन्दन ठाकुर, महाकवि विद्यापति (प्रथम सं०), पृ० १२

एहि दिश ध्यान दए अमृतकर, चन्द्रकर एवं सूर्यकर सन मैथिल विभूति एवं मिथिलाक ओहि युगक इतिहास केँ अनावरन करताह ?

अमृत करक मैथिली मे रचित एक पद 'रागतरंगिणी' तथा दुइ गोट पद विद्यापति-पदावलीक नेपाली-पोथी तथा रामभद्रपुर-पोथी मे पाओल जाइछ—

(१)

दह दिस भमि भमि लोचन आव ।
तेसरि दोसरि कतहु न पाव ॥ १ ॥
लगहि अछलि धनि विहि हरि लेल ।
ललित लता सागरिका भेलि ॥ २ ॥
हरि-हरि विरहे छुइल बछराज ।
वदन मलान कओन करु आज ॥ ३ ॥
चान्दन शीतल तोहरि काए ।
तखने न भेलि ए हृदय मोहि लाए ॥ ४ ॥
ते अधिकाइलि मानस-आधि ।
धक धक कर मदनानल धाधि ॥ ५ ॥
बान्द गरसिल्ले आन्त न दिशइ ।
सएल बिएक रूअ पडिहारइ ॥
साब् गरासिउ आध राती ।
न ताहि इन्दी विसअ बिआती ॥
कइसो आपु व गहणा भइल्ला ।
सम गरासें अथवण गइल्ला ॥ ध्रु० ॥

(२)

सुरत समापि सुतल वरनागर पानि पयोधर आपी ।
कनकसम्भु जनि पूजि पुजारें धएल सरोरुहें झापी ।
सखी हे मालति केलि विलासे ।

मालति रनिअतिताञि अगोरलि पुनुरतिरङ्गक आसे
वदन मेराए धएलन्हि मुखमण्डलँ कमले मिलल जनि चन्दा
भमर चकोर दुअओ अलसाएल पीबि अमिञा मकरन्दा

भनइ अमिकाकर सुनु मधुरापति राधाचरित अपारे॥
राजा सिवसिंह रूपनराएन लखिमा देइ कण्ठहारे।

एहि गीतक भाव एवं भाषा सँ प्रतीत होइछ जे अमृतकरक रचल कोनो ने कोनो ग्रन्थ अवश्य होएत जकर अनुसंधान आवश्यक अछि।

उपर्युक्त विवेचना सँ ज्ञातव्य थिक जे चौदहम शताब्दी मे जखन आन-आन क्षेत्रीय भाषा जेना बंगला, भोजपुरी, अवधी, आदिक कोनो सहज स्वरूपोटा नहि बनल छल तखनहि मैथिलीक खेलन कवि वा अभिनव जयदेव अपन गीत माधुरी सँ जाहि रूपेँ जनवाणी केँ विमुग्ध कएल ओ साहित्य कलाक अद्भुत कौशलक प्रतीक भेल। जाहि प्रकारेँ जनवाणीक सजल वेदनाक अभिव्यक्ति लोकगीतकार उमापति एवं विद्यापतिक मृदुल कण्ठ सँ भेल ओहि प्रकारेँ लोकजीवनक छाह ओकर वेदनाक स्पष्टीकरण तथा ओकर सफल अभिव्यक्तिक उद्घाटन लोकरंगमंच एवं लोक-नाट्यक परम्परा सँ भेल जे •लोकजीवनक शिल्पीक कलात्मक प्रवृत्तिक निमित्त लोक-जीवनक अभिव्यक्ति केँ एक माध्यम देल। फलतः विद्यापतिक पश्चात् तँ एहि दिश एक तेहेन ने मोर लेलक जे पाछाँ एहि कवि एवं कविक कृति केँ समग्र क्षेत्रीय भाषा अपनैबाक दुःप्रयास कएल।

मैथिली वस्तुतः मिथिलाक जन-भाषा थिक जे मनुष्यक जन्मक संगहि प्रादुर्भुत् होइछ। मैथिली मिथिलाक जन-जीवन सँ संबद्ध रहि अपन विकासक पथ मे सर्वथा अग्रसर भए विद्यापतिक युग मे आबि परम उन्नतिक अवस्था केँ प्राप्त कएल।

उर्वी शस्येन गुर्वी बिलसतु सुखिनः सन्तु सर्वे च लोकाः।
क्षोणीपालः समन्तात्प्रवितरतु गुणं भावाखत्वा वसूनि॥
साधूनां संनिवासः सह पिशुनजनेरेकलोकेऽपि मा भूद्।
आशूद्रान्तं कवीनां भ्रमतु भगवती भारती भङ्गिभेदैः॥ ४३॥

—पारिजातहरण

परिशिष्ट

विनयश्रीक गीत

(१)

निमूल तरुवर डाल न पाती।
निभर फुल्लिल्ल पेखु बिआती ।। ध्रु० ।।
भणइ विनयश्री नोखौ तरुअर।
फुल्लए करुणा फलइ अणुत्तर।
करुणामोदें सएलवि तोसए।
फल संपतिएँ से भव नाशए ।।
से चिन्तामणि जे जइ स बासए।
से फल मेलए नहिए साँसए ।।
वर गुरुभत्तिएँ चित्त पबोही।
तहि फल लेहु अणुत्तरबोही ।।
गेल्लिअहु गिरिसिहर रि जात्तें।
तहिं झंपाविल्लि कलिके अन्ते ।।ध्रु०।
हल कि करमि सहिएँ एकेल्लि।
बिसरे राउ लेल्लइ लिसु पेल्ली।
तहिं झंपइ ट्ठेल्लि हेरुअ मेले।
बिसअ बिसइल्लि मा छाडिय हेले।
भणइ विणयश्री वरगुरु बएणे।
नाह न मेल्लप रे गमणे ।।

(२)

राहुअें चान्दा गरसिअ जाबें।
गरुअ संबेअण हल सहि ताबें ।।ध्रु०।।
भणइ विनयश्री नोख बिनाणा।
रवि साँजोएँ बान्ह गहणा।

बान्द गरसिल्ले आन्न न दिशइ ।
सएल बिएक रूअ पडिहारइ ।।
साब गरासिउ आध राती ।
न तहि इन्दी बिसअ बिआती ।।
कइसो आपु व गहणा भइल्ला ।
सम गरासैं अथवण गइल्ला ।।

(३)

गिरिवर सिहरेहि लाला लाम्बए ।
तहिं सो केवटिणि रिभर जागए ।।
अरे भल्लि केवटिणि जाण विचारअ ।
माआ माच्छ निरन्तरें मारअ ।।
दूवतिंश नाला साब्ब निरुन्धी ।
मारअ माच्छा निसर बान्दी ।।
माआ माच्छा आगे म विभाक्खी ।
आछइ चउमुह जाला राक्खी ।।
अइसि केवटिणि सो पडिहा ।

(४ अ)

खाने पाने जो कोइ राता ।
सरुअर हिअ बट भमइ उमता ।।ध्रु०।।
भन्तिएँ रे भन्तिएँ जग आइसे बहिउ ।
आपणु रचि रचि बानुण लाइउ ।।
चउकोडि रहिआए सुखसाला ।
तथत रहिअ मूढ़ भमन्ति ते काला ।।
मान छडिया सद्‌गुरु से कह ।
जे सो तथता सरअें पावह ।।
चउक •खलभलि आएल वित्रहिउ ।
सद्‌गुरु पुछिया आपाण न चाहिउ ।।

जिम अन्धारें रज सो माया ।
तिम सो मुणहु रे सएलवि आपा ।।ध्रु०।।

परम विरम माझें जो कोइ लागा।
आहवा णिअ जिम बोहिते भागा॥
जिम नउ भासइ बिबिर पसि उदधि।
तिम लोअ भासइ तथता रिद्धि॥
चउ खशमु हलहु रे ठाए एक वि ठाणा।
तावें जइ पावहु सिरि माहाजाणा॥
सरुअ भणइ हंसु मुअइसे नाइ।
परिहअ वणएँ हत्थुअ हमें थाक।

(४ ब)

किसे . . . भेअ भावाभाव।
पडिवख रहिआ सहज सहाव॥
चउ धाउ पञ्च कांध छये बिसया।
सअेल वि अमणेसि करि रे साया॥ध्रुव॥
गाह्य गाहक रहिअ तिहुण विलसइ।
सहज मुणेन्त पडिवख नासइ॥
शुनासुन भणिव न जाइ।
सहज सहावे सो पडिहाइ॥
गाह्य गाहक जइ अेक न ठाणा।
सावग कइसें जिणधर राणा॥
अवधू भणइ 'अइस माण्डल चाका।
ए जग सएल विसहि जनि विता॥
तिहु ण फारिउं एवउ चाकें।
पडिवख कम्म मुणि सहज रे जाकें॥ध्रु०॥
अइसि चंडाली तिहुणे दिट्ठ।
अहनिसि करुणा पीवइ वइट्ठ॥
ज्ञान समरोग निवाणें भतिनि।
सएल सहारे सहज भतिनि॥
जाव सो गएणे दाढा।
पडिवखधाम तवे सएल वि भागा॥
अइसि चण्डालिहि जइ हिअहि पसइ।
पखापख सए हेल बिनासइ॥

सरुअ भणइ दे बहु बिह भाङ्गे ।
सद्गुरु पुच्छि जाणहु चांगे ॥

(५)

खमणा खमिणअें बाला बाली ।
खमणएँ खमण्डल भागअ हाली ॥
बिरही खमणी अइसु पमाणें ।
खुधी पइसइ घोर मसाणें ॥
भणइ विनयश्री खमणि दिठी ।
खमणा च्छाडि न खणवि संतुट्ठी ॥
सिहर तलाम्बीचउ मुह घाटा ।
तहिं नइ बोधिए पडिल पाटा ॥
भणए विनयश्री धोबिणि सेठी ।
सरुअ पक्खाले सम्भोअें पइठी ॥ ॥ध्रु०॥

(६)

भैरम्भेहें पीउ सोहइ चौरस ।
पाञ्चै बान्ने पखालइ समरस ॥
धोअे असेसवि नाइल मूल ।
थूल सरुअ निखारअ तुल्य ॥
गाल्लीअ च्छाडी अस मुह बोलअ
जान्तहि डीअ बिसेसें गालअ ॥
उल्हसी घोर मसाण वि साजअ ।
अणहा घणहण कीबिउ बाजअ ॥
अे भल्ल विनयश्री साम्भोअे नाचअ ।
जिण गुण सुन्दरि काण्ठें न मूचअ ।
धीरवीरसरि गोन्दल बाटअ ।
साम्बइ नि भर चाक पएटअ ॥
निहर रमहु सो गुञ्ज न तुटअ ।
तहिं बल खाजइ नि राँगुअ रजिअ ।
सुद्ध कलिंजर दुदुर बजिअ ॥

(७)

आलि कालि जे करिआ दवडी
माथें गोआलिणि बेनिअ जोडी ॥ध्रु०॥
दुट्ठ गोआलिणि देइ न बिकए।
भणइ विनयश्री आपणे भखए॥
ए घोल पानी करिअ आसार।
लेइ सिणेहा एकाकार॥
आपु बस हटाणें गोआलिणि डोलअ।
बिबरिअ करणे णवणी तोलअ॥
आन से मान्थअ भेद् दे नाली।
अहन्निशि ससहर बहुअे खणाली॥

(८)

नअरबाहरें ताम्बोलिणी पाडा।
चउपह माझे ताव पसारा ॥ध्रु०॥
बइठी पसारए देइ न बिकए।
भणइ विन (य) श्री आपणे भाखअ॥
सहिअे ताम्बोली ताम्बोल बिलइया।
घरवि पोशइ पगरा दइआ॥
सएँ विकए सएँ आपणे कीणअ।
सएँ कु आपान सो सँए समाणअ॥
बिशअे र माँझे मे पदराणा।
सदगुरु बोहे तासाम्भेएँ जाणा।

(९)

मेहलि चण्डाली घरवि बाम्हण।
जग बिटालन्ती ते दुइ लाम्बल ॥ध्रु०॥
हल सहि का मञ्चिअचा भुअ दिट्ठा।
बाह्मण मणुस चण्डालिएँ तुट्ठा।
अइसिनि राजक माणल दिशइ।
माङ्ग चण्डाली बाह्मणें पइसइ॥
देखु चण्डाली र बाह्मण जार।
पञ्चि बान नेल्ल एकाकर॥

ते दुइ नासन्ति सम साँजोअे।
भणइ विनयश्री सदगुरु बोहें॥

(१०)

हे हेरु न जाणमिलाज्ज।
शुनने अच्छिल्लाएँ किम काज्ज॥ध्रु०॥
उठ राउल माण्डल राज।
ताडि्च विणु हेर न बिज्झए काज्ज॥
पञ्चअ डाकिनी जे पञ्चअ संचोएँ।
अलल आहें हेरुअ बोहए॥
बिश डाकिणि जे बिशएँ राती।
हेरुअ बोहए ले बिआती॥
बेन्नि डाकिणि मीले करन्ती सो॥
ठार उठहु भव हीहाकार॥
भणइ विनयश्री हेरुअ लाङ्का।
धणु पर हाथ कबाल खडङ्का॥

(११)

अङ्ना बेरी खाणि णिवाणी।
होल बाहइ उज्झाइ पाणी॥ध्रु०॥
अणहा घणहण बाजइ तूर।
पइसइ खाण्ठणी पर च कपूर॥
भजर भेलो सहि सासें बडिल्ली।
समुद माझे खेलइ नावा हेल्ली॥
काच्छि कण्हिला करि आउ घाडा।
जिणि आपइ टठोलि चउमुह डाढ़ा॥
भणइ विनयश्री खाण्डिणि लइआ।
सुह भुञ्जहु निराल होइआ॥

(१२)

हल सहि घोर मंसाण विहारी।
तहिं पइसि नाचए नैरामणि दारी॥ध्रु०॥
भणए विनयश्री पेख रे पेखुण।
लाख ख लाख कनो ख बिलासण॥

नावए दारी करण बिसेसे ।
इन्दी पाञ्च भूअ सम तोसेँ ॥
मुह बस लोली ना लेन्ते सोहअ ।
बिसअ बिसइण्णा समर सबोहअे ॥
सोन्ने रूपे बिभूसिअ नारी ।
नाचए बिहारेँ से कुल दारी ॥
चन्दा आदित जे समसरस जोए

(१३)

हउं बाह्मण गिरिकुंज निवासी ।
दुठ चण्डाला एलइल्लाहु पइसी ॥ध्रु०॥
भणइ विनयश्री एकली काले ।
समरस भइल्लाहु बाह्मचण्डाले ॥
बहिलि समिरणें कुंजअ पइसअ ।
से आच्छे पिणे भी कुल नासअ ॥
सहल सहिआ पुव पेखु इन्दि आली
हउं बाह्मण से मेहलि चाण्डाली ॥
से आणुराती चण्डाली रे देख ।
वेनि संजोअे असेस वि एक ॥

(१४)

एकै ता मै नावग दिल्ला ।
पाँच जण बाहिवा कएल्ला ॥ध्रु०॥
भणइ विनयश्री हमु कण्णाहर ।
जिण आ जाए थम चउमुह पार ।
ललना रसना वे न पाताका
णेहा घाल्ल लाइल चउचाका ॥
खर सो आणहिं नरु बढिअ ।
अलि-कलि दुइ गुणे कढिअ ॥
हमु कण्डा हरण भिडि नलाधम ।
पाञ्चन बाहि तिण आवा हम ॥

सोन रुपे हं भरलि नाव ।
कुञ्ज तबइ णिअ रूप म लाव ॥

(१५)

सर सांजोइअ बिन्धहु लाख ।
तुट उपाए पाखापाख ॥ध्रु०॥
भणइ विनयश्री पखबि लाखण ।
बेह नबेइ क समसुह लाखण ॥
नीचण विनाणी लाख तबे जाए ।
गरुअ संबेअण आन कि सिजझए ॥
अइस बिनाणी सो पडिहासअ
। हल ख बिन्धी अप्प सबि तोसअ ।





लेखकक अन्य कृत ग्रंथ

१ महाकवि विद्यापति नाटक (मैथिली), मूल्य २) टाका मात्र।
२. शास्त्रार्थ नाटक (मैथिली), मूल्य १) टाका ५० पैसा मात्र।
३. कन्दर्पीघाट नाटक (मैथिली), मूल्य १) टाका मात्र।
४. एकादशी (मैथिली), मूल्य एक टाका पचास पैसा मात्र।
५. विद्याधर-कथा (मैथिली), मूल्य २) टाका मात्र।
६. उर्वशी (मैथिली), मूल्य ३) टाका।
७. धर्म व्याध-कथा (मैथिली), मूल्य १ टाका।
८. कालचक्र की उत्पत्ति एवं उत्पन्न क्रमों की संक्षिप्त व्याख्या (हिन्दी), मूल्य ६) रुपये।

पुस्तक प्राप्ति स्थान

ग्रंथालय
टावर चोक, दरभंगा

एवं

शिक्षा सदन
सुपौल, सहरसा

श्री अमरनाथ झा
द्वारा—बिहार रिसर्च सोसाइटी, पटना-१